

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182128

UNIVERSAL
LIBRARY

राष्ट्रभाषा गद्य-संग्रह

• • •

भाग : २

• • •



राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,

वर्धा

• • •

प्रकाशक

मोहनलाल भट्ट

मन्त्री,

राष्ट्रभाषा प्रचार समिति

हिन्दीनगर, वर्धा



सर्वाधिकार सुरक्षित

द्वितीय संस्करण—१०,०००

मार्च, १९५९

मूल्य—रु. १ ७५ नअे पैसे

(१७५ नअे पैसे)



मुद्रक

मोहनलाल भट्ट

राष्ट्रभाषा प्रेस

हिन्दीनगर, वर्धा



प्रकाशककी ओरसे

समितिके पाठक्रममें जो पुस्तकें गत कभी वर्षोंसे चली आ रही थीं उनमें समयकी आवश्यकताकी ध्यानमें रखते हुए कभी स्थानोंपर परिवर्तन करनेकी आवश्यकता प्रतीत हुई। अतः समितिने अपनी सभी पाठ्य पुस्तकोंकी फिरसे जाँच एवं परीक्षण करके उनमें यथास्थान सामयिक परिवर्तन करनेका निश्चय किया। इस कार्यको सम्पन्न करनेके लिये अनेक उपसमितिका निर्माण किया गया, जिसके सर्वश्री जेठालालजी जोशी, हृषीकेश शर्मा, प्रो. रणधीर अण्णाध्याय, प्रो. जयेन्द्र त्रिवेदी, पं. मु. डांगरे और रामेश्वर दयाल दुबे सदस्य थे। अक्त उपसमितिने सभी पाठ्य पुस्तकोंमें यथास्थान परिवर्तन किये। जो पुरानी सामग्री अपयोगी दिखायी दी उसे रखा गया और कुछ नयी भी चुनी गयी।

अक्त उपसमितिके श्रमके फलस्वरूप पुस्तकको इस नये रूपमें विद्यार्थियोंके सामने रखते हुए हमें अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है। पुस्तकको अधिक-से-अधिक रोचक एवं अपयोगी बनानेका प्रयत्न किया गया है।

समिति उपसमितिके सदस्योंके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करती है। स्वतन्त्र रूपसे अध्ययन करनेवाले विद्यार्थियोंके लिये अध्ययनमें सहायक होने-वाले कठिन शब्दोंके अर्थ, कठिन अंशोंके अर्थ, प्रयुक्त मुहावरोंके अर्थ आदि सामग्री भी संकलित कर दी गयी है।

आशा है अपने इस नये रूपमें पुस्तक पाठकोंको अवश्य पसन्द आयेगी एवं अपयोगी सिद्ध होगी।

प्रस्तुत संस्करण पुस्तकका दूसरा संस्करण है।

मन्त्री,
राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्षा

विषय-सूची

निबन्ध	लेखक	पृष्ठ
१. मेरे संस्मरण	डा. राजेन्द्रप्रसाद	१
२. मेहमान	• • श्री सैयद शौकत थानवी	११
३. जीवन और शिक्षण	आचार्य विनोबा भावे	२५
४. कुत्ते	श्री अेम. अेम. बुखारी	३७
५. जीनेकी कला	मुश्री महादेवी वर्मा	४७
६. धरती	डा. वासुदेवशरण अग्रवाल	६१
७. घुमक्कड़ी	श्री राहुल सांकृत्यायन	७३
८. बहमकी बात	श्री सियारामशरण गुप्त	८५
९. गेहूँ बनाम गुलाब	श्री रामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी	९५
१०. मेरा बचपन	स्व. डा. रवीन्द्रनाथ ठाकुर	१०७
११. गोसाजीजीकी कला	स्व. डा. श्यामसुन्दरदाम	१२१
१२. मनुष्य ही साहित्यका लक्ष्य है शब्दार्थ	डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी	१३५ १४७

हिन्दी गद्यका अुद्गम और विकास

वैसे तो साहित्यमे किसी भी कालका ठीक-ठीक विभाजन करना कठिन है फिर भी हिन्दी-साहित्यके गद्य-कालका आरम्भ १९ वी शताब्दीके अुम समयमे माना जा सकता है जब अुमके गद्य-क्षेत्रमे मुन्शी सदासुखलाल, अिन्शाअल्लाखाँ, लल्लूलालजी तथा मदल मिश्रने पदार्पण किया। यद्यपि असमे पहले भी हमे ब्रजभाषा और राजस्थानीमे गद्यका साहित्य मिल जाता है और चौदहवी शताब्दीमे ही खुसरौने खड़ी बोलीमे कुछ पद्य और पहेलियाँ बनायी थी। पर यह निश्चित रूपसे कहा जा सकता है कि अुम समय गद्य साहित्यका अुतना प्रभावशाली माध्यम कभी नही रहा जितना आज है। ब्रजभाषा गद्यके बहुत अुत्तम नमूने वैष्णव सम्प्रदायकी “चौरासी वैष्णवनकी वार्ता” और “दो सौ बावन वैष्णवनकी वार्ता” मे देखनेको मिल सकते हैं। ब्रज-भाषाकी भाँति ही राजस्थानीमे ख्याल, बात और वार्ताओंका थोड़ा-बहुत साहित्य बनता रहा। अिनके अतिरिक्त कुछ सनदों और पत्रोमे गद्यका नमूना देखनेको मिलता है।

१९ वी शताब्दीके प्रारम्भिक वर्षोमे वास्तविक रूपमे हिन्दी-गद्यका सूत्रपात हुआ। तब तक अँग्रेजोने भारतके कअी महत्वपूर्ण स्थानोपर अधि-कार कर लिया था और यहाँका कार्य ठीक ढंगमे चलानेके लिये अुन्हे देशकी भाषाँ सीखनेकी आवश्यकताहुअी। अतः अुन्होंने गद्यकी कुछ पुस्तकें लिखाअी। अुनके प्रयत्नोमे कलकत्तेमे फोर्ट विलियम कालेजकी स्थापना हुअी और अँग्रेज अफसरोंने गम्भीरतापूर्वक अिम देशकी भाषाओंके अध्ययनका प्रयत्न किया।

फोर्ट विलियम कालेजके आश्रयमे लल्लूलालजीने खड़ी बोलीके गद्यमे “प्रेम-मागर” और मदल मिश्रने “नासिकेतोपाख्यान” लिखा। फोर्ट विलियम कालेजकी स्थापनासे पहले मुन्शी अिन्शाअल्लाखाँने “रानी केतकीकीक हानी”

(आ)

के नामसे एक ऐसी कहानी लिखी थी जिसमें अरबी-फारसीके शब्दोंको हटाकर शुद्ध हिन्दी लिखनेका प्रयास था। उनका अद्देश्य ऐसी भाषा लिखनेका था जिसमें “हिन्दी छुट और किसी भाषाकी पुट” न हो। मुन्शी सदासुखने “सुखसागर” के अतिरिक्त “विष्णु पुराण” से कभी अपदेशात्मक प्रसंग लेकर एक पुस्तक और लिखी, जो अधूरी ही मिलती है। अनकी भाषामें सहज प्रवाह, स्वाभाविकता और स्पष्टता है। ऊपर कहे गये चारों लेखकोंमें मुन्शी सदासुखकी भाषा अधिक महत्वकी है। उन्होंने लेखनी भी अन्य तीनोंसे पहले आठी थी। अतः अन्हीको आधुनिक गद्यका प्रधान प्रतिष्ठापक मानना चाहिये।

हिन्दी गद्यकी प्रतिष्ठाका सबसे अधिक लाभ आसी धर्म-प्रचारकोंने आठाया। अन्हीने बाइबिलका सुबोध और शुद्ध हिन्दीमें अनुवाद किया। अपनी धर्म-पुस्तकके अनुवादकी भाषा अन्हीने सदासुख और लल्लूलालकी भाषाके नमूनेपर संस्कृत-प्रधान ही रखी। असके अतिरिक्त भूगोल-अतिहास तथा शिक्षा सम्बन्धी बहुत-सी पुस्तकें भी अन्हीने प्रकाशित कराठी।

आसीअियोंके अम प्रचार-कार्यका प्रभाव हिन्दुओंकी जनसख्यापर पड़ रहा था; अतः हिन्दुओंके शिक्षित वर्गके लोग स्वधर्मकी रक्षाके लिये आकुल दिखाठी पड़ने लगी। इसी बीच बनारसके राजा शिवप्रसाद ‘सितारे हिन्द’ तथा आगराके राजा लक्ष्मणसिंहने गद्य-क्षेत्रमें प्रवेश किया। दोनों ही हिन्दीके पर्याप्त प्रेमी थे किन्तु दोनोंकी भाषा सम्बन्धी विचार-प्रणालीमें काफी अन्तर था। राजा शिवप्रसाद देवनागरीके यद्यपि पक्षपाती थे फिर भी वे भाषा विषयक सरकारी नीतिका खुल्लमखुल्ला विरोध नहीं कर सकते थे। अतः भाषामें अर्द्ध शब्द अधिक पसन्द करते थे। स्थान-स्थानपर अन्की वाक्य-रचना भी फारसी व्याकरणके अनुसार होती थी। अघर राजा लक्ष्मणसिंह शुद्ध संस्कृतनिष्ठ भाषाका पक्ष लेकर आये। अन्का मत था “हिन्दी और अर्द्ध दो बोलियाँ न्यारी-न्यारी हैं।” अन्का यह भी मत था—

(अ)

“कुछ आवश्यक नहीं है कि अरबी-फारसीके शब्दोंके बिना हिन्दी न बोली जाये और न हम उस भाषाको हिन्दी कहते हैं जिसमें अरबी-फारसीके शब्द भरे हैं।”

राजा साहबने कालिदासके कभी ग्रन्थोंका अनुवाद किया, जिनमें मेघदूत और शाकुन्तलके अनुवाद बहुत लोकप्रिय हुए। इस कालमें भाषा बहुत अधिक समृद्ध हुई और उसे प्रौढ़ता प्राप्त हुई। बाबू नवीनचन्द्र राय, पंडित श्रद्धाराम फुलैरी आदि लोगोंने संस्कृत बहुला भाषाके उपयोग-पर जोर देते हुए उसे संस्कृत-प्रधान बनाया। स्वभावतः संस्कृत-प्रचुर भाषाकी ओर लोगोंका ध्यान विशेष रूपसे आकृष्ट हुआ।

राजा शिवप्रसाद ‘सितारे हिन्द’ तथा राजा लक्ष्मणसिंहका हिन्दी-अुर्दूका यह जो संघर्ष बढ़ रहा था उसे समाप्त करनेके लिये और स्वयं राजा लक्ष्मणसिंहने भाषाके भावी रूपका जो आभास दिया था उसे आगे बढ़ानेके लिये ऐसे शक्ति-सम्पन्न लेखकोंकी आवश्यकता थी जो अपनी प्रतिभाके बलसे उसे सुव्यवस्थित और परिमार्जित करते।

अिसी परिस्थितिमें भारतेन्दु हरिचन्द्रका सन १८५० में अुदय हुआ। तत्कालीन परिस्थितिका विचारपूर्वक अध्ययन करते हुए भारतेन्दुने मध्यम मार्गका अवलम्बन अुचित माना। प्राचीन और नवीनका अुन्होंने मधुर सम्मेलन किया। यह युग नवीन और पुरातनके संघर्षका काल था। न अे विचार तेजीसे अपने लिये मार्ग बना रहे थे। हिन्दी-साहित्यमें नव जागरणके चिन्ह दिखायी पड़ रहे थे।

भारतेन्दुने न तो अुर्दूके अत्यन्त प्रचलित अेव पंचे हुए शब्दोंको भाषा-मेंसे निकाल देना ही अुचित समझा और न उसे अेकदम विदेशी जामा पहना देना ही अुन्हें ठीक लगा। अुन्होंने बहुत स्वाभाविक और भाव-प्रकाशनमें सक्षम भाषाका प्रयोग किया। भाषाका निखरा हुआ, शिष्ट, सामान्य रूप भारतेन्दुकी कलाके साथ ही प्रकट हुआ। अिस दृष्टिसे अुन्हें हम आधुनिक

(ओ)

गद्यका प्रवर्तक कहते हैं। अन्तुके प्रेरणादायक व्यक्तित्वने हिन्दीमे सर्वतोमुखी अन्नतिका श्रीगणेश किया। अन्तुहोंने हिन्दी-साहित्यको अेक नअे मार्गपर ला खड़ा किया। बँगलाके ढंगपर भारतेन्दुने हिन्दीमें नाटक-साहित्यकी नीव डाली। भाषाकी अन्नतिको सारी अन्नतियोंका मूल मानते हुअे अन्तुहोंने कहा था—

निज भाषा अन्नति अहं, सब अन्नतिको मूल।

बिनु निज भाषा ज्ञानके, मिटे न हियको शूल ॥

भारतेन्दुने हिन्दीको जनभाषा बनाया और अुसकी शक्तिको जनताकी शक्ति। अस युगमे विविध विषयोंपर निबन्ध लिखे गअे और नाटकों तथा अुपन्यासोंकी रचना हुअी। अुनके समयमे लेखकों और कवियोंका अेक खासा मंडल तैयार हो गया था, जिसमे बालकृष्ण भट्ट, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन', प्रतापनारायण मिश्र, तोताराम, ठाकुर जगमोहनसिंह, श्रीनिवासदास, अम्बिकादत्त व्यास और राधाचरण गंगस्वामी मुख्य थे।

अिस कालकी भाषामे व्याकरणकी घोर अपेक्षा की गअी। भारतेन्दुने यद्यपि भाषाकी शैली निश्चित कर दी थी परन्तु अुसमें सौष्ठव अभीतक नहीं आ सका था। भाव-व्यंजनाकी नअी शैलियाँ अुस समय गद्य-क्षेत्रमें प्रयोगमें आअीं और अुसमें अेक शक्तिशाली रूप भी अवश्य दिखाअी पड़ा, पर भाषाका सम्यक परिमार्जन न हो सका।

भाषाके परिमार्जनका यह काम स्व. आचार्य महावीरप्रसाद द्विवेदीके हाथों सम्पन्न हुआ। नागरी प्रचारिणी सभाके प्रयाससे प्रयागके अिडियन प्रेससे 'सरस्वती' पत्रिकाका प्रकाशन आरम्भ हुआ और अुसके सम्पादनका भार आचार्यजीपर डाला गया। अस पत्रिकाके सम्पादन-कालमें द्विवेदीजीने लेखकों की भाषा सम्बन्धी त्रुटियों, निरंकुशताओं तथा व्याकरणकी सीमाओंको लाँघनेकी आलोचना करके हिन्दी-गद्यको व्यवस्थित बनानेका बहुत अच्छा प्रयत्न किया।

'सरस्वती' पत्रिकाने कहानी,, जीवन-चरित्र, निबन्ध, सूचनात्मक साहित्य, वैधानिक विवेचन सम्बन्धी और पुरास्तिवात्मक लेख, नाटक, गीति-नाट्य, व्यंग्य आदि विविध साहित्यांगोंकी पूर्तिमें भी महत्वपूर्ण भाग लिया।

(अ)

परिणामतः नाटक, निबन्ध, कहानी, उपन्यास, आलोचना तथा साहित्यके अन्य अंगों पर पुस्तकें प्राप्त होने लगी। कहनेका तात्पर्य यह है कि इस कालमें साहित्यके विविध रूपोंका विकास और भाषाका संस्कार हुआ। इस समय निबन्ध-लेखकोंकी भी संख्या बढ़ी और विषयोंका भी विस्तार हुआ। इस कालमें दर्शन, तर्कशास्त्र, शिक्षा, पुरातत्व, विज्ञान, आलोचना, मनोविज्ञान, चिकित्सा, अर्थशास्त्र, भाषा-विज्ञान आदि सभी विषयों पर सुन्दर निबन्ध लिखे गये। किसीने ठीक ही कहा है—“द्विवेदी-युग वास्तवमें माज-सवार और विकासका युग है।” साहित्यिक निबन्धोंकी परम्पराके साथ-साथ इस युगमें साहित्य-विवेचनकी ओर भी ध्यान गया। पहले-पहल द्विवेदीजीने विस्तृत आलोचनाका रास्ता निकाला; फिर आपकी ही प्रेरणामें माधव-प्रसाद मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, गोविन्दनारायण मिश्र, अध्यापक (सरदार) पूर्णसिंह, चन्द्रधर शर्मा ‘गुलेरी’ आदि लेखक साहित्य तथा श्यामसुन्दरदास, पद्मसिंह शर्मा विशेष रूपसे समालोचनाके क्षेत्रमें आये। श्यामसुन्दरदासजीने कठिन-से-कठिन विषयोंका भी सरल-से-सरल भाषामें समझानेका प्रयत्न किया है। साहित्यके लगभग सारे अंगोंको आपने आलोचनात्मक दृष्टिसे देखा है। भाषा विशुद्ध साहित्यिक और वाक्य छोटे पर सारगर्भित हैं।

द्विवेदी-युग भारतेन्दु और आधुनिक युगके बीचकी कड़ी है, तो आधुनिक युग गद्य-विकासका स्वर्णकाल। इस युगमें कहानी, उपन्यास, नाटक, और आलोचनाके चरम विकासके साथ-साथ निबन्धने भी अत्यन्त स्वस्थ, सबल और सम्पन्न आकार पाया। उपन्यास-सम्राट् मुन्शी प्रेमचन्दने द्विवेदी युगसे अलग खड़े होकर हिन्दी-गद्यमें चार चौद लगानेके प्रयत्न किये। प्रसादजीने अपनी कहानियों, नाटकों और उपन्यासोंद्वारा हिन्दीके मातृ-मन्दिरमें सबसे अधिक पुष्पांजलि चढ़ायी। उन्होंने हिन्दी-गद्यको शिष्ट, प्रांजल एवं संस्कृतनिष्ठ बनानेका प्रयत्न किया। प्रसादजी प्रधानतः कवि एवं दार्शनिक थे। अतः इसका प्रभाव उनके गद्यपर भी पड़ा। उन्होंने काव्यमय गद्यकी एक नवीन शैलीका सूत्रपात किया।

आचार्य रामचन्द्र शुक्लने समालोचनात्मक साहित्यकी मृष्टि की और उनकी कृतियोंसे बहुत प्रेरणा मिली। वे भारतीय साहित्य-शास्त्र और पाश्चात्य समीक्षा-विज्ञानसे समान रूपसे परिचित थे। वे बड़ी खोजपूर्ण और मार्मिक विवेचना करते थे। शुक्लजी केवल आलोचक, समीक्षक या निबन्धकार ही नहीं वरन अुच्च कोटिके शैली-निर्माता, विज्ञ अितिहास-लेखक, भावुक कवि, समर्थ अनुवादक, सफल अध्यापक और कुशल सम्पादक भी थे। आपने मनोवैज्ञानिक निबन्ध भी लिखे हैं।

गुलाबराय दर्शनके विद्वान हैं। अतः मताविज्ञानका पुट आपके लेखोंमें यत्र-तत्र पाया जाता है। प्रसाद-गुणयुक्त होनेके कारण आपकी शैली विद्यार्थियोंके लिये बहुत सुबोध होती है। आप निबन्ध-लेखक पहले हैं और आलोचक बादमें। आपने विचारात्मक और भावात्मक दोनों तरहके निबन्ध लिखे हैं।

महादेवी वर्मा छायावादी कवयित्री हैं। छायावादका प्रभाव आपके गद्यपर भी पड़ा है। आपकी भाषामें सरसता और नारीके प्रति अत्याचारोंके कर्ण चित्र है। संस्मरण और रेखा-चित्रोंके अतिरिक्त महादेवी वर्माने वर्णनात्मक, विवरणात्मक निबन्ध भी सफलतापूर्वक लिखे हैं। गुलाबरायजीके शब्दोंमें “अुनके व्यक्तित्वकी मूलबद्ध कर्णा, कला, चित्रात्मकता तथा कोमलता अुनकी शैलीके शक्ति-स्रोत हैं।”

हिन्दीके शोध सम्बन्धी सांस्कृतिक लेखकोंमें डा. वासुदेवशरण अग्रवालका नाम प्रधान रूपसे लिया जा सकता है।

राहुल सांकृत्यायनने भ्रमण, यात्रा सम्बन्धी निबन्ध लिखे हैं। अंसे निबन्धोंको अत्यधिक विस्तार-दोषसे बचानेके लिये लेखकको कभी-कभी थोड़ेमें बहुत अधिक बातें कहनी होती हैं; अतः बहुत कुछ अभिधात्मक होता है। यथार्थता और संक्षिप्तताकी ओर लेखकको विशेष ध्यान देना होता है। अंसे निबन्ध सोलह आने गद्यात्मक होते हैं।

(अ)

सियारामशरण गुप्तके निबन्ध ऐसे निबन्धोंकी श्रेणीमें आते जिनमें कल्पनाकी अड़ान और उसकी अभिव्यक्तिकी कलामे एक सुन्दर औ प्रशंसनीय कौशल होता है। ऐसे निबन्धोंके अन्दर अन्य प्रकारकी अपुयोग बाते बड़ी खीच-तानके साथ निकाली अवश्य जा सकती है किन्तु उनका महत् और स्थान अतना गौण होता है कि वे नगण्य होती हैं। ऐसे निबन्धों साहित्यिकताकी प्रधानता होती है। मच पूछा जाये तो ये ही निबन्ध कलाक दृष्टिसे वास्तविक निबन्ध कहे जा सकते हैं। ये निबन्ध विषयान्तर द्वारा कु रोचक अवे अपुयोगी बातें बता देते हैं।

बेनीपुरीजीके निबन्ध शब्द-चित्रोंकी सजीव शैलीके अत्यन्त सुन्दर नमू है। उनके निबन्धोंमे शब्द फुदकते चलते हैं जिनका पाठकपर बड़ा अच्छ प्रभाव पड़ता है।

भावना और बुद्धिका समन्वय हमें डा. हजारीप्रसादजीके निबन्धों मिलता है। कथनोंके अपनेपनमे पूर्ण होने और मानव-हृदयका छू लेनेवाल भावुकतासे ये निबन्ध अतने सुन्दर हो जाते हैं कि मन अूबने नहीं पाता जिस प्रधान बातका लेखक हमारे सामने रखना चाहता है उसीकी ओर निबन्धक प्रत्येक वाक्य झुकता है। आपके निबन्ध आपके प्रगाढ़ पांडित्यके परिचायक हैं

राजेन्द्र बाबूने भी आत्म-कथाके रूपमें संस्मरणात्मक निबन्धोंका अे बहुत बड़ा भंडार हिन्दी साहित्यको दिया है।

श्रीराम शर्माने हिन्दी-साहित्यमें शिकारपर बहुत-कुछ लिखा है। अपन वर्णन-शैलीके वैशिष्ट्यके कारण आप घटनाओंका सजीव चित्र-सा खड़ा क देते हैं। बन्दूकसे बढ़कर आपकी लेखनीका निशाना बैठता है।

पर्यटक जीवन बितानेके कारण भदन्त आनन्द कौमल्यायनके निबन्ध बहुत कुछ संस्मरणात्मक निबन्धोंकी कोटिमें ही आते हैं। आपके विवरण कहीं भ अस्पष्टता और अलङ्घन पैदा करनेवाले नहीं होते। आपकी भाषा सरल, साफ सुथरी और भावाभिव्यंजक होती है। आपके व्यंग्य तीखे, पर हैंसानेवाले होते हैं

(अ)

पांडेय बेचन शर्मा “अग्र” हिन्दीमें भावावेशात्मक या विशेष शैलीमें गद्य-काव्य लिखनेवालोंमें प्रमुख है। समाजकी कमियोंपर ‘अग्र’ जीने अत्यधिक तीखा व्यंग्य कसा है। आपके सभी निबन्ध विचारोंको अुत्तेजित करते हैं। सजीव चित्रणकी आपकी कला ‘बुढ़ापा’ निबन्धमें पूरी तरह निखर अुठी है।

अस युगके अन्य प्रधान गद्य-लेखक पदुमलाल पुन्नालाल बरूशी, माखनलाल चतुर्वेदी, वियोगी हरि, रायकृष्णदास, डा. विनयमोहन शर्मा, डा. रामविलास शर्मा, विश्वनाथप्रसाद मिश्र, अिलाचन्द्र जोशी, शान्तिप्रिय द्विवेदी, डा. नगेन्द्र, डा. मत्येन्द्र, महात्मा भगवानदीन तथा डा. रघुवीरसिंह, अगरचन्द नाहटा, परशुराम चतुर्वेदी, डा. सम्पूर्णानन्द आदि हैं।

प्रस्तुत सग्रहमें मराठी, अुर्दू और बँगलाके लेखकोंके भी निबन्ध अनूदित करके सम्मिलित किये गये हैं।

आचार्य विनोबा गाँधी-मिद्धान्तोंपर पूर्ण निष्ठा, विश्वास अेवं तत्परतासे अमल करनेवाले राजनैतिक नेता तथा मस्कृतके पंडित हैं। आपका मराठीपर पूर्ण अधिकार है। यही नहीं आपने हिन्दी, अुड़िया, गुजराती, बँगला तथा दक्खिणकी भी लगभग सभी भाषाओंका अध्ययन किया है। आप मरल भाषामें अत्यन्त आडम्बरहीन ढंगसे अपने विचारोंको व्यक्त करते हैं।

मैयद शौकत थानवी तथा अेस. अेम. बुखारी मूलतः अुर्दूके लेखक हैं ‘मेहमान’ में थानवीजीने सामाजिक दूषणोंका अत्यन्त आकर्षक अेवं सजीव चित्र खींचा है। मेहमान जब मेजवानपर बुरी तरह बिना बुलाअे लद पड़ता है तो मेजवान किस आपत्तिमें फँस जाता है, अिसका ‘मेहमान’ में बड़ा ही कर्ण चित्र है। श्री बुखारी अुर्दूके हास्यरसके प्रसिद्ध लेखक हैं। ‘कुत्ते’ नामक अपने लेखमें आपने कुत्तोंका बड़ा ही सजीव वर्णन किया है जो बरबस पाठकोंको आकर्षिक कर लेता है। रवीन्द्र बाबूका अपने बचपनकी घटनाओंका ‘मेरा बचपन’ में किया गया सजीव वर्णन संस्मरणात्मक साहित्यका अच्छा नमूना अुपस्थित करता है।

अस तरह हम देखते हैं कि गद्यके क्षेत्रमें हिन्दी-साहित्यने काफी प्रगति की और बहुतसे नअे लेखक अस अंशको अपने श्रमसे परिपुष्ट कर रहे हैं।



१.

मेरे संस्मरण

* * *

—डा. राजेन्द्रप्रसाद

डा. राजेन्द्रप्रसाद

बिहारका सारन जिला। अुमीका अेक छोटा-सा गाँव है—‘जीरा-देओ!’ यही ३ दिसम्बर सन १८८४ में अेक जमीदार कायस्थ परिवारमें राजेन्द्रप्रसादजीका जन्म हुआ। आपकी शिक्षाका आरम्भ अेक मौलवीके हाथों हुआ, जिसने आपको अुर्दू-फारसीकी तालीम दी। अिसके बाद छपरा, हथुआ, पटना और कलकत्ता आदि स्थानोंपर आपकी शिक्षा हुई। आपने कलकत्ताके प्रेसीडेन्सी कॉलेजसे अेम. अे. भी किया। सभी परीक्षाओंमें विश्व-विद्यालयभरमें लगानार सर्वप्रथम रहनेका अन्यतम सम्मान आपको मिला।

बंगालमें चलनेवाली तत्कालीन राष्ट्रीय हलचलोंका आपपर काफी प्रभाव पड़ा और आप भी नखसे शिखनक राष्ट्रीयताके संस्कारोंमें रंग गये। कओ महाविद्यालयोंमें आपने अध्यापन कार्य भी किया और अुसके बाद कानूनकी परीक्षा अुत्तीर्ण होनेपर आपने वकालत भी की। अिसी समय महामान्य गोखलेजीकी निगाह आपपर पड़ी और आपकी असाधारण बुद्धि-प्रतिभा, निस्पृह सेवा-भावना तथा देशभक्तिकी अुत्कट लगनसे प्रभावित होकर अपनी ‘भारत सेवक समिति’ का सदस्य बननेको आमंत्रित किया। पर अुस जिम्मेवारीको आप कओ कारणोंवश स्वीकार न कर सके।

अिसी बीच आपने अेम. अेल. किया और १९१७ में चम्पारन सत्याग्रहमें गाँधीजीसे आपका सम्पर्क हुआ। १९२१ में आपने वकालत छोड़ दी। कओ बार काँग्रेसके सभापति रहे। आप हैं गाँधी-नीतिके सर्वोत्तम प्रतीक, साधु स्वभाववाले काँग्रेसके सेनानी, स्वतन्त्र भारतकी सरकारके भू. पू. खाद्य-मन्त्री, विधान सभाके अध्यक्ष और अब भारतीय जनन्तत्रके राष्ट्रपति।

खंडित भारत, चम्पारन-सत्याग्रह, बापू के कदमों में, आत्मकथा, माहित्य, शिक्षा और संस्कृति आदि आपकी प्रधान रचनाओं हैं।

प्रस्तुत निबन्ध आपकी 'आत्मकथा' नामक पुस्तक से लिया गया है।

निबन्धकी भाषा अत्यन्त सरल और सुस्पष्ट है। छोटे-छोटे वाक्य और जानदार भाषाका प्रयोग आपकी शैलीकी विशेषता है। अर्दू के शब्दोंका आप अेकदम बहिष्कार नहीं करते वरन प्रतिदिन प्रयोगमें आनेवाले अर्दू के शब्दोंका आपने खुलकर प्रयोग किया है।

* * *

विषय-वस्तु—

देशके हितचिन्तक मनीषीगण देशकी भलाहीके हेतु अैसे युवकोंकी खोजमें रहते हैं जो बचपनमें ही अपनी प्रतिभासे लोगोंका ध्यान आकृष्ट कर लेते हैं।

‘होनहार बिरवानके होत चीकने पात’ की कहावतको बचपनमें चरितार्थ करनेवाले ही तो आगे चलकर देशके सफल भाग्य विधायक बनते हैं। राजेन्द्रबाबू भी अैसे ही अेक अुज्ज्वल रत्न हैं जिन्हें भारतने अपना राष्ट्र-पति बनाया और अपनी बागडोर अुनके हाथोंमें सौंप अपनेको सुरक्षित अेवं समृद्धिशील होनेके सुन्दर सपने देखता है।

आपकी अस सफलताका रहस्य आपके अुन संस्मरणोंमें निहित है जिनसे यह अंश लिया गया है।

* * *

मेरे संस्मरण

बात सन १९१० आ. की है। अेक दिन हाअिकोर्टमें, जहाँ मैं प्रायः प्रति दिन जाया करता था, मिस्टर परमेश्वरलाल बैरिस्टरने मुझसे कहा कि तुम और श्रीकृष्ण जाकर माननीय गोखलेसे मिलो, अुन्होंने तुम दोनोंको बुलाया है। वे बिहारके दो-चार अच्छे होनहार विद्यार्थियोंसे मिलना चाहते हैं और मैंने तुम दोनोंका नाम अुनको बता दिया है। बात यह थी कि श्रीकृष्ण प्रसाद—जो दुर्भाग्यवश, अस लोकसे चले गअे—और मैं, दोनों छात्र-सम्मेलनमें प्रमुख भाग लिया करते थे। असलिअे हम लोगोंको बहुत लोग जानते थे। मिस्टर परमेश्वरलालने भी असी कारण हम दोनोंके नाम बता दिअे थे। हम दोनों माननीय गोखलेसे, जहाँ वे ठहरे थे, जाकर मिले। अुन्होंने थोड़े दिन पहले, ‘सर्वेंट्स आफ अिडिया सोसायटी’ की स्थापना की थी। वे चाहते थे कि बिहारके कुछ अच्छे नवयुवक अुसमें शरीक हो जाअें। अुन्होंने देशकी सेवापर जोर देकर हम लोगोंसे अुसमें शरीक होनेको कहा। अुन्होंने कहा—हो सकता है कि तुम्हारी वकालत खूब चले, बहुत रुपअे पैदा कर सको। बहुत आराम और अंश-अिशरतमें दिन बिताओ। बड़ी रा. ग. सं. २--२

कोठी, घोड़ा-गाड़ी नौकर अत्यादि दिखावटके सामान जो अमीरोंके हुआ करते हैं, तुमको सब मयस्सर हों। पर मुल्कका भी दावा कुछ लड़कोंपर होता है और चूँकि तुम पढ़नेमें अच्छे हो, असलिये तुमपर दावा और भी अधिक है। अपने बारेमें अन्होंने कहा—मेरे सामने भी यही प्रश्न आया था। मैं गरीब घरका आदमी था। मेरे घरके लोग बहुत आशा रखते थे कि जब मैं पढ़कर तैयार हो जाऊंगा तो रुपये कमाऊंगा और सबको सुखी बना सकूंगा। जब मैंने अुनकी सब आशाओंपर पानी फेरकर देशसेवाका व्रत लिया तो मेरे भाभी तो अितने दुखी हुअे कि कुछ दिनोंतक वह मुझसे बोले तक नहीं। पर कुछ दिनोंके बाद वे सब बातें समझ गअे और फिर मेरे साथ खूब प्रेम करने लगे। हो सकता है कि यह सब तुम्हारे साथ भी हो, पर असका विश्वास रखो, सब लोग अन्तमें तुम्हारी पूजा करने लगेंगे।

अन्होंने प्रायः डेढ़-दो घंटे तक हम लोगोंसे बातें की। बातें करनेका तरीका भी अैसा था कि हम लोगोंके दिलपर अुसका बहुत गहरा असर हुआ। हम लोग वहाँसे, अेक प्रकारसे खोअे हुअे-से होकर निकले। अुनकी बातोंका अितना असर पड़ा था कि कोअी दूसरी बात सूझती ही न थी। मुझे तो कअी दिनोंतक नींद नहीं आअी। खाना-पीना- सब कुछ बरायनाम रह गया। असके पहले कभी अस तरहसे यह प्रश्न सामने नहीं आया था और न कभी अैसे बड़े आदमीसे मिलकर अस प्रकारके मार्मिक शब्दोंके सुननेका ही सौभाग्य हुआ था। हाअिकोर्ट जाना बन्द रहा।

टहलना-धूमना छूट गया। कहीं-न-कहीं अकान्त ढूँढ़कर बैठना और चिन्ता करना यही एक काम रह गया। कभी दिनोंकी अिस प्रकारकी चिन्ताके बाद एक दिन निश्चय किया कि मुझे माननीय गोखलेकी बात मानकर अुनकी सोसायटीमें शरीक हो जाना चाहिअे। मेरी हिम्मत नहीं होती थी कि भाअीसे मैं खुलकर कहूँ, क्योंकि मुझे डर था कि अुनको अिससे बहुत दुख होगा। मैंने एक लम्बा पत्र लिखा, जिसमें सब बातें खोलकर लिख दीं और अुनसे आज्ञा माँगी कि मुझे जाने दें। अुन्होंने पत्र पढ़ा। और जब मैं लौटा तो अुनका हाल बेहाल देखा। मैंने देखा कि जो विचार मुझे सता रहे थे वही अुनको सता रहे हैं। अुनका जी चाहता है कि मुझे न रोकें, पर अपनेको परिवारका अितना बड़ा बोझ अुठानेमें असमर्थ पाते हैं। वे मुझसे मिलकर फूट-फूटकर रोने लगे। मैं भी अपनेको रोक न सका।

मैंने माननीय गोखलेसे जाकर यह कह दिया। अुन्होंने भी आशा छोड़ दी। मेरे साथी श्रीकृष्णका भी निश्चय हुआ कि वे सोसायटीमें शरीक न हो सकेंगे। हम दोनों भाअी जीरादेअी पहुँचे। वहाँ जब घरकी औरतोंने बातें सुनी तो सब परेशान हो गयीं। माँका तो प्रेम अितना रहता था कि वह कभी कुछ बोलती ही नहीं थीं। पर मेरी बहन, जो हमेशासे कुछ तेज बोलनेवाली हैं, कहने लगीं कि तुमने विलायत जानेकी बात अुठाकर बाबूजीको रूलाया और अब अिस अुम्रमें साधु बनना चाहकर भाअीको रूलाते हो। बस अितना कह वह स्वयं भी रोने

लगीं। घरमें कोलाहाल मच गया। अुस कोलाहलमें मेरी बची-खुची हिम्मत, जो कलकत्तेमें ही कमजोर पड़ गयी थी, अब बिलकुल टूट गयी। मैंने विचार तो छोड़ दिया पर दिलमें व्यथा बनी रही।

कलकत्तेमें वकालत शुरू करते ही मुझे मुकदमे मिलने लगे। मैंने जिस दिनसे वकालत शुरू की, घरसे अपने खर्चके लिये भी कुछ नहीं लिया। मुझे अिस बातकी चिन्ता थी कि घरसे कुछ मँगाना पड़ेगा। हर महीने थोड़ी बहुत आय हो जाती और वह खर्चके लिये काफी होती। मेरे पास धनी मुवक्किल नहीं आये। केवल अेक आदमी रायबहादुर हरिहरप्रसाद सिंहने, मैंने जिस दिन वकालत शुरू की अुसी दिनसे, अपनी जमींदारीके सब छोटे-बड़े मुकदमे मेरे सुपुर्द किये। गरीब मुवक्किलोंके मुकदमोंमें कोअी दूसरा वकील भी नहीं होता था और अक्सर मुझे ही बहस करनी पड़ती थी। परिश्रम करके काम करता, अिसलिये बहुत जल्द जज लोग भी मुझे पहचानने लगे। बहुत लोगोंकी आदत होती है कि जजोंसे बहुत मिला करते हैं। मैंने अैसा कभी नहीं किया। अुनसे मेरी मुलाकात अिजलासकी ही रही। अुनमें बहुतेरे, जिनके सामने मुझे काम करनेका मौका मिला, मुझसे खुश रहे। सर लॉरेन्स जेन्किन्स चीफ जस्टिस थे। मेरे वकालत शुरू करनेके अेक डेढ़ साल बाद ही वे चले गये, पर अितने थोड़े दिनोंकी वकालतसे ही मुझसे अितने प्रसन्न थे कि जानेके समय अपने हस्ताक्षरोंके साथ अपनी अेक तस्वीर मुझे दे गये।

कलकत्तेकी वकालतके कुछ चुटकुले मनोरंजक हैं। वकालत शुरू करनेके थोड़े ही दिनोंके बाद अेक मुवक्किलके मुस्तार मेरे पास अेक अपील दायर करनेके लिअे आअे। अनकी राय थी कि अेक सीनियर वकील भी रखें। मुझे खुशी हुअी कि बड़े वकीलके साथ काम करनेका मौका मिलेगा। हम दोनों अुनके घरपर गअे। मैंने कागज पढ़कर बुद्धिके अनुसार अपीलकी दरखास्त लिख ली थी। सन्ध्याके समय हम दोनों पहुँचे। अुन्होंने दूसरे दिन मुस्तारको बुलाया और पूछा कि किसी जूनियरसे दरखास्त वगैरह लिखवाअी है या नहीं? मुस्तारने कहा सब कुछ तैयार है। अिस पर अुन्होंने जूनियरका नाम पूछा। मेरा नाम मुस्तारने बता दिया। मैं तो वहीं चुप बैठा था। वे बिगड़कर बोले—न मालूम तुमने कैसा अुजबक वकील रखा है जिसको मैं जानता भी नहीं हूँ। मुवक्किलने कहा—वे नअे हैं, मगर बहुत तेज हैं। अिसपर अुन्होंने फिर अुजबक वगैरह कह दिया। मैं चुप बैठा रहा। मुवक्किलने तब मेरी तरफ अिशारा करके कहा कि यही तो हैं। यह सुनते ही बहुत घबराकर मुझसे कहने लगे—तुमको आते ही मुझसे जान-पहचान कर लेनी चाहिअे थी। अिस प्रकारकी बातें कहते-कहते वे माफी माँगने लगे। मैंने कहा कि आपका कहना स्वाभाविक था। दूसरे दिन जब कचहरीमें ही हमने अपनी लिखी दरखास्त अुन्हें दिखलाअी, तब बहुत खुश हुअे और मुवक्किल तथा दूसरे वकीलोंके सामने मेरी तारीफका पुल बाँध दिया। अुसके बाद मुझे अुनके साथ बहुत काम करनेका

मौका मिला और मुझे वे बहुत मानते रहे। मेरे साथ अनुकी
अेक बातकी शिकायत रहती। कपड़े पहननेमें लड़कपनसे
ही कुछ अूल-जलूल रहा हूँ। वे अुसे नापसन्द करते थे और
कपड़ेके बारेमें शौकीन होनेकी शिक्षा जब-तब दिया
करते थे।

* * *

२.

मेहमान

* * *

—श्री संयद शौकत थानवी

श्री सैयद शौकत थानवी

ये थाना भवन (मुजफ्फरनगर) के निवासी है। आयु ४० सालके लगभग है। अिनमें हास्यकी बड़ी सुन्दर प्रतिभा है। ये नित्य प्रतिकी व्यावहारिक बातोंपर ही प्रायः लिखा करते हैं। अिनके हास्यमें जीवनके भिन्न-भिन्न पहलुओंकी आलोचना होती है।

ये सामाजिक दूषणों और कुप्रथाओंकी खूब मीमासा करते हैं। लेखन-शैली स्वाभाविक, सुन्दर और आकर्षक है। आपकी भाषा विषयके अनुरूप होती है। सरल शब्दोंमें बड़ी महत्वपूर्ण बातें कह जाते हैं। गम्भीर-से गम्भीर पाठक भी अिनकी रचनाओंको पढ़कर मुस्कराने लगते हैं।

ये लखनऊमें 'सरपंच' नामक अेक साप्ताहिक पत्र भी निकालते थे। अिनकी कितनी ही पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं अिनमें कुछ तो बहुत ही लोकप्रिय हुआ है। अिन्होंने अपुन्यास भी लिखे हैं। आजकल, आप पाकिस्तानमें हैं।

अुल्लेखनीय रचनाअें—

दुनियाअे तबस्सुम, स्वदेशी रेल, मौजे तबस्सुम, बहरे तबस्सुत, सैलावे तबस्सुम, तूफाने तबस्सुम। हँसती-बोलती तस्वीरे, अिन पुस्तकोंमें हास्यरस सम्बन्धी लेखों और कहानियोंका संग्रह है।

'दिल फेंक', 'सौतिया डाह' अित्यादि अिनके हास्यरस सम्बन्धी अपुन्यास हैं।

विषय-वस्तु—

सभी चाहते हैं कि उनके यहाँ मेहमान आते रहें। मेहमानोंका स्वागत करनेमें मेजवानको आनन्द आता है लेकिन तभी जब कि वह मेजवानके लिये बोझ स्वरूप न हो जाये, अुसके नित्य नैमित्तिक कार्योंकी स्वतन्त्रतामें बाधा-स्वरूप न बने, अुसकी अेकमात्र अिच्छा यह न रहे कि मेजवान घरके सभी लोग अुसकी हाजरीमें लगे रहें। यदि मेहमान मेजवानके कुटुम्बके हिले-मिले सदस्यकी तरह रहता है तो बोझ-सा नहीं लगता। किन्तु यदि अंसा नहीं हो पाता है तो मेजवानकी क्या मनःस्थिति होती है अिसका अिस निबन्धमें सुन्दर वर्णन किया गया है।

* * *

मेहमान

अनेक आफतोंमेंसे अक आफत मेहमान भी है, जो हम हिन्दुस्तानियोंपर अक्सर दैवी प्रकोपकी नाजिल हुआ करती है। हमारा मतलब यह नहीं है कि हमें मेहमान बुरे लगते हैं या हम मेहमानोंसे बरी होना चाहते हैं। हाँ, अितना अवश्य है कि हम भारतीय प्रथाओंके सुधारके लिअे ओश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि भगवान अिन भारतवासियोंको मेहमान बनना सिखा दे। और यदि अिनको मेहमान बनना नहीं आता, मेजवानोंके दिलमें अितनी शक्ति दे कि वह मेहमानोंकी आदत खराब करनेकी कुचेष्टा न कर सकें।

अिस तहजीबपर ध्यान दीजिअे:—आधी रातका समय है। संसार निद्रा देवीकी गोदमें शान्तिपूर्वक सो रहा है। ये मेहमान महोदय किसीको सूचना दिअे बिना ही, दैवी प्रकोप या भूचालकी भाँति आ धमके और दरवाजा खुलवानेके लिअे अैसी आवाज दी कि—अड़ोसी-पड़ोसी क्या, सारे मुहल्लेभरको जगा दिया। वह बेचारा अपनी आँखें मलता हुआ घरके दरवाजेपर आता है कि देखें क्या बला है? सो यह मेहमान महोदय अेक बिस्तरे और अेक ट्रंकके साथ नमस्ते करते हुअे दिखायी देते हैं। सच बताअिअे,

अैसे अवसरपर अुस बेचारेकी क्या दशा होगी, जिसके घरमें न तो अिस मेहमानको ठहरानेके लिये जगह है और न सुलानेके लिये चारपायी; किन्तु वह अपने हार्दिक भावोंको छिपाकर अतिथि-सत्कारके भावसे तनिक मधुर हास्यसे कहता है—

ओह ! आज रास्ता भूलकर कहाँ आ गये ? मेहमान महोदय भी शिष्टाचारको प्रकट करते हुअे कहते हैं—अरे भायी, तुम क्यों आने लगे ! मैं ही निर्लज्ज हूँ, जो आ गया । झाँसी जा रहा था, दिल न माना कि आगरेसे गुजरूँ और तुमसे न मिलूँ ! कहो अच्छे तो हो ! भाभीजी कैसी हैं ! मेरा नमस्ते तो कह दो । बच्चे कैसे हैं ? अुन्हें देखनेके लिये दिल छटपटाता था ।

अच्छा भायी ! अिस ताँगेवालेको क्या दे दूँ ? मेजवान फौरन ताँगेवालेको किराया देगा । मेहमान महाशय भी जरा यों ही ताँगेवालेको किराया देनेका आग्रह करेंगे । किन्तु गृहस्वामी, “ भला यह कैसे हो सकता है ? ” कहकर अुसे किराया दे देंगे । अब अुसे प्रथम मेहमानके लिये चारपायी और सोनेके लिये स्थानके प्रबन्धकी जरूरत पड़ेगी और वह किसी बच्चेको अुठाकर चारपायीपर लिटायेगा, किसीको अुसकी माताके पास । स्वयं, अपना बिछौना जमीनपर लाकर मेहमानके लिये सबसे अच्छी खाटका, जो अुसके घरपर होगी, प्रबन्ध करेगा । अुसे मेहमानके भोजन तथा जलपानका ध्यान आयेगा । अब अेक बजेके समयको देखिये और मेहमानके भोजनपर ध्यान दीजिये, किन्तु वह प्रबन्ध करेगा । और मेहमान साहबको देखिये कि वे भी अिसी समय भोजन करेंगे । भोजनादिसे निवृत्त होकर मेहमान महोदय तो अपनी शय्यापर

विश्राम करेंगे, किन्तु गृहस्वामी अब भी अُنके निकट बैठकर अधर-अधरकी बातें करेगा। कभी पानको पूछेगा, कभी हुक्केको और कभी यह भी पूछेगा कि—कोअी कष्ट तो नहीं है? यह आपका अपना ही घर है। संकोचकी कोअी बात नहीं है।

हम सच कहते हैं कि जो व्यवहार अुक्त मेहमान महाशयने अिस दिन हिन्दुस्तानी गृहस्वामीके साथ किया है, यदि किसी अँग्रेजके साथ करते तो मजा आ जाता। प्रथम तो रात्रिके समय स्टेशनसे किसी अँग्रेजके घरपर जानेकी धृष्टता ही नहीं की जाती और यदि मस्तिष्कके दोषके कारण अैसी कुचेष्टा कोअी मेहमान कर भी बैठे, तो अिस बुरी तरहसे बँगलेसे निकाला जाअे कि सम्भव है, फिर अुम्भर मेहमान बननेका नाम न ले। अँग्रेजोंपर यह मेहमान-वाला दैवी प्रकोप प्रथम तो होता ही नहीं; यदि होता भी है, तो अनिश्चित रूपसे कभी नहीं होता। अँग्रेज अपने किसी मित्रके यहाँ किसी विशेष आवश्यकता या घटनाके बिना नहीं ठहरते। वे होटलमें विश्राम करना अधिक पसन्द करते हैं। यदि किसी अँग्रेजको किसी मित्रके यहाँ ठहरना होता भी है, तो वह सबसे प्रथम सूचना देकर। स्वीकृति दे दी तो ठीक, नहीं तो सीधा होटल; यदि होटल न हो तो डाक बँगलेकी राह पकड़ता है। अँग्रेज मेहमान अैसे असभ्य नहीं होते कि मेजवानके सिरपर भूतकी भाँति सवार हो जाअें; और न मेजवान ही अैसी अनुचित सभ्यताके पुजारी होते हैं कि स्वयं दुख भुगतें और व्यर्थकी बला सिर लें।

यह बात तो भारतीय मेहमानोंमें ही दीख पड़ती है कि आजादीके साथ हर अेकके घरपर अपने सामानके साथ पहुँच

जायेंगे। जिससे एक बार परिचय प्राप्त हो गया, फिर उसको अतना कष्ट देंगे कि बेचारेको संसारके समस्त पापोंसे जीवनभरके लिये मुक्ति मिल जायेगी। जिस समय पधारेंगे तबसे और जबतक वापस न जायेंगे, गृहस्वामीकी यह दशा रहेगी कि अन्हें आराम पहुँचानेके लिये, अपने शरीर तककी भी सुधि न लेगा। उसके घरके सब आदमी—बाल, वृद्ध, स्त्री और पुरुष—एक व्यक्तिके लिये व्यग्र और संलग्न रहेंगे। जैसे मेहमानने आकर अुनके घर दफ्तर खोल दिया हो। कोअी पान लगा रहा है, कोअी हुक्का ताजा करनेमें लगा हुआ है। और समयपर भोजन तैयार करनेके लिये एक पूरा स्टाफ भोजनालयमें कार्य कर रहा है। स्वयं गृहपति महोदय हैं; जो रह-रहकर बाहरसे आकर समस्त कार्योंका निरीक्षण कर जाते हैं। यदि कोअी मुसलमान साहब हैं तो क्रोधित होकर कहते हैं—लाहौल विला कूवत! अभीतक मुर्ग भी साफ नहीं किया गया। वे मगरिबके बाद भोजन करते हैं और हमारे यहाँ अभीतक चावल तक नहीं चढ़े। खुदाके वास्ते तुम लोग मेरी नाक न काटना। क्या कुछ बाजारसे मँगाना पड़ेगा? अिसके अुत्तरमें कुछ काम करनेवाले तो मौन धारण कर लेंगे, कुछके होठोंपर बड़बड़ाहटके चिन्ह प्रगट होंगे। किन्तु गृहलक्ष्मी अिस प्रकारकी बातोंका अुत्तर कबतक न देगी। फौरन किसी बर्तनको आवेशमें आकर पटककर कहेगी—वाह! हाथ-पैर फुलाअे देते हैं। कोअी चार हाथ-पैर कैसे लगाअे? हथेलियोंपर सरसों जमाअे देते हैं। किस वृक्त सौदा आया है! या सौदा लेने भी मैं ही चली जाती। अभी कअी बाँस सूरज है और आप अैसी तोबा-तिल्ला मचा रहे हैं, मानो चार दिनके फाकोंसे हों।

अब यदि गृहपतिने गृहिणीको अुत्तर दिया, तो यही सिल-सिला वह रूप धारण कर सकता है कि बाजारसे भोजन आ जाऐ और अतिथिसे कह दिया जाऐ, घरमें अिस प्रकार दौरा पड़ा कि घरभर परेशान है। और यदि गृहिणीकी बातको गृहस्वामीने पीकर अपनी बुद्धिमत्ताका परिचय दिया, तो थोड़ी देरके पश्चात भोजन बन ही जाता है।

संक्षेपमें यह है कि अेक मेहमानके आ जानेसे समस्त परिवारकी व्यवस्था अैसी बदल जाती है, जैसे कयामत बरपा हो गयी। और मेहमानकी यह हालत कि अुसके कानपर जूँ तक नहीं रेंगती। अधिक-से-अधिक यह है कि भोजनकी व्यवस्थाको देखकर, तनिक मन चाहा तो शिष्टाचारके तौरपर कह दिया—भोजन-व्यवस्थामें अितने कष्टकी क्या आवश्यकता थी। किन्तु यदि मेजवान बेचारा यह ढोंग न रचे, तो यही मेहमान साहब अुससे अितने रुष्ट हो जाअेंगे कि दूसरेके यहाँ जाकर अुसका मजाक अुड़ाअेंगे, अुसकी खूब आलोचना करेंगे और अिस अतिथि-सत्कारके दोषको कुरेद-कुरेदकर प्रत्येक स्थानपर अुसे बदनाम करेंगे।

मेहमान भी मुस्तलिफ मिजाज तथा विभिन्न श्रेणीके होते हैं। प्रथम वे हैं जो अपनी साहबबहादुरीके कारण मेजवानके कष्टोंका कारण होते हैं। सुबह होते ही चायके प्रबन्धके अतिरिक्त अुनके लिये नाअीका अिन्तजाम करना पड़ता है। स्नानका प्रबन्ध करना और जिस प्रकार भी हो, अुनके लिये कमोडका प्रबन्ध भी किया जाऐ। नहीं तो सब सेवा-सत्कार धूलमें मिल जाऐगा। दूसरी श्रेणीके वे हैं, जो अपने गँवारपनसे मेजवानके नाकमें दम कर

देते हैं। अनुरके ललऐ टेबलपर भोजन लगाया गया, तो हाथ धोकर कुर्सी लगानेसे पहले ही, गृहस्वामीकी प्रतीक्षा कलऐ बलना ही, मेजपर ही बैठकर भोजन करने लगते हैं। अब न तो अनुरको मेजपरसे हटाते बन पड़ता है और न अनुरके साथ मेजपर चढ़कर भोजन करनेको दल चाहता है। शौचादलके ललऐ अनुरको स्नानागारमें भेजा, तो कमोडका चारों ओरसे परीक्षण करके आ जाअेंगे कल वहाँ तो कोअी स्थान अैसा नहीं है, जहाँ शौचादलके ललऐ स्थान हो। अनुरके शयनका प्रबन्ध कलया जाऐ तो पलँगके चारों ओर हजारों पीकदान और थूकदान रख दलऐ। कलन्तु प्रायः अुठकर देखलऐ, तो भगवान झूठ न बुलाऐ, कमरेका तमाम फर्श व दीवार पानकी पीककी पलचकारलरलसे रंगे हुऐ मललेंगे।

अनुरको अपने कमरेका चार्ज देकर दफ्तर चले जाअलऐ तो सन्ध्याको कमरा अस प्रकार खुला मललेगा कल गद्देपर कुर्सलरलके बीचमें हुक्का औंधा पड़ा होगा, चलम टुकड़ोंके रूपमें दलखाअी देगी। कालीन रख और हुक्केके जलसे पवलत्र कलया हुआ मललेगा और मेहमान महोदय लापता होंगे। अब अनुरकी प्रतीक्षा हो रही है, दासी आकर भोजनके ललऐ आग्रह कर रही है, कलन्तु भोजन कैसे कलया जाऐ? अतलथल महाशय तो गायब हैं! गृहस्वामी बेचारा झूठे शलष्टाचारके ढोंगसे दुखलत, कषुधाके कारण पेटपर हाथ रखे अनुरकी बाट देखता बैठा रहेगा। वे रात्रलको कलसी समय जब जी चाहेगा आ पधारेंगे, और अनुरको अस प्रकार देर करनेपर तनलक भी पश्चात्ताप न होगा, बल्ललक अुल्टा यह दोष देंगे कल स्वयं मेजवान अस आवारागरदीमें अनुरके साथ कल्यों नहीं था।

अक तीसरी श्रेणी अुन अतिथियोंकी है, जो अधिकतर मेजवानके यहाँ स्थायी रूपसे आ बिराजते हैं। अुन्हें कभी-कभी मास व्यतीत हो जाते हैं। परन्तु जानेका नाम नहीं लेते। मेजवान थोड़े दिन अभ्यर्थना करनेके पश्चात अुनके साथ वह बर्ताव आरम्भ कर देता है, जो प्रति दिन आनेवालेके साथ होता है अर्थात् न तो अुनके भोजनकी प्रतीक्षा की जाती है और न कोअी विशेषता अुनके लिये होती है, और न अुनसे दिनभरमें पचास हजार बार यह पूछा जाता है कि आपको कोअी कष्ट तो नहीं है? किन्तु अिस अुदासीनताके होते अुअे भी मेजवानके घरको हर प्रकारसे अपना घर समझकर रहते हैं। वे अपने विचारों द्वारा अपने हृदयमें यह धारणा बना लेते हैं कि मेरे कारण गृहपतिको कोअी कष्ट नहीं है। किन्तु अिसी तीसरी श्रेणीमें कुछ महानुभाव अैसे भी होते हैं, जो अक अवधि तक अतिथि रहकर अपनेको अुस कुटुम्बका सदस्य समझने लगते हैं। मेजवानकी दास-दासियों, बच्चे तथा धर्मपत्नीपर अिस प्रकारका शासन आरम्भ कर देते हैं, जैसे सब कुछ अुन्हींका है। भोजनमें देर अुअी तो तकाजा कर दिया। सागमें नमक तेज है, अप्रसन्नता प्रगट कर दी; कोअी अैसी वस्तु बन गअी, जो आपको रुचिकर न हो तो अुसके लिये आगेसे न बननेका आर्डर दे दिया। यानी अिस प्रकार रहना आरम्भ कर देते हैं, जैसे अुनके बाप-दादाओंका घर हो और वे अिसी घरमें पैदा अुअे हों।

हमें तो अैसे मेहमान अच्छे लगते हैं, जो सूचना देनेके पश्चात हमारे घरपर आअें। हम मोटर या ताँगा लेकर अुनको लेनेके लिये स्टेशनपर जाअें। अुनका हृदय खोलकर स्वागत करें। अक दिन अुनके आगमनके अपलक्ष्यमें डिनर दें, जिसमें हमारे भी मित्र

सम्मिलित हों और वे मित्र भी इसी प्रकार हम सबको भोज दें । जबतक ठहरें प्रीतिभोजका ताँता लगा रहे । इसके पश्चात् वे बिदा हो जायें और बिदाओंके समय हमारे बच्चोंको रुपये दें । हमारे नौकरोंको अनाम दें और हमें भी अपने यहाँ आनेका निमन्त्रण देकर चले जायें । खैर, अिन बातोंसे तो लोग हमें न जाने क्या समझेंगे । यह तो मजाक था । परन्तु हमको जैसे मित्र अच्छे लगते हैं, जो मेहमान बनें और मेहमान जैसे अच्छे लगते हैं जो होटलमें ठहरनेके पश्चात् हमसे मिलने आ जाया करें या अधिक से-अधिक हमारी स्वीकृतिके बाद, यानी हमें सूचित करके अेक-आध दिन हमारे घर ठहर जायें । उनका जीवन भी ऐसा ही हो, जैसा जीवन हम व्यतीत करते हैं । जैसे, यदि हम शौचादिके लिये कमोडका प्रयोग करते हैं तो वे भी करें । यदि हम अुक्त कार्यके लिये मैदानमें जाते हैं, तो वे भी आनाकानी न करें; यदि हम सन्ध्या समय भोजन करते हैं, तो वे भी हमारे समयका ध्यान रखें । और यदि हम रात्रिके दो बजे भोजन करते हैं, तो वे भी हमारे लिये अिस कष्टको झेलनेका प्रयत्न करें । मतलब यह है कि उनके आ जानेसे हमें अपने घरके आकाशको पृथ्वी और पृथ्वीको आकाश न करना पड़े ।

हमारे बहुतसे शुभचिन्तक जैसे भी हैं, जिनको अतिथि बनाना आता है, यानी वे हमारे हम-खयाल मेहमान बनकर आते हैं और हमें उनका अतिथि होकर आना अनुचित या बुरा मालूम नहीं होता । हम उनके लिये किसी प्रकारका आडम्बर नहीं करते और वे भी हमारे यहाँकी रूखी रोटी बैठे प्रेमसे हलवा-पूरी समझकर खाते हैं ।

अनुको हमारे कष्टोंका ध्यान रहता है। वे जानते हैं कि हमें अनुके लिये स्थान रिक्त करनेमें कितनी असुविधा हुई होगी और अनुको यह भी पता रहता है कि वे शीघ्र-से-शीघ्र चले जायेंगे तो मानों हम अनुके अधिक कृतज्ञ होंगे। सच तो यह है कि हम अिस युगमें अिस प्रकारके मेहमानोंका हृदयसे स्वागत करते हुअे परमात्मासे प्रार्थी हैं कि संसारभरमें यदि मेहमान बनाअे तो अैसे ही बनाअे।

अीमानकी बात तो यह है कि मैंने मेहमानों तथा अतिथियोंकी जितनी श्रेणियाँ बतायी हैं, वे सब सहनीय हैं। किन्तु अन्तिम और निकृष्ट श्रेणी वह है, जिसका विचार आते ही हृदय काँप अुठता है, रक्त सूख जाता है, विचार-शक्ति शून्य हो जाती है। हमारे पागल होनेमें क्या सन्देह है, जब कि हमने अिस श्रेणीवालोंको भी अपना अतिथि बनाया है और हमको तो स्वयं अपने अूपर अचरज होता है कि किस तरह बनाया। हमारी मूर्खता देखिअे, किसीने कहा, तुम्हारे देहलीवाले मित्र जिनके मुखपर चेचकके दाग हैं और जो कविता भी करते हैं; जिनका दिमाग जरा जला हुआ-सा है, फलाँ धर्मशालामें ठहरे हुअे हैं। मैं यह सुनते ही बेचैन हो गया, हमारा मित्र और शहरकी धर्मशालामें ठहरे? अुसी क्ण वहाँ पहुँचकर धर्मशालासे अनुको अनुके सामानके साथ अपनी कुटियापर ले आया। यह अेक पाप मेरी ओरसे हुआ, जिसका प्रायश्चित्त मुझे करना पड़ेगा। अगले दिन प्रातःकाल ही अतिथि महोदयने कहा—वैद्यजीने बादामका निशास्ता और फल ही बता रखे हैं। सेव और आँवलेके मुरब्बेके अतिरिक्त पपीतेका साग या मूँगकी

दाल ले सकते हैं। अब आपको हकीमके आदेशानुसार खानेकी व्यवस्था करनी चाहिये।

अक-दो दिन बाद बीमार महोदय कहते हैं कि आपके यहाँ न तो दाल अच्छी बनती है और न साग अच्छा तैयार होता है। आज दाल और साग दोनों मिलाकर बनवायें। अच्छा महाशय, यह भी सही और जो अन्होंने आज्ञा दी उसका पालन किया गया। अब आप कहते हैं कि—अस खैर नगरवाले मोचीसे जिससे आपने वह जूता बनवाया था; अक जूता ले दीजिये। दाम घर पहुँचकर भेज दूँगा। अक बार मनमें आया, पूछूँ—क्या हकीमजीने जूता बनवानेको बताया है? पर चुप रह गया, क्योंकि मैं जूतेके बीचमें पड़ना नहीं चाहता था, असलिये मौन रहना अचित समझा।

अस प्रकार किसी दिन कपड़ेकी माँग टाली गयी, किसी दिन सिनेमा देखनेके आग्रहको रोका गया। किसी दिन यदि अतिथि-सत्कारकी बहकमें आकर कह दिया—मेरे मकानपर आप कोअी खानेकी वस्तु अपने दामोंसे न मँगाया करें, मैं आप ही मँगा दिया करूँगा। तो बस फिर क्या था, महोदय नाराज हो गये। सन्ध्याको मकानपर आते ही मेहमान साहबका अक पत्र मिला, जिसमें लिखा था—आपकी अतिथि-सेवाके लिये धन्यवाद। किन्तु मैं अब अधिक आपका मेहमान बनकर आपकी घृणाका पात्र बनना नहीं चाहता। आपने जो व्यवहार मेरे साथ अपने मकानपर ठहरा कर किया है, वह असह्य है। मैं किसी सरायमें रहना, मेहमान बननेकी अपेक्षा अधिक अच्छा समझता हूँ और आपसे बिदा होता हूँ।

अब फरमाअिअे, अिस पत्रको पढ़कर हम मेहमान बनने और बनानेकी कसम न खाअें, तो क्या करें? हमारे मेहमान महोदयको हमारी स्थितिका ज्ञान होना चाहिअे था और यदि वे अपनेको बहुत बड़ा आदमी समझते थे तो फिर अुन्हें मेहमान बननेकी आवश्यकता ही नहीं थी। अब हमारी तो यह राय है कि संसारसे मेहमानी-मेजवानी दोनों प्रथाओंको शीघ्र बिदा कर दिया जाअे और होटलों तथा विश्राम-गृहोंको प्रोत्साहन देकर सर्वत्र अिन्हींकी सृष्टि की जाअे।

* * *

३.

जीवन और शिक्षण

* * *

— आचार्य विनोबा भावे

आचार्य विनोबा भावे

गाँधीजीके सिद्धान्तोंमें पूर्ण निष्ठा, विश्वास एवं तत्परतासे अमल करनेवाले सन्त विनोबा एक नैष्ठिक ब्रह्मचारी, प्रखर विद्वान और कर्म समाज-सेवी हैं। गाँधीजीकी विभिन्न रचनात्मक प्रवृत्तियोंको साकार रूप देने, प्रयोगकी कसौटीपर कसकर अनुकी अपयोगिता तथा प्रभविष्णुताको सिद्ध करनेमें विनोबाका बड़ा हाथ रहा है। आप स्वभावसे ही अध्ययनशील हैं और अध्यवसायी हैं। निरन्तर विकासशीलता आपका श्रेष्ठतम गुण है। आपके विचार, वाणी और आचारमें जैसा साम्य है, वैसा साम्य बहुत कम लोगोंमें होगा। आपकी स्मरण-शक्ति आश्चर्यजनक है।

विनोबा संस्कृतके पंडित हैं। मराठीपर आपका पूर्ण अधिकार है। हिन्दी, अड़िया, गुजराती, बँगला आदि भाषाओंका ही नहीं; कन्नड़, मलयालम, तमिल, तेलुगु और अरबी, फारसी जैसी कठिन भाषाओंका भी आपने अध्ययन किया है। आप १६ भाषाओंके ज्ञाता हैं। आपका आध्यात्मिक ज्ञान बहुत बढ़ा-चढ़ा है।

नपे-तुले, आडम्बर-हीन शब्दोंमें अपनी बात व्यक्त कर देना विनोबाका खास गुण है। आपके विचार सुलझे हुए, तर्क युक्तिसंगत और कथन स्पष्ट एवं संक्षिप्त होते हैं। समाजगत बुराियों, रूढ़िगत अन्ध-विश्वासोंके प्रति एक हल्की चुटकी लेकर ही आपकी वाणी मौन नहीं हो जाती वरन उन समस्याओंका एक हल भी हम अंशमें पाते हैं। आपकी भाषा सरल, सुबोध होते हुए भी विषयको पूर्णतया स्पष्ट करनेवाली होती है।

आजकल आप भूदान-आन्दोलनके सिलसिलेमें पैदल यात्रा कर रहे हैं।

रचनाएँ :—पद्य—गीताओ, संतांचा प्रसाद।

गद्य—मधुकर, विनोबाके विचार—भाग १ व २, जीवन-दृष्टि, मूलोद्योग कारना, गीता-प्रवचन आदि।

विषय-वस्तु--

आजकी शिक्षाका सबसे बड़ा दोष यह है कि आधो आयुतक मनुष्य यह समझ ही नहीं पाता कि जिन्दगी बसर करनेके लिये उसे किस तैयारीकी आवश्यकता है ? यही कारण है कि आजका युवक अपने विद्यार्थी जीवनमें अविषयके लक्ष्य और उसकी पूर्तिकी आवश्यक तैयारी नहीं कर पाता । भिसे ही यदि हम सोधे-सादे शब्दोंमें कहना चाहें तो यों कहेंगे कि आजकी शिक्षा जीवन-यापनके अुपायोंका हमें कोओ ज्ञान नहीं कराती अर्थात् जीवन और शिक्षाका कोओ सम्बन्ध नहीं रह गया है । अँसी स्थितिमें मनुष्यकी दयनीय अवस्था हो जाती है और वह जीवनको भयानक वस्तु समझने लगता है । भिस दोषसे बचनेके लिये क्या करणीय है और वह कँसे किया जा सकता है कि भिन सब बातोंकी चर्चा प्रस्तुत निबन्धमें की गयी है ।

* * *

जीवन और शिक्षण

आजकी विचित्र शिक्षण-पद्धतिके कारण जीवनके दो टुकड़े हो जाते हैं। आयुके पहले पन्द्रह-बीस वर्षोंमें आदमी जीनेकी झंझटमें न पड़कर सिर्फ शिक्षाको प्राप्त करे और बादको शिक्षणको बस्तेमें लपेट रखकर मरनेतक जिअे।

यह रीति प्रकृतिकी योजनाके विरुद्ध है। हाथभर लम्बाआका बालक साढ़े तीन हाथका कैसे हो जाता है, यह उसके अथवा औरोंके ध्यानमें भी नहीं आता। शरीरकी वृद्धि रोज होती रहती है। यह वृद्धि सावकाश, क्रम-क्रमसे, थोड़ी-थोड़ी होती है। जिसलिये उसके होनेका भान तक नहीं होता। यह नहीं होता कि आज रातको सोअे तब दो फुट अँचाआी थी और सबेरे अठकर देखा तो ढाआी फुट हो गआी। आजकी शिक्षण-पद्धतिका तो यह ढंग है कि अमुक वर्षसे बिलकुल आखिरी दिनतक मनुष्य जीवनके विषयमें पूर्ण रूपसे गैरजिम्मेदार रहे तो भी कोआी हर्ज नहीं; यही नहीं, उसे गैरजिम्मेदार रहना चाहिये और आगामी वर्षका पहला दिन निकला कि सारी जिम्मेदारी अठालेनेको तैयार हो जाना चाहिये।

सम्पूर्ण गैरजिम्मेदारीसे सम्पूर्ण जिम्मेदारीमें कूदना तो अंक हनुमान-कूद ही हुआ। ऐसी हनुमान कूदकी कोशिशमें हाथ-पैर टूट जायें तो क्या ?

भगवानने अर्जुनसे कुरुक्षेत्रमें भगवद्गीता कही। पहले भगवद्गीताके क्लास लेकर फिर अर्जुनको कुरुक्षेत्रमें नहीं ढकेला, तभी उसे वह गीता पची। हम जिसे जीवनकी तैयारीका ज्ञान कहते हैं उसे जीवनसे बिलकुल अलिप्त रखना चाहते हैं; असलिये अज्ञानसे मौतकी ही तैयारी होती है।

बीस वर्षका अतुसाही युवक अध्ययनमें मग्न है। तरह-तरहके अंके विचारोंके महल बना रहा है। मैं शिवाजी महाराजकी मातृ-भूमिकी सेवा करूँगा। मैं वाल्मीकि-सा कवि बनूँगा। मैं न्यूटनकी तरह खोज करूँगा। अंक, दो, चार जाने क्या-क्या कल्पना करता है। ऐसी कल्पना करनेका भाग्य भी थोड़ोंको ही मिलता है। पर जिनको मिलता है, उनको ही बात लेते हैं। अतः कल्पनाओंका आगे क्या नतीजा निकलता है ? जब नोन-तेल-लकड़ीके फेरमें पड़ा, जब पेटका प्रश्न सामने आया तो बेचारा दीन बन जाता है। जीवनकी जिम्मेदारी क्या चीज है, आजतक अतःकी बिलकुल ही कल्पना नहीं थी। और अब तो पहाड़ सामने खड़ा हो गया। फिर क्या करता है ? फिर पेटके लिये बन-बन फिरनेवाले शिवाजी, करुण गीत गानेवाले वाल्मीकि, और कभी नौकरीकी तो कभी औरतकी, कभी लड़कीके लिये वरकी और अन्तमें श्मशानकी शोध करनेवाले न्यूटन—अतः 'प्रकारकी भूमिकाओं लेकर अपनी कल्पनाओंका समाधान करता है। यह हनुमान-कूदका फल है।

मैंने मैट्रिकके अेक विद्यार्थीसे पूछा—क्यों जी, तुम आगे क्या करोगे ?

—आगे क्या ?—आगे कालेजमें जाऊंगा ।

—ठीक है । कालेजमें तो जाओगे । लेकिन अुसके बाद ? यह सवाल तो बना ही रहता है ।

—सवाल तो बना रहता है । पर अुसका अभीसे विचार क्यों किया जाअे ? आगे देखा जाअेगा ।

फिर तीन साल बाद अुसी विद्यार्थीसे वही सवाल पूछा ।

—अभीतक कोअी विचार नहीं हुआ ।

—विचार हुआ नहीं यानी ? लेकिन विचार किया था क्या ?

—नहीं साहब, विचार किया ही नहीं । क्या विचार करें ? कुछ सूझता नहीं । पर अभी डेढ़ वरस बाकी है । आगे देखा जाअेगा ।

—आगे देखा जाअेगा—यह वे ही शब्द हैं जो तीन वर्ष पहले कहे गअे थे । पर पहलेकी आवाजमें बेफिक्री थी । आजकी आवाजमें थोड़ी चिन्ताकी झलक थी ।

फिर डेढ़ वर्ष बाद अुसी प्रश्नकर्ताने अुसी विद्यार्थीसे अथवा कहो अब 'गृहस्थ' से वही प्रश्न पूछा । अिस बार चेहरा चिन्ताक्रान्त था । आवाजकी बेफिक्री बिलकुल गायब थी । 'ततः किम् ?' 'ततः किम् ?' 'ततः किम् ?' यह शंकराचार्यका पूछा हुआ सनातन सवाल अब दिमागमें कसकर चक्कर लगाने लगा था । पर पास जवाब था नहीं ।

आजकी मौत कलपर ढकेलते-ढकेलते अक दिन ऐसा आ जाता है कि उस दिन मरना ही पड़ता है। यह प्रसंग अनुपर नहीं आता जो मरने के पहले ही मर लेते हैं, जो अपना मरण आँखोंसे देखते हैं। जो मरणका अगाअ अनुभव लेते हैं उनका मरण टलता है और जो मरणके अगाअ अनुभवसे जी चुराते हैं, खींचते हैं उनकी छातीतपर मरण आ पड़ता है। सामने खम्भा है, यह बात अन्धेको उस खम्भेका छातीमें प्रत्यक्ष धक्का लगनेके बाद मालूम होती है। आँखवालेको यह खम्भा पहले ही दिखायी देता है। अतः उसका धक्का उसकी छातीको नहीं लगता।

जिन्दगीकी जिम्मेदारी कोअी निरी मौत नहीं है और मौत ही कौन ऐसी बड़ी मौत है? अनुभवके अभावमें यह सारा 'हौआ' है। जीवन-मरण दोनों आनन्दकी वस्तु होनी चाहिये। कौन पिता है जो अपने बच्चोंके लिअे परेशानीकी जिन्दगी चाहेगा? तिसपर अीश्वरके प्रेम और करुणाका कोअी पार है? वह अपने लाड़ले बच्चोंके लिअे सुखमय जीवनका निर्माण करेगा कि परेशानी और झंझटोंसे भरा जीवन रचेगा! कल्पनाकी क्या आवश्यकता है, प्रत्यक्ष ही देखिये न? हमारे लिअे जो चीज जितनी जरूरी है उसके अुतनी ही सुलभतासे मिलनेका अिन्तजाम अीश्वरकी ओरसे है। पानीसे हवा ज्यादा जरूरी है तो अीश्वरने पानीसे हवाको अधिक सुलभ किया है। जहाँ नाक है वहाँ हवा मौजूद है। पानीसे अन्नकी जरूरत कम होनेकी वजहसे पानी प्राप्त करनेकी बनस्बत अन्न प्राप्त करनेमें अधिक परिश्रम करना पड़ता है। 'आत्मा' सबसे अधिक महत्वकी वस्तु होनेके कारण

वह हर अंकको हमेशाके लिये दे डाली है। अश्वरकी असी प्रेम-पूर्ण योजना है। असका खयाल न करके हम निकम्मे जड़ जवाहरात जमा करके-जितने जड़ बन जायें तो तकलीफ हमें होगी ही। पर यह हमारी जड़ताका दोष है, अश्वरका नहीं।

जिन्दगीकी जिम्मेदारी कोअी डरावनी चीज नहीं है, वह आनन्दसे ओतप्रोत है, बशर्ते कि अश्वरकी रची हुअी जीवनकी सरल योजनाको ध्यानमें रखते हुअे अनुपयुक्त वासनाओंको दबाकर रखा जाअे। पर जैसे वह आनन्दसे भरी हुअी वस्तु है वैसे ही शिक्पासे भी भरपूर है। यह पक्की बात समझनी चाहिये कि जो जिन्दगीकी जिम्मेदारीसे वंचित हुआ वह सारे शिक्षणका फल गँवा बैठा। बहुतोंकी धारणा है कि बचपनसे ही जिन्दगीकी जिम्मेदारीका खयाल अगर बच्चोंमें पैदा हो जाअे तो जीवन कुम्हला जाअेगा। पर जिन्दगीकी जिम्मेदारीका भान होनेसे अगर जीवन कुम्हलाता हो तो फिर वह जीवन-वस्तु ही रहने लायक नहीं है। पर आज यह धारणा बहुतेरे शिक्षण-शास्त्रियोंकी भी है और असका मुख्य कारण है जीवनके विषयमें दुष्ट कल्पना। जीवन मानी कलह, यह मान लेना। असप-नीतिके अरसिक माने हुअे परन्तु वास्तविक मर्मको समझनेवालेको मुर्गेसे सीख लेकर ज्वारके दानोंकी अपेक्षा मोतियोंको मान देना छोड़ दिया तो जीवनके अन्दरका कलह जाता रहेगा और जीवनमें सहकार दाखिल हो जाअेगा। बन्दरके हाथमें मोतियोंकी माला (मरकट भूषण अंग) यह कहावत जिन्होंने गढ़ी है अुन्होंने मनुष्यका मनुष्यत्व सिद्ध न करके मनुष्यके पूर्वजोंके सम्बन्धमें डार्विनका सिद्धान्त ही सिद्ध किया है। 'हनुमानके हाथमें

मोतियोंकी माला ' वाली कहावत जिन्होंने रची वे अपने मनुष्यत्वके प्रति वफादार रहे ।

जीवन अगर भयानक वस्तु हो, कलह हो तो बच्चोंको उसमें दाखिल मत करो और खुद भी मत जियो । पर वह अगर जीने लायक वस्तु हो तो लड़कोंको उसमें जरूर दाखिल करो । बिना उसके अन्हें शिक्षण नहीं मिलनेका । भगवद्गीता जैसे कुरुक्षेत्रमें कही गयी वैसे शिक्षा जीवन-क्षेत्रमें देनी चाहिये— दी जा सकती है । ' दी जा सकती है ' यह भाषा भी ठीक नहीं है । वहीं वह मिल सकती है ।

अर्जुनके सामने प्रत्यक्ष कर्तव्य करते हुये सवाल पैदा हुआ । उसका उत्तर देनेके लिये भगवद्गीता निर्मित हुयी । इसीका नाम शिक्षा है । बच्चोंको खेतमें काम करने दो । वहाँ कोयी सवाल पैदा हो तो उसका उत्तर देनेके लिये सृष्टि-शास्त्र अथवा पदार्थ-विज्ञानकी या दूसरी जिस चीजकी जरूरत हो उसका ज्ञान दो । यह सच्चा शिक्षण होगा । बच्चोंको रसोयी बनाने दो । उसमें जहाँ जरूरत हो पाक-शास्त्र सिखाओ । पर असली बात यह है कि उनको "जीवन जीने दो" । व्यवहारमें काम करनेवाले आदमीको भी शिक्षण मिलता ही रहता है । वैसे ही छोटे बच्चोंको भी मिले । भेद अतना ही होगा कि बच्चोंके आस-पास जरूरतके अनुसार मार्ग-दर्शन करनेवाले मनुष्य मौजूद हों । वह आदमी भी 'सिखानेवाले' बनकर नियुक्त नहीं होंगे । वे भी 'जीवन जीनेवाले' हों, जैसे व्यवहारमें आदमी जीवन जीते हैं । अन्तर अतना ही है कि अिन 'शिक्षक' कहलानेवालोंका जीवन

विचारमय होगा, उसके विचार मौकेपर बच्चेको समझाकर बतानेकी योग्यता उनमें होगी। पर 'शिक्षक' नामके किसी स्वतन्त्र धन्धेकी जरूरत नहीं है, न 'विद्यार्थी' नामके मनुष्य-कोटिसे बाहरके किसी प्राणीकी। और 'क्या करते हो' पूछनेपर 'पढ़ता हूँ' या 'पढ़ाता हूँ' ऐसे जवाबकी जरूरत नहीं है। 'खेती करता हूँ' अथवा 'बुनता हूँ' ऐसा शब्द पेशेवर कहिये, व्यावहारिक कहिये। पर जीवनके भीतरसे उत्तर आना चाहिये। उसके लिये विद्यार्थीका अुदाहरण राम-लक्ष्मणका और गुरुका अुदाहरण विश्वा मित्रका लेना चाहिये। विश्वामित्र यज्ञ करते थे। उसकी रक्षाके लिये अुन्होंने दशरथसे लड़कोंकी याचना की। उसी कामके लिये दशरथने लड़कोंको भेजा। लड़कोंमें भी यह जिम्मेदारीकी भावना थी कि हम यज्ञ-रक्षाके 'काम' के लिये जाते हैं। उसमें अुन्हें अपूर्व शिक्षा मिली। पर यह बताना हो कि राम-लक्ष्मणने क्या किया, तो कहना होगा कि 'यज्ञ-रक्षा की', 'शिक्षा प्राप्त की' नहीं कहा जायेगा। पर शिक्षा अुन्हें मिली, जो मिलनी ही थी !

शिक्षा कर्तव्य-कर्मका आनुषंगिक फल है। जो कोअी कर्तव्य करता है, उसे जाने-अनजाने वह मिलता ही है। लड़कोंको भी वह उसी तरह मिलना चाहिये। औरोंको वह ठोकरें खा खाकर मिलता है। छोटे लड़कोंमें आज अुतनी शक्ति नहीं आअी है, असलिये अुनके आसपास अैसा वातावरण बनाना चाहिये कि वे बहुत ठोकरें न खाने पाअें और धीरे-धीरे वे स्वालम्बी बनें अैसी अपेक्षा और योजना होनी चाहिये। शिक्षा फल है। और 'मा फलेषु कदाचन' यह मर्यादा अिस फलके लिये भी लागू है। खास शिक्षाके लिये कोअी कर्म करना यह भी सकाम हुआ—

और अुसमें भी 'अदमद्य मया लब्धम्'—आज मैंने यह पाया, 'अदं प्राप्स्ये'—कल वह पाऊंगा, अित्यादि वासनाओं आती ही हैं। असलिये अस 'शिक्षा-मोह' से छूटना चाहिये। अस मोहसे जो छूटा, अुसे सर्वोत्तम शिक्षा मिली समझनी चाहिये। माँ बीमार है, अुसकी सेवा करनेमें मुझे खूब शिक्षा मिलेगी। पर अस शिक्षाके लोभसे मुझे माताकी सेवा नहीं करनी है। वह तो मेरा पवित्र कर्तव्य है, अस भावनासे मुझे माताकी सेवा करनी चाहिये। अथवा माता बीमार है और अुसकी सेवा करनेसे मेरी दूसरी चीज—जिसे मैं 'शिक्षा' समझता हूँ वह—जाती है तो अस शिक्षाके नष्ट होनेके डरसे मुझे माताकी सेवा नहीं टालनी चाहिये।

प्राथमिक महत्वके जीवनोपयोगी परिश्रमको शिक्षामें स्थान मिलना चाहिये। कुछ शिक्षा-शास्त्रियोंका असपर यह कहना है कि ये परिश्रम शिक्षाकी दृष्टिसे ही दाखिल किये जायें; पेट भरनेकी दृष्टिसे नहीं। आज 'पेट भरनेका' जो विकृत अर्थ प्रचलित है, अुससे घबड़ाकर यह कहा जाता है और अुस हदतक वह ठीक है। पर मनुष्यको 'पेट' देनेमें अीश्वरका हेतु है। अीमानदारीसे 'पेट भरना' अगर मनुष्य साध ले तो समाजके बहुतेरे दुख और पातक नष्ट ही हो जायें। अससे मनुने 'योऽर्थशुचिः'—जो आर्थिक दृष्टिसे पवित्र है, वही पवित्र है, यह अुद्गार प्रकट किया है। 'सर्वेषामविरोधेन' कैसे जिअें, अस शिक्षामें सारा सीखना सभा जाता है। अविरोधवृत्तिसे शरीर-यात्रा करना मनुष्यका प्रथम कर्तव्य है। यह कर्तव्य करनेसे ही

अुसकी आध्यात्मिक अुन्नति होगी । अिसीसे शरीर-यात्राके लिये अुपयोगी परिश्रम करनेको ही शास्त्रकारोंने 'यज्ञ' नाम दिया है । 'अुदर-भरण नोहे जाणजे यज्ञकर्म'—यह अुदर-भरण नहीं है अिसे यज्ञ-कर्म जान । वामन पण्डितका यह वचन प्रसिद्ध है । अतः में शरीर-यात्राके लिये परिश्रम करता हूँ, यह भावना अुचित है । शरीर-यात्रासे मतलब अपने साढ़े तीन हाथके शरीरकी यात्रा न समझकर समाज-शरीरकी यात्रा यह अुदार अर्थ मनमें बैठाना चाहिये । मेरी शरीर-यात्रा अर्थात् समाजकी सेवा और अिसीलिये अीश्वरकी पूजा अितना समीकरण दृढ़ होना चाहिये । यह भावना हर अेकमें होनी चाहिये । अिसलिये वह छोटे वच्चोंमें भी होनी चाहिये । अिसके लिये अुनकी शक्तिभर अुन्हें जीवनमें भाग लेनेका मौका देना चाहिये और जीवनको मुख्य केन्द्र बनाकर अुसके आसपास आवश्यकतानुसार सारे शिक्षणकी रचना करनी चाहिये ।

अिससे जीवनके दो खण्ड न होंगे । जीवनकी जिम्मेदारी अचानक आ पड़नेसे अुत्पन्न होनेवाली कठिनायी पैदा न होगी । अनजाने शिक्षा मिलती रहेगी पर सीखनेका मोह नहीं चिपकेगा और निष्काम कर्मकी ओर प्रवृत्ति होगी ।

४.

कुत्ते

* * *

—श्री अ०. अ०. ब०. ब०.

श्री अ०. एम. बुखारी

अर्दूके हास्य-रसके प्रसिद्ध लेखक श्री बुखारीकी शैलीमें लोच और सौन्दर्य है। आपके व्यंग्य बड़े चुटीले और हृदयपर प्रभाव डालनेवाले होते हैं। सीधी-सादी भाषामें आप वर्तमान समस्याओंपर ऐसी चुभती फब्तरियाँ कस देते हैं, जिनके तीव्र कशाघातसे प्राण मानो तिलमिला अुठते हैं। आपके हास्यमें अेक श्लिष्ट व्यंग्य रहता है, जो हृदय-पटलपर गहरा चिन्ह छोड़ जाता है।

रचनाअें—कअी सामयिक निबन्ध।

* * *

विषय-वस्तु—

पशुओंमें कुत्ता अपनी स्वामिभक्ति और चौकीदारीके लिये प्रसिद्ध है। चौकीदारीकी असकी सफलताका रहस्य है जरासा भी खटका होते ही जाग पड़ने और भूंकने लगनेका असका गुण। और फिर अके कुत्ता भूंककर सारे कुत्तोंको जागरूक करके वह हंगामा मचवा देता है कि जिससे सर्व साधारण मनुष्यकी सोचनेकी तमाम शक्ति गायब हो जाती है।

भिन्न-भिन्न स्थानोंपर भिन्न-भिन्न अवस्थाओंमें, भिन्न-भिन्न समयपर लेखकको कुत्तों द्वारा जो अनुभव प्राप्त हुए हैं उनका अत्यन्त रोचक शैलीमें प्रस्तुत निबन्धमें वर्णन किया गया है।

* * *

कुत्ते

पशु-विज्ञानके प्रोफेसरोंसे पूछा, सालोत्तरियोंसे दरियाफ्त किया, सिर खपाते रहे; लेकिन कभी समझमें ही न आया कि आखिर कुत्तोंसे फायदा क्या है? गायको लीजिअे, दूध देती है; बकरीको लीजिअे, दूध देती है; ये कुत्ते क्या करते हैं? अब जनाब वफादारी अगर अिसीका नाम है कि शामको सात बजेसे जो भूंकना शुरू किया तो लगातार बिना दम लिअे सुबहके छह बजे तक भूंकते चले गअे, तो हम लँडूरे ही भले।

कल-ही-की बात है कि रातको कोअी ग्यारह बजे अेक कुत्तेकी तबीयत जो जरा गुदगुदाअी तो अुसने बाहर सड़कपर आकर, मानो पूर्तिके लिअे अेक समस्या ही दे डाली। अेक-आध मिनट बाद सामनेसे बँगलेके कुत्तेने अुसे दुहरा दिया। अब जनाब, अेक पुराने अभ्यस्त अुस्तादको जो गुस्सा आया, तो अेक हलवाअीकी भट्ठीसे बाहर लपका और भन्नाके अुसकी पूर्ति कर डाली। अिसपर अुत्तर-पूरबकी ओरसे अेक मर्मज्ञ कुत्तेने जोरसे दाद दी। अब तो मुशायरा वह गरम हुआ कि कुछ न पूछिअे! कम्बस्त बाज-बाज तो लम्बे-लम्बे कवित्त और छप्पय जोड़कर सुना गअे! वह हंगामा गरम हुआ कि ठण्डा होने ही न आता था। हमने खिड़कीसे हजारों दफा

‘आर्डर-आर्डर’ पुकारा, लेकिन जैसे मौकोंपर सभापतिकी भी कोअी कभी सुनता है? अब अनसे कोअी पूछे कि मियाँ, तुम्हें असा जरूरी मुशायरा करना था तो दरियाके किनारे खुली हवामें जाकर अपनी प्रतिभा दिखाते। घरोंके बीचमें आकर सोतोंको सताना कौन-सी शराफत है?

फिर हम देशी लोगोंके कुत्ते भी कुछ अजीब बदतमीज होते हैं। अक्सर तो अनमें जैसे देशभक्त होते हैं कि कोट-पतलून देखते ही भूंकने लग जाते हैं। खैर, यह तो अक हदतक तारीफके लायक भी है। असका जिफ्र ही जाने दीजिअे।

असके सिवाय अक और बात है। हमें बहुत बार डालियाँ लेकर साहब लोगोंके बँगलोंपर जानेका मौका आया है। खुदाकी कसम, साहबोंके कुत्तोंमें वह सभ्यता देखी कि वाह-वाह करके लौटे। ज्यों ही बँगलेके फाटकमें दाखिल हुअे, त्यों ही कुत्तेने बरामदेमें ही खड़े-खड़े अक हल्की-सी बख कर दी और वह फिर मुंह बन्द करके खड़ा हो गया। हम आगे बढ़े, तो असने भी चार कदम आगे बढ़कर अक नाजुक और पाक आवाजमें फिर बख कर दी। चौकीदारीकी चौकीदारी और संगीतका संगीत। अघर हमारे कुत्ते हैं कि न राग, न सुर, न सिर, न पैर। तान-पर-तान लगाअे जाते हैं, बेताल कहींके। न मौका देखते हैं, न वक्त पहचानते हैं। गलेबाजी किअे चले जाते हैं। घमंड अस बातका है कि तानसेन असी मुल्कमें तो पैदा हुअे थे।

असमें सन्देह नहीं कि कुत्तोंसे हमारा सम्बन्ध जरा खिचा हुआ-सा रहा है; लेकिन हमसे कसम ले लीजिअे, जो जैसे मौकोंपर

हमने कभी अहिंसा छोड़कर सत्याग्रहसे मुँह मोड़ा हो। शायद अिसे आप झूठ समझें ; लेकिन खुदा गवाह है कि आजतक भी किसी कुत्तेपर हाथ अुठ ही न सका। अगरचे दोस्तोंने सलाह दी कि रातके वक्त लाठी या छड़ी जरूर हाथमें रखनी चाहिअे क्योंकि वह बिल्लियोंको दूर रखती है; परन्तु, हम किसीसे यों ही बैर मोल लेना नहीं चाहते। कुत्तेके भूँकते ही हमारी स्वाभाविक शिष्टता हमपर अितना अधिकार कर लेती है कि अगर आप हमें अुस वक्त देखें, तो सचमुच यही समझेंगे कि हम डरपोक हैं। शायद अुस वक्त आप यह भी अनुमान कर लें कि हमारा गला सूखा जाता है। यह अलबत्ता ठीक है। अैसे मौकेपर यदि मैं गानेकी कोशिश करूँ तो षड्जके सुरोंके सिवा और कुछ नहीं निकलता। अगर आपने भी हमारी जैसी तबीयत पाअी हो, तो आप देखेंगे कि अैसे मौकेपर अीश्वरकी सर्वव्यापकता आपकी समझसे दूर हो जाअेगी और अुसकी जगह आप शायद मार्ग-प्रदर्शनकी प्रार्थना पढ़ने लग जाअेंगे।

कभी-कभी अैसा प्रसंग आया है कि रातके दो बजे छड़ी घुमाते थिअेटरसे वापस आ रहे हैं और नाटकके किसी-न-किसी गीतकी तर्ज बुद्धिमें बिठानेकी कोशिश कर रहे हैं। चूँकि गीतके शब्द याद नहीं हैं और नअे अभ्यासका जमाना भी है, अिसलिलअे सीटीपर ही सन्तोष किया है। अगर बेसुरे भी हैं तो सुननेवालेने यही समझा कि यह अँग्रेजी संगीत है। अितनेमें अेक मोड़पर जो मुड़े तो सामने अेक बकरी बँधी है। जरा मेरी कल्पनाको तो देखिअे, मैंने अुसे भी कुत्ता समझा। अेक तो कुत्ता, दूसरे बकरीके बराबर लम्बा-चौड़ा। बस, अुसे देखते ही हाथ-पाँव फूल गअे। छड़ीका

हिलना कम होते-होते हवामें अक विचित्र कोणपर जा रुका । सीटीका संगीत भी थर-थराकर मौन हो गया; लेकिन क्या मजाल कि हमारी थूथनीकी तराशी हुअी सूरतमें जरा भी फर्क आया हो । मालूम होता था कि बे-आवाज लय अभी तक निकल रही है । डाक्टरोंका सिद्धान्त है कि जैसे मौकेपर अगर सर्दीके मौसममें भी पसीना आ जाअे तो कोअी हर्ज नहीं । बादमें फिर सूख जाता है ।

चूँकि हम स्वभावसे थोड़ा सावधान रहते हैं, अिसलिये आजतक कुत्तेके काटनेका कभी अित्तिफाक नहीं हुआ—यानी किसी कुत्तेने आजतक हमें नहीं काटा । अगर अैसी दुर्घटना कभी हुअी होती, तो अिस कहानीके बदले हमारा मसिया छप रहा होता और कब्रपर प्रार्थनाकी यह तुक लिखी होती—

अिस कुत्तेकी मिट्टीसे भी कुत्ता-घास पैदा हो ।

जबतक अिस दुनियामें कुत्ते मौजूद हैं और वे भूँकनेपर तुले हुअे हैं तबतक यही समझिये कि हम कब्रमें पाँव लटकाअे बैठे हैं । फिर अिन कुत्तोंके भूँकनेके सिद्धान्त भी निराले हैं । यह अैसा छुतैल रोग है, जो बच्चे, जवान, बूढ़े सभीको होता है । अगर कोअी खुराट सिकन्दर कुत्ता अपने रोब और दबदबेको कायम रखनेके लिये भूँक ले, तो हम भी कह दें कि अच्छा भअी, भूँक (यद्यपि अैसे समयमें अुसको जंजीरसे बँधा होना चाहिये), लेकिन ये कम्बख्त तो दो-दो बरसकी अुम्रके, दो-दो तीन-तीन तोलेके पिल्ले भी तो भूँकनेसे बाज नहीं आते ! बारीक आवाज, जरा-सा फेफड़ा, अुसपर भी अितना जोर लगाकर भूँकते हैं कि आवाजकी थर्राहट दुमतक पहुँचती है । फिर भूँकते हैं चलती मोटरके सामने आकर,

मानो उसे रोक ही तो लेंगे ! अब अगर मैं मोटर चला रहा होऊँ तो निश्चय ही हाथ काम करनेसे अिनकार कर देंगे, लेकिन हर कोअी तो यों अुनकी जान नही बचा देगा ।

कुत्तोंके भूँकनेपर मुझे सबसे बड़ा अंतराज यह है कि अुनकी आवाज सोचनेकी तमाम शक्तियोंको गायब कर देती है । खास तौरपर तब, जब किसी दूकानके तख्तेके नीचेसे अुनका अेक पूरा गुप्त अधिवेशन सड़कपर आकर अपना काम शुरू कर दे । तब आपही कहिये कि भला होश ठिकाने रह सकते हैं ? हर अेककी तरफ बारी-बारीसे ध्यान देना पड़ता है । कुछ तो अुनका शोर और कुछ अुनकी विचार-धाराकी आवाज (ओंठोंके भीतर ही) ; बेढंगी हरकतें और निश्चलता (हरकतें अुनकी और निश्चलता हमारी) अिस हंगामेमें दिमाग भला खाक काम कर सकता है ? यद्यपि यह मुझे भी नहीं मालूम कि अैसे मौकेपर अगर दिमाग काम करे भी तो क्या तीर मारेगा ! कुत्तोंका यह परले सिरका अन्याय मेरे नजदीक हमेशा घृणाके योग्य रहा है । अगर अुनका कोअी प्रतिनिधि शिष्टताके साथ आकर हमसे कह दे, 'महाशय, सड़क बन्द है', तो खुदाकी कसम बिना कुछ चीं-चप्पड़ किअे वापस लौट जाअें । और यह कोअी नअी बात नहीं, हमने कुत्तोंके निवेदन पर कअी रातें सड़क नापनेमें बिता दी हैं । लेकिन पूरी-की-पूरी सभाका यों अेक मतसे, सम्मिलित रायसे, सीनाजोरी करना बड़ी भारी भूल है । कुत्ते भी अिस व्यापक नियमके अपवाद नहीं हैं । आपने अीश्वरसे डरनेवाला कुत्ता भी जरूर देखा होगा । प्रायः अुसके शरीरपर तपस्याके चिन्ह दीख पड़ते हैं । जब चलता है, तो अैसी विनम्रता और लाचारीसे मानों पापोंके भारका ज्ञान

आँख अुठाने नहीं देता । दुम अक्सर पेटके साथ लगी होती ह । वह सड़कके बीचोंबीच आत्मचिन्तनके लिअ लेटकर आँखें बन्द कर लेता है । सूरत बिलकुल दार्शनिकों—फिलासफरों—से मिलती है । किसी गाड़ीवालेने लगातार बिगुल बजाया, गाड़ीके भिन्न-भिन्न हिस्सोंको खटखटाया, लोगोंसे कहलवाया, खुद दस बारह-बार आवाजें दीं, तो आपने सिरको वहीं जमीनपर रखे-रखे लाल मस्तीभरी आँखोंको खोल, परिस्थितिपर अेक नजर डाली और फिर आँखें बन्द कर लीं । किसीने अेक चाबुक लगा दिया, तो आप पूरे अितमीनानके साथ वहाँसे अुठकर अेक गजपर जा लेटे और विचार-धाराके सिलसिलेको जहाँसे वह टूट गया था वहीसे फिर शुरू कर दिया । किसी बाअिसिकलवालेने घंटी बजायी तो लेटे-ही-लेटे समझ गअे कि बाअिसिकल है । अैसी छिछोरी चीजोंके लिअ रास्ता छोड़ देना वे फकीरी शानके खिलाफ समझते हैं ।

रातके वक्त यही कुत्ता अपनी सूखी पतली-सी दुमको जहाँ तक सम्भव हो सकता है, सड़कपर फैलाकर रखता है । अुससे अुसे केवल अीश्वरके चुने हुअे सेवकोंकी पहचानकी अिच्छा होती है । जहाँ आपने गलतीसे अुसपर पाँव रख दिया, अुसने गुस्सेके लहजेमें आपसे शिकायत शुरू कर दी, बच्चा फकीरोंको छेड़ता है । दिखायी नहीं देता कि हम साधु लोग यहाँ बैठे हैं ? बस, अिस साधुकी दुराशीषसे अुसी वक्त रोंगटे खड़े होना शुरू हो जाते हैं । बादमें कअी रातोंतक यही सपने दिखायी देते रहते हैं कि बेशुमार कुत्ते टाँगोंसे लिपटे हैं और जाने नहीं देते । आँख

खुलती है, तो देखते हैं कि पाँव चारपायीकी अदवानमें फँसे हुअे हैं।

अगर खुदा मुझे कुछ दिनके लिये इस जातिकी भाँति भूँकने और काटनेकी ताकत दे तो बदला लेनेका अनुमाद मेरे पास पर्याप्त मात्रामें मौजूद है। धीरे-धीरे सब कुत्ते कसौली पहुँच जायें। फारसीके अेक कविने कहा है—हे अुरफी, तू अपने प्रतिद्वन्द्वियोंकी चिल्ल-पोंका अन्देशा न कर। क्योंकि कुत्तोंके भूँकनेसे फकीरोंको जो मिलना होता है उसमें कमी नहीं होती। मतलब यह है कि कुत्ते भूँकते रहते हैं और लोग अपनी राह चले जाते हैं।

यही प्रकृतिसे विरुद्ध कविता है, जो अेशियाकी अवनतिका कारण है। अँग्रेजी कहावत है—भूँकते हुअे कुत्ते काटा नहीं करते। यह सही है, लेकिन कौन जानता है कि अेक भूँकता हुआ कुत्ता कब भूँकना बन्द कर दे और काटना शुरू कर दे !

* * *

५.

जीनेकी कला

* * *

—सुश्री महादेवी वर्मा

सुश्री महादेवी वर्मा

सुश्री महादेवी वर्माका जन्म ओस्वी सन १९०७ में फर्रुखाबाद (अ. प्र.) में हुआ। अपने वैवाहिक जीवनके पश्चात् ही आपने क्रमशः मिडिल, अर्टेंस पास करते हुए २२ वर्षकी अवस्थामे बी. ए. किया। तीन वर्ष बाद आपने संस्कृतमें एम. ए. की परीक्षा भी अुत्तीर्ण कर ली। अब कअी वर्षोंसे आप प्रयाग-महिला-विद्यापीठकी प्रिंसिपाल हैं।

महादेवीजीने 'अतीतके चलचित्र' और 'स्मृतिकी रेखाएं' में समाजके अपेक्षित और अभाव तथा अत्याचारमे जर्जर व्यक्तियोंके अत्यन्त मार्मिक संस्मरण प्रस्तुत किये हैं। समाजमें महत्वहीन समझे जानेवाले व्यक्तियोंके जीवनकी महत्ता, अुनका दुख-दर्द, नारीके साधनामय करुण जीवन आदिका अिन रचनाओंमें अनूठा चित्रण हुआ है। समाजके पीड़ित अपेक्षित, अभाव-ग्रस्त व्यक्तियोंके अत्यन्त मार्मिक संस्मरणात्मक चित्र दिये गये हैं। शैलीकी दृष्टिसे महादेवीजीका गद्य छायावादी कविताके गुणोंसे अलंकृत है। विनोद-पूर्ण बातें कहते हुए चुटीले सामाजिक व्यंग करना और कहीं करुणाकी भावनासे अभिभूत कर लेना महादेवीजीकी अेक विशेषता है। अिन रचनाओंमे कहानीकी साकांक्षता, काव्यकी भावमयता और चित्र-कलाका चित्रण-कौशल है। लेखिकाका सहानुभूतिपूर्ण व्यक्तित्व और अत्याचारी पुरुष-समाजके प्रति अुसकी विद्रोह-भावना नाना रंगोंमें प्रगट हुअी है।

'शृंखलाकी कड़ियाँ' के नारी-जीवन-सम्बन्धी मार्मिक और विचारो-त्तेजक आपके सामाजिक निबन्ध अपना अलग स्थान अेवं मूल्य रखते हैं।

मुख्य रचनाअें—

कविता—नीहार, रश्मि, नीरजा. सान्ध्यगीत, दीपशिखा।

गद्य—अतीतके चलचित्र, शृंखलाकी कड़ियाँ, स्मृतिकी रेखाअें।

विषय-वस्तु—

सफलतापूर्वक जीवन बितानेकी भी अेक कला है । अिसीको 'जीनेकी कला' कहते हैं । जिस आदमीने जीनेकी कलामे निपुणता प्राप्त कर ली वह सफल जीवन व्यतीत कर सकता है । अिस कलाका मर्म यही है कि जीनेकी कलामें जिन सिद्धान्तोंको आवश्यक समझा गया है, अुन्हें हम केवल सिद्धान्त रूपमें ही न जानें वरन अुनके वास्तविक अर्थको समझकर अुन्हें अुपयोगमें भी लाअें । यह भी समझें कि किन सिद्धान्तोंका किन परिस्थितियोंमें कहाँ कैसा अुपयोग लाभप्रद होगा ।

अिसी 'जीनेकी कला' की जानकारीके अभावमें भारतीय समाजमें नारोको दशा कितनी दीन हो गअी है अिसे भिन्न-भिन्न अुदाहरणों द्वारा विद्वान लेखिकाने अिस निबन्धमें अत्यन्त गम्भीरतापूर्ण शैलीमें दर्शाया है ।

* * *

जीनेकी कला

प्रत्येक कार्यके प्रतिपादन तथा प्रत्येक वस्तुके निर्माणमें दो आवश्यक अंग हैं—तद्विषयक विज्ञानका क्रियात्मक प्रयोग । बिना अेकके दूसरा अंग अपूर्ण ही रहेगा, क्योंकि बिना प्रयोगके ज्ञान प्रमाणहीन है और बिना ज्ञानके प्रयोग आधारहीन । अतः प्रत्येक विज्ञानमें क्रियात्मक कलाका कुछ अंश अवश्य रहता है और प्रत्येक क्रियात्मक कला भी अपने विज्ञान विशेषकी अनुगामिनी बनकर ही सफल होती है । ये दोनों अितने सापेक्ष हैं कि अेकको जाननेमें दूसरेको जानना ही पड़ता है ।

यदि हम रंग और अुनके मिश्रणके विषयमें जान लें, तूलिका आदिके विषयमें सब कुछ समझ लें, परन्तु कभी असि ज्ञानको प्रयोगकी कसौटीपर न कसें तो हमारा चित्रकला-विषयक ज्ञान परीक्षणके बिना अपूर्ण ही रह जाऐगा । असिी प्रकार यदि हम असि ज्ञानके बिना ही अेकाअेक रंग भरनेका प्रयत्न करने लगे तो हमारा यह प्रयास भी असफल ही कहा जाऐगा । चित्रकलाकी पूर्णताके लिये और सफल चित्रकार बननेके लिये हमें तत्सम्बन्धी ज्ञातव्यको जानकर प्रयोगमें लाना ही होगा । यही अन्य कलाओंके लिये भी सत्य सिद्ध होगा ।

यदि हम ध्यानसे देखें तो संसारमें जीना भी ऐसी कला जान पड़ेगी जिसमें अपर्युक्त दोनों साधनोंका होना अनिवार्य है। सामूहिक तथा व्यक्तिगत विकासके लिये कुछ सिद्धान्तोंका ज्ञान जितना आवश्यक है, उतना ही या उससे भी कुछ अधिक आवश्यक उन सिद्धान्तोंका उचित अवसरपर अपर्युक्त प्रयोग भी समझा जाना चाहिये। यदि हम ऐसे सिद्धान्तोंका भार जन्मभर ढोते रहें जिनका अपर्युक्त प्रयोग हमें ज्ञात न हो तो हमारी दशा उस पशुसे भिन्न न होगी जिसको बिना जाने ही शास्त्रों और धर्मग्रन्थोंका भार वहन करना पड़ता हो। इस प्रकार यदि हम बिना सिद्धान्त समझे उनका अनुपर्युक्त प्रयोग करते रहें, तो हमारी क्रिया बिना अर्थ समझे मन्त्रपाठी शुक्की वाणीके समान निरर्थक हो उठेगी।

हमारे संस्कारोंमें जीवनके लिये आवश्यक सिद्धान्त ऐसे सूत्र रूपमें समा जाते हैं, जो प्रयोग रूपी टीकाके बिना न स्पष्ट हो पाते हैं और न अपर्योगी। 'सत्यं ब्रूयात्' को हम सिद्धान्त रूपसे जानकर न अपना विकास कर सकते हैं और न समाजका उपकार, जबतक अनेक परिस्थितियों, विभिन्न स्थानों और विशेष कालोंमें उसका प्रयोग कर उसके वास्तविक अर्थको न समझ लें—उसके यथार्थ रूपको हृदयंगम न कर लें।

एक निर्दोषके प्राण बचानेवाला असत्य उसकी हिंसाका कारण बननेवाले सत्यसे श्रेष्ठ ही रहेगा, एक क्रूर स्वामीकी अन्याय-पूर्ण आज्ञाको पालन करनेवाले सेवकसे उसका विरोध करनेवाला अधिक स्वामिभक्त कहलायेगा और दुर्बलपर अन्याय करनेवाले अत्याचारीको क्षमा कर देनेवाले क्रोधजितसे उसे दण्ड देनेवाला

क्रोधी संसारका अधिक उपकार कर सकेगा । अन्य सिद्धान्तोंके लिखे भी यही सत्य है और रहेगा ।

सिद्धान्तोंकी जितनी भारी गठरी लेकर हम अपने कर्मक्षेत्रके द्वारतक पहुँचते हैं, अतना भारी बोझ लेकर कदाचित ही किसी अन्य देशके व्यक्तिको पहुँचना पड़ता हो, परन्तु फिर भी कार्यक्षेत्रमें हमीं सबसे अधिक निष्क्रिय प्रमाणित होंगे, कारण, हम अपने सिद्धान्तोंको अपुयोगसे बचा-बचाकर उसी प्रकार रखनेमें अहृश्यकी सिद्धि समझ लेते हैं, जिस प्रकार धनको व्ययसे बचा रखनेवाले कृषक उसके संचयमें ही अपने अद्योगकी चरम सफलता देख लेते हैं ।

परिस्थिति, काल और स्थानके अनुसार अनुके प्रयोग तथा रूपोंके विषयमें जाननेका न हमें अवकाश है न अिच्छा । फल यह हुआ कि हमारा जीवन अपूर्ण वस्तुओंमें सबसे अधिक अपूर्व होनेका दुर्भाग्य मात्र प्राप्त कर सका ।

आज तो जीनेकी कला न जाननेका अभिशाप देश-व्यापक है, परन्तु विशेष रूपसे स्त्रियोंने अिस अभिशापके कारण जो कुछ सहा है अुसे सहकर जीवित रहनेका अभिशाप करनेवाले बिरले ही मिलेंगे । यह सत्य है कि हमारे देशमें व्यक्तिको अितना महत्व दिया गया था कि कहीं-कहीं हमें अुसके विकासके साधन भी अेक विचित्र बन्धन जैसे लगने लगते हैं । परन्तु यह कहना अन्याय होगा कि अनु प्राचीन युगके निवासियोंने व्यक्तिगत विकासको दृष्टिबिन्दु बनाकर सामूहिक या सामाजिक विकासको अेक क्षणके लिखे भी दृष्टिसे ओझल न होने दिया । अनुका जीवन-विषयक ज्ञान कितनी वैयक्तिक किन्तु व्यापक, स्थिर किन्तु प्रत्येक परिस्थितिके अनुकूल

और अेक किन्तु सामूहिक था, असका प्रमाण हमें अुन सिद्धान्तोंमें मिल जाता है जिनके आकर्षणसे हम अपनी अज्ञानावस्थामें भी नहीं छूट पाते और अस ज्ञानका अुन्होंने कैसे अुपयुक्त तथा प्रगतिशील प्रयोग किया, यह समाजके निर्माण और व्यक्तिके जीवनके पूर्ण विकासको दृष्टिमें रखकर खोजे गअे साधनोंसे स्पष्ट हो जाता है । यदि हम शताब्दियोंसे केवल सिद्धान्तोंका निर्जीव भार लिये हुअे शिथिल हो रहे हैं तो असमें हमारा और हमारी परिस्थितियोंका दोष है । यदि हम अपने जीवनको सजीव और सक्रिय बनाना चाहते, अपनी विशेष परिस्थितियोंमें अुनका प्रयोग कर अुनकी अुनुकूलता-प्रतिकूलता, अुपयुक्तता-अुनुपयुक्तताका निश्चय कर लेते और जीवनके ज्ञान और अुसके क्रियात्मक प्रवाहको साथ बहने देते तो अवश्य ही हमारा जीवन अुत्कृष्ट कलाका निदर्शन होता ।

हमने जीवनको अुचित कार्यसे विरत कर अुसीके व्यवस्थापक नियमोंको अपने पैरकी बेड़ियाँ बनाकर अुन्हें भी भारी बना डाला, अतःआज यदि लक्ष्यतक पहुँचनेकी अिच्छा भी भूल गअे तो आश्चर्य ही क्यों होना चाहिये ।

अिस समय भारतीय नारीके पास अैमा कौन-सा विशिष्ट गुण नहीं है, जिसे पाकर किसी भी देशकी मानवी देवी न बन सकती हो । अुसमें अुस सहनशक्तिकी सीमा समाप्त है जिसके द्वारा मनुष्य घोर-से-घोर अग्नि-परीक्षा तक हँसते-हँसते पार कर सकता है और अपने लक्ष्यके मार्गकी बाधाओं-पर-बाधाओं देखकर नहीं सिहरता, अुसमें वह त्याग है जो मनुष्यकी कषुद्र-से-कषुद्र स्वार्थवृत्तिको कषणमें नष्ट कर डालता है और अुसे अुन्यके कल्याणार्थ अपनी आहुतिके

लिअे प्रस्तुत कर देता है, अुसमें मनुष्यको देवताकी पंक्तिमें बैठा देनेवाली वह पवित्रता है जो मरना नहीं जानती तथा अुसमें हमारी संस्कृतिका वह कोप है जिसकी किसी अन्यके द्वारा रक्पा सम्भव ही नहीं थी। वह आज भी त्यागमअी माता, पतिव्रता पत्नी, स्नेहमअी बहिन और आज्ञाकारिणी पुत्री है, जब संसारके जागृत अंशोंकी स्त्रियाँ भौतिक सुख-भोगपर अपनी युगजीर्ण संस्कृति न्यौछावर किअे दे रही है। अिन्हें त्यागके, बलिदानके और स्नेहके नामपर सब कुछ आता है, परन्तु जीनेकी वह कला नहीं आती जो अिन अलौकिक गुणोंको सजीव कर देती है।

जीर्ण-से-जीर्ण कुटीरमें बसनेवालोंमें भी कदाचित ही कोअी अैसा अभागा निर्धन होगा, जिसके अुजड़े आँगनमें अेक भी सहनशीला, त्यागमअी, ममतामअी स्त्री न हो।

स्त्री किस प्रकार अपने हृदयको चूर-चूरकर पत्थरकी देव-प्रतिमा बन सकती है, यह देखना हो तो हिन्दू गृहस्थकी, दुधमुंही बालिकासे शापमअी युवतीमें परिवर्तित होती हुआ विधवाको देखना चाहिअे जो किसी अज्ञात व्यक्तिके लिअे हृदयकी, हृदयके समान ही प्रिय अिच्छाअें कुचल-कुचल कर निर्मूल कर देती है, सतीत्व और संयमके नामपर अपने शरीर और मनको अमानुषिक यन्त्रणाओंके सहनेका अभ्यस्त बना लेती है और अिसपर भी दूसरोंके अमंगलके भयसे आँखोंमें दो बूंद जल भी अिच्छानुसार नहीं आने दे सकती। अर्धांगिनीकी विडम्बनाका भार लिअे, सीता-सावित्रीके अलौकिक तथा पवित्र आदर्शका भार अपने भेदे हुआ जीर्ण-शीर्ण स्त्रीत्वपर किसी प्रकार सम्भालकर क्रीत दासीके समान अपने मद्यप, दुराचारी तथा पशुसे भी निकृष्ट

स्वामीकी परिचर्यामें लगी हुअी और अुसके दुर्व्यवहारको सहकर भी देवताओंसे जन्म-जन्मान्तर तक अुसीका संग पानेका वरदान माँगनेवाली पत्नीको देखकर कौन आश्चर्याभिभूत न हो अुठेगा ? पिताके अंगित मात्रसे अपने जीवन-प्रभातमें देखे रंगीन स्वप्नोंको विस्मृतिसे ढँककर बिना अेक दीर्घ निश्वास लिअे अयोग्य-से-अयोग्य पुरुषका अनुगमन करनेको प्रस्तुत पुत्रीको देखकर किसका हृदय न भर आयेगा । पिताकी अट्टालिका और वैभवसे वंचित दरिद्र भगिनीको अैश्वर्यका अुपभोग करनेवाले भाअीकी कलाअीपर सरल भावसे रक्षाबन्धन बाँधते देख कौन विश्वास कर सकेगा कि अीर्ष्या भी मनुष्यका स्वाभाविक विकार है और अनेक साहसहीन निर्जीव-से पुत्रों द्वारा अुपेक्षा और अनादरसे आहत हृदय ले अुनके सुखके प्रयत्नमें लगी हुअी माताको देख कौन 'क्वचिदपि कुमाता न भवति' कहनेवालोंको स्त्री स्वभावके गम्भीर रहस्यका अन्वेषक न मान लेगा ? परन्तु अितनी अधिक सहनशक्ति, अैसा अप्रतिम त्याग और अैसा अलौकिक साहस देखकर भी देखनेवालेके हृदयमें यह प्रश्न अुठे बिना नहीं रहता कि क्या ये विभूतियाँ जीवित हैं ? यदि सजीवता न हो, विवेकके चिन्ह न हों तो अिन गुणोंका मूल्य ही क्या है । क्या हमारे कोलहूमें जुता बैल कम सहनशील है ? यन्त्रणाअें भोगता है ? शव हमारे द्वारा किअे गअे किसी अपमानका प्रतिकार नहीं कर सकता, सब प्रकारके आघात बिना हिले-डुले शान्तिसे सह सकता है, हम चाहे अुसे अतल जलमें बहाकर मगरमच्छके अुदरमें पहुँचा दें चाहे चितापर लिटाकर राख करके हवामें अुड़ा दें परन्तु अुसके मुखसे न निश्वास निकलेगी, न आह, न निरन्तर खुली पथराअी आँखोंमें

जल आयेगा, न अंग कम्पित होंगे ! परन्तु हम क्या अुमकी निष्क्रियताकी प्रशंसा कर सकेंगे ?

आज हिन्दू स्त्री शवके समान निस्पन्द है । संस्कारोंने अुसे पक्षाघातके रोगीके समान जड़ कर दिया है, अतः वह अपने सुख-दुखको चेष्टा द्वारा प्रकट करनेमें भी असमर्थ है ।

असके अतिरिक्त ऐसी सीमातीत सहिष्णुताकी प्रशंसा सुनते-सुनते वह अब अिसे अपने धर्मका आवश्यक अंग समझने लगी है ।

जीवनको पूर्ण-से-पूर्ण रूपतक विकसित कर देने योग्य सिद्धान्त अुसके पास हैं, परन्तु न अुनका परिस्थिति विशेषमें अुचित अुपयोग ही वह जानती है और न अुनका अर्थ ही समझती है, अतः जीवन और सिद्धान्त दोनों ही भार होकर अुसे वैसे ही संज्ञाहीन किअे दे रहे हैं जैसे ग्रीष्मकी कड़ी धूपमें गीतकालके भारी और गर्म वस्त्र पहिने हुअे पथिकको अुसका परिधान । जीवनको अपने साँचेमें ढालकर मुन्दर और सुडौल बनानेवाले सिद्धान्तोंने ही अपने विपरीत अुपयोगसे भार बनकर अुसके सुकुमार जीवनको अुसी प्रकार कुरूप और वामन बना डाला है जिस प्रकार हाथका सुन्दर कंगन चरणमें पहना जानेपर अुमकी वृद्धिको रोककर अुसे कुरूप बना देता है ।

हिन्दू समाजने अुसे अपनी प्राचीन गौरव-गाथाका प्रदर्शन मात्र बसाकर रख छोड़ा है और वह भी मूक निरीह भावसे अुसको वहन करती जा रही है । शताब्दियाँ बीती चली जा रही हैं, समयकी लकीरोंमें परिवर्तन-पर-परिवर्तन होते आ रहे हैं,

परिस्थितियाँ बदल रही हैं, परन्तु समाज केवल स्त्रीको, जिस अुसने दासताके अतिरिक्त और कुछ देना नहीं सीखा, प्रलय-सी अुथल-पुथलमें भी शिलाके समान स्थित देखना चाहता है। ऐसी स्थिरता मृत्युका श्रृंगार हो सकती है, जीवनका नहीं। अवश्य ही मृत्युमें भी अेक सौन्दर्य है परन्तु वह जीवनके रिक्त स्थानको तो नहीं भर सकता।

धनकी प्रभुता या पूंजीवाद जितना गर्हित है अुतना ही गर्हित रूप धर्म और अधिकारका हो सकता है, फिर अुसके विषयमें तो कहना ही व्यर्थ है कि जिसे धन, धर्म और अधिकार तीनों प्रकारकी प्रभुता प्राप्त हो चुकी है।

समाजमें अपुार्जनका अुत्तरदायित्व मिल जानेसे पुरुषको अेक प्रकारका पूंजीपतित्व तो प्राप्त हो ही गया था, शक्ति अधिक होनेके कारण अधिकार मिलना भी सहज प्राप्य हो गया। अिसके अतिरिक्त वह अपने आपको अधिक-से-अधिक स्वच्छन्द और स्त्रीको कठिन-से-कठिन बन्धनमें रखनेमें समर्थ हो सका।

धीरे-धीरे बनते-बनते स्त्रीको बाँध रखनेका सामाजिक, धार्मिक तथा आर्थिक अुपकरणोंसे बना हुआ यन्त्र अितना पूर्ण और अितना सफलतायुक्त सक्रिय हो अुठा कि अुसमें ढलकर स्त्री केवल सफल दासीके रूपमें ही निकलने लगी। न अुसकी मानसिक दासतामें कोअी अभाव या न्यूनता थी और न शारीरिक दासतामें —विद्रोह तो क्या अपनी स्थितिके विषयमें प्रश्न करना भी अुसके लिये जीवनमें यन्त्रणा और मृत्युके अुपरान्त नरक मिलनेका साधन था। आज यन्त्रोंके युगमें भी दासत्वके अिस पुराने परन्तु दृढ़

यन्त्रके निर्माण-कौशलपर हमें विस्मित होना पड़ता है क्योंकि इसमें मूक यन्त्रणा सहनेवाला व्यक्ति ही सहायता देनेवालेके कार्यमें बाधा डालता रहता है। मनुष्यको न नष्ट कर उसकी मनुष्यताको इस प्रकार नष्ट कर देना कि वह उस हानिको जीवनका सबसे अज्ज्वल, सबसे बहुमूल्य और सबसे आवश्यक लाभ समझने लगे, असम्भव नहीं तो कठिनतम प्रयाससाध्य अवश्य है। प्रत्येक बालिका उत्पन्न होनेके साथ ही अपने आपको ऐसे पराये घरकी वस्तु मानने और बनने लगती है जिसमें न जानेकी इच्छा करना भी उसके लिये पाप है। विवाहके व्यवसायमें उसकी विद्या पासंग बने हुये ढेलेके समान है, जो तुलाको दोनों ओर समान रूपसे गुरु कर देता है, कुछ मानसिक विकासके लिये नहीं। उसकी योग्यता, उसकी कला पतिके प्रदर्शन तथा गर्वकी वस्तु है, उसे सत्यं शिवं सुन्दरं तक पहुँचनेका साधन नहीं, उसके कोमलता, करुणा, आज्ञाकारिता, पवित्रता आदि गुण उसे पुरुषको अच्छानुकूल बनानेके लिये आवश्यक हैं, संसारपर कल्याण-वर्षाके लिये नहीं। न स्त्रीको अपने जीवनका कोअी लक्ष्य बनानेका अधिकार है और न समाजद्वारा निर्धारित विधानके विरुद्ध कुछ कहनेका। उसका जीवन पुरुषके मनोरंजन तथा उसकी वंश-वृद्धिके लिये इस प्रकार चिर निवेदित हो चुका है कि उसकी सम्मति पूछनेकी आवश्यकताका अनुभव भी किसीने नहीं किया। वातावरण भी धीरे-धीरे उसे ऐसे ही मूक आज्ञा-पालनके लिये प्रस्तुत करता रहता है। गृहिणीका कर्तव्य कम महत्वपूर्ण नहीं यदि वह साधिकार और स्वेच्छासे स्वीकृत हो। जिस गृहको बचपनसे उसका लक्ष्य बनाया जाता है यदि उसपर उसे अन्न-वस्त्र पानेके

अतिरिक्त कोअी और अधिकार भी होता, जिस पुरुषके लिअे अुसका जीवन अेकान्त रूपसे निवेदित है यदि अुसके जीवनपर अुसका भी कोअी स्वत्व होता तो यह दासता स्पृहणीय प्रभुता बन जाती। परन्तु जिस गृहके द्वारपर भी वह बिना गृहपतिकी आज्ञाके पैर नहीं रख सकती, जिस पुरुषके घोर-से-घोर अन्याय, नीच-से-नीच आचरणके विरोधमें दो शब्द कहना भी अुसके लिअे अपराध हो जाता है, अुस गृहको बन्दीगृह और पुरुषको कारा-रक्षकके अतिरिक्त वह और क्या समझे ?

अिसमें सन्देह नहीं कि अैसी परिस्थितिका कुछ अुत्तर-दायित्व स्त्रीपर भी है क्योंकि अुसे जीनेकी कला नहीं आती—केवल युग-युगान्तरसे चले आनेवाले सिद्धान्तोंका भार लेकर वह स्वयंही अपने लिअे भार हो अुठी है।

मनुष्यतासे अूपरकी स्थितिको अपना लक्ष्य बनानेसे प्रायः मनुष्य देवताकी पाषाण-प्रतिमा बनकर रह जाता है और अिसके विपरीत मनुष्यतासे नीचे अुतरना पशुकी श्रेणीमें आ जाता है। अेक स्थिति मनुष्यसे अूपर होनेपर भी निष्क्रिय है, दूसरी अिससे नीची होनेके कारण मनुष्यताका कलंक है। अतः दोनों ही स्थितियोंमें मनुष्यका पूर्ण विकास सम्भव नहीं। हमारे समाजमें अपने स्वार्थके कारण पुरुष मनुष्यताका कलंक है और स्त्री अपनी अज्ञानमय निस्पन्द सहिष्णुताके कारण पाषाण-सी अुपेक्षणीय—दोनोंके मनुष्यत्व युक्त मनुष्य हो जानेसे ही जीवनकी कला विकास पा सकेगी जिसकी ध्येय मनुष्यकी सहानुभूति, सक्रियता, स्नेह आदि गुणोंको अधिक व्यापक बना देना है।

जीवनको विकृत न बनाकर उसे सुन्दर और उपयोगी रूप देनेके अिच्छुकको अपने सिद्धान्तोंसे सम्बन्ध रखनेवाली अन्तर्मुखी तथा अनु सिद्धान्तोंके सक्रिय रूपसे सम्बन्ध रखनेवाली बहिर्मुखी शक्तियोंको पूर्ण विकासकी सुविधाओं देनी ही पड़ेंगी। वही वृक्ष पृथ्वीतलपर बिना अवलम्बके अकेले खड़ा रहकर झंझाके प्रहारोंको मलय समीरके झोंकेके समान सहकर भी हरा-भरा फल-फूलसे युक्त रह सकेगा, जिसकी मूलस्थित शक्तियाँ विकसित और सबल हैं और उसीकी मूलस्थिति दृढ़ रह सकती है जो धरा-तलसे बाहर स्वच्छन्द वातावरणमें साँस लेता है। जब बहिर्मुखी शक्तियाँ भी अन्तर्मुखी हो जाती हैं तब बाह्य सक्रियता नष्ट हुआ बिना नहीं रहती। आज चाहे हमारी आध्यात्मिकता भीतर-ही-भीतर पाताल तक फैल गयी हो परन्तु जीवनका व्यावहारिक रूप विकृत-सा होता जा रहा है। जीवनका चिन्ह केवल काल्पनिक स्वर्गमें विचरण नहीं है; किन्तु संसारके कंटकाकीर्ण पथको प्रशस्त बनाना भी है। जबतक बाह्य तथा आन्तरिक विकास सापेक्ष नहीं बनते, हम जीना नहीं जान सकते।

* * *

६.

धरती

* * *

—डा. वासुदेवशरण अग्रवाल

डा. वासुदेवशरण अग्रवाल

आपका जन्म सन १९०४ में मेरठ जिलेके अक ग्राममें हुआ। आप सुप्रसिद्ध अतिहास-मर्मज्ञ तथा संस्कृति और पुरातत्वके विशेषज्ञ हैं। आपने लखनऊ विश्वविद्यालयसे सन १९४१ में पी. एच. डी. और सन १९४६ में डी. लिट. किया। अतिहास तथा पुरातत्व आपके प्रिय विषय हैं और भाषाके अध्ययनमें भी आप विशेष रुचि रखते हैं। आपकी रचनाओं बड़े चावसे पढ़ी जाती हैं। आप समय-समयपर रोचक शैलीमें ज्ञानवर्द्धक निबन्ध लिखते रहते हैं। आप अपनी लोकपरक दृष्टिके लिये सुप्रसिद्ध हैं। आपके मनमें भारतके अतीत गौरवके प्रति अगाध श्रद्धा अत्र महानुभूति है और अनुके अभ्युदयमें आपकी पूरी आस्था है। आप भीतर-बाहर सभी ओरसे भारतीय हैं। आपके समक्ष भारत राष्ट्रका शुभ स्वरूप रहता है, जिसे राजनीति विकृत नहीं कर पायी। आप अुदार, सहृदय और मात्त्विक वृत्तिके मधुर व्यक्ति हैं। आप व्यक्तिमें अधिक अनुकी देनको महत्व देते जान पड़ते हैं।

आपकी शोध-वृत्ति लोक-हृदयके अन्तरगत पहुँची है और वैदिक-कालसे लेकर गाँधी युगतक आपने सांस्कृतिक अकसूत्रताका दर्शन किया और दूसरोंको कराया है।

आपने अनेक अतिहासिक तथा सांस्कृतिक ग्रन्थोंका सम्पादन किया है। आप मथुरा, लखनऊ और दिल्लीके स्थित सेन्ट्रल म्युजियमके अध्यक्षके रूपमें भारत सरकारके पुरातत्व-विभागके अधिकारी रह चुके हैं और आजकल आप हिन्दू विश्वविद्यालय काशीमें भारतीय संस्कृति और अतिहास-विभागके प्राध्यापक प्रख्यात हैं।

अुरुज्योति, पृथिवीपुत्र, बाणभट्ट, पाणिनि कालीन भारतवर्ष, कला और संस्कृति, कल्पवृक्ष, मेघदूत, हर्षचरित-अक सांस्कृतिक अध्ययन, भारतकी मौलिकता अकता पद्मावत (संपादन) आदि आपके ग्रन्थ हैं।

प्रस्तुत संग्रहमें संग्रहीत आपका 'धरती' नामक निबन्ध, अतृकृष्ट निबन्धका नमूना है। छोटे-छोटे वाक्योंमें अत्यन्त सरल भाषामें देशकी समृद्धिमें किसान और धरतीका क्या महत्व है यह समझानेका अभिप्राय प्रयत्न किया गया है। आज नये-नये प्रसाधनोंके भड़कीले दिखावे द्वारा हम अुसके प्राचीन कला-कौशलको नष्ट कर अुसे भी अुसी भँवर-जालमें फाँमना चाहते हैं जिसमें पाश्चात्य देश बुरी तरह ग्रस्त हैं। अुनके प्रति हमारी अुपेक्षा हमारी आजकी दयनीय दशाका मूल कारण है। लेखकने ठीक ही कहा है 'धरती, खाद, गोधन, चरागाह अेक ही लक्ष्मीके चार हाथ हैं। अेककी कुशल दूसरेकी कुशलके साथ गुंथी हुअी है। अेकको भी हम सचाअीसे ठीक करने लगे तो दूसरे अंग अुसीके साथ ठीक होने लगेंगे। और यदि हमारा किसान ठीक रहा तो हम भी ठीक रह सकेंगे और हमारा देश भी।'

* * *

विषय-वस्तु--

किसान देशकी जान हैं और धरती किसानका प्राण। किसान लाखों आपदाओं सहकर भी अपनी धरतीकी रक्षामें सतत प्रयत्नशील रहता है। अपने जीवनसे भी अधिक प्यारी उसे धरती लगती है—क्योंकि धरती केवल उसके लिये ही नहीं बल्कि सारे देशके लिये अन्न देती है। धरतीके साथ-साथ किसान भी हमारा अन्नदाता है।

किसानमें हम अपनी प्राचीन संस्कृति और परम्पराओंके दर्शन करते हैं। वह हमारी संस्कृतिकी अक्षय मंजूषा है। आत्म-निर्भर-जीवन बिताने वालोंका वह आदर्श प्रतिनिधि है। असलिये किसानकी रक्षा हमारी अपनी रक्षा है। हर सम्भव उपायों द्वारा हमें किसानकी रक्षा करनी चाहिये, उसे सुविधाओं प्रदान करनी चाहिये। अन्नकी ओरसे मुंह मोड़नेसे, अन्नकी उपेक्षा करनेसे हमारी कितनी बड़ी हानि है और अन्तर्हि अचित सहयोग देनेसे कितना बड़ा लाभ, अन्न सब बातोंपर लेखकने विद्वत्तापूर्ण ढंगसे प्रभावशाली भाषामें प्रकाश डाला है।

* * *

धरती

देशकी आशा उसकी धरती है। भारत खेतिहरोंका देश है। किसान धरतीके बेटे हैं। यहाँ किसान जिअेगा तो सब कुछ है। किसान बिलट गये तो सब कुछ बंटाढार समझिअे। अेक पुराने संस्कृत श्लोकमें पतेकी बात कही गयी है :—

राज्ञः सत्त्वे असत्त्वे वा विशेषो नोपलक्ष्यते ।

कृषीबल विनाशे तु जायते जगतो विपत् ॥

राजा अेक रहे या दूसरा आ जाअे, कुछ विशेष भेद नहीं पड़ता, लेकिन अगर किसानका नाश हुआ तो जग-प्रलय समझनी चाहिअे। किसानके जीवनको बनानेमें भारतका सर्वोदय है। भारतका किसान देख-भालकर चलनेवाला है। वह सदियोंसे अपना काम चतुरायीके साथ करता आ रहा है। खेतमें जब अुतरता है, खून-पसीना अेक कर देता है। सर्दी-गर्मीसे वह जी नहीं चुराता। आश्विनकी धूपमें भी सिरपर चादर रखकर वह खेतमें डटा रहता है। वह स्वभावसे मितव्ययी है। अुसे बुद्धू या पुराणपन्थी कहना अपनी आँखोंका अन्धापन है। भारतीय किसानको उसकी भाषामें जब कोयी अच्छी बात बतायी जाती है, वह अुसे चावसे सीखता है और अपनातेकी कोशिश करता है, लेकिन अगर भारी भरकम, अधकचरा ज्ञान अुसके द्वारै अुँडेल दिया जाअे और वह भी विदेशी भाषामें तो यदि किमान अुसे न समझ पाअे तो किसानका क्या

दोष ? भारतीय किसानके शरीर और मनमें धरती माता कृपा और दृढ़ता बनकर बैठी है। सन्तोष और परिश्रममें भारतीय किसान संसारमें सबसे ऊपर है। उसके सद्गुणोंकी प्रशंसा करनी चाहिये। किसानको दोषी ठहराना सस्ता विज्ञापन है और वैसा करना अपने पैरोंमें आप कुल्हाड़ी मारना है। किसानके साथ जो झूठी हमदर्दी या दया-मया दिखाते हैं उन मित्रोंसे भी किसानको भगवान बचाये। फूस और छप्परके कच्चे घरोंमें रहना कोअी त्रुटि नहीं है। किसानने चतुराईसे जान-बूझकर अस तरहके घर चुने। उसके घरकी देवीने पहलेसे ही तिनकोंका वस्त्र पहना, वही उसे भाया। किसान अपने घरको बाँस और बल्लियोंके ठाठसे, अपने ही जंगलके घास और फूससे और अपने तालकी मिट्टीसे पाथी हुआ कच्ची ओंटोंसे बनाता है। इसमें अेक बड़ा लाभ है, वह यह कि किसान शहरका या बाहरी जगतका मुँह नहीं ताकता, वह अपने ही क्षेत्रमें स्वावलम्बी बन जाता है। आत्मनिर्भरता भारतीय किसानके जीवनकी कुंजी है। उसके खेतीके औजार, हल, हेंगा, पंजाली, बरत, पुराही, कुदाल, हँसिया, सब उसके यहाँ ही तैयार होते हैं। गाँवकी जानी-पहचानी कारीगरी किसानको आत्मनिर्भर बनाती है। भारतीय खेतीकी पुरानी पद्धतिमें सैकड़ों तरहका शिल्प किसानके हाथोंमें रहता है। पचासों तरहकी रस्सी वह अपने हाथोंसे बनाता है और गठियाता है। अपनी बोझ ढोनेकी छकड़ा गाड़ीको गाँवके लुहार-बढ़ाईकी मददसे वह स्वयं कसकर तैयार करता है। अख बोलनेसे पेरने और गुड़ खाँड बनानेकी सारी प्रक्रिया किसानकी अंगुलियोंके पोरवोंमें बसती है। लाखों रुपया लगाकर जो परिणाम शक्कर-मिलसे होता है वह किसानकी खंडसारमें गाँव-गाँव और घर-घर देखनेको मिलता था। नदीकी सिरवाल घाससे

वह अपनी रावका शीरा अलग करता और भिंडीकी सुकलाओ और दूधकी धारसे वह अपने गुड़का मैल काटता था। बगलेके पंखकी तरह वह सफेद खांड बनाता था और जहाँ वह बुद्योग चौपट नहीं हो गया है वहाँ आज भी बनाता है। आत्मनिर्भरता भारतीय किसानका बहुत बड़ा गुण है। यदि इसी बातका आँख खोलकर अध्ययन किया जाये तो हजारों बातें ऐसी मिलेंगी जिन्हें गाँवका भारतीय किसान अपने हाथसे कर लेता है और जिनके लिये उसे बाहरके यन्त्रों और मिस्त्रियोंका मुँह नहीं ताकना पड़ता। जिस चीजको वह अपने गाँवमें ही तैयार न कर सके और टूट-फूट होने या बिगड़नेपर स्वयं जिनकी मरम्मत न कर सके ऐसे यन्त्रको किसानने कभी पसन्द नहीं किया। ऐसा यन्त्र यदि उसके जीवनमें हम पहुँचाते हैं तो हम उसके ऊपर एक अधिक बोझ लादते हैं, उसे बहुत हद तक दूसरेपर निर्भर बनाकर उसकी स्वतन्त्रताका लोप करते हैं। बड़े-बड़े लावके पक्के गोला कुअें आज भी भारतीय किसान अपने बलबूते और मस्तिष्कके अनुभवसे और गाँवके माल-मसालेसे तैयार कर लेते हैं। उनके इस कौशलकी जी खोलकर प्रशंसा होनी चाहिये। किसी देहातमें चले जाअिये, ऐसे कुओंसे गाँव बस्ती और जंगल भरे हुए मिलेंगे। अन्हें देवता नहीं बना गये। किसानोंने ही धरतीके सोत फोड़कर अिन बड़े अिन्दारों या गहरे कुओंको बनाया था। कुअेंका गोला गालना आज भी गाँवोंमें बड़ी चतुराओका काम समझा जाता है। न किसानके पास सीमेंट था, न सिरिया या गर्डर थे। अिन चीजोंने गाँवमें पहुँचकर वहाँके माल-मसालोंकी ओरसे किसानोंका जी फेर दिया। चाहिये तो यह कि अपनी धरतीके जिस मसालेसे वह अबतक अितनी मजबूत चीजें बनाता रहा

था, अुसीकी तारीफ करके अुसे आत्मनिर्भर बनाया जाअे। आज तो अुलटी गंगा बहने लगी है। तिनकोंका वस्त्र पहननेवाली गाँवकी देवी लाल आँटके मोहमें फँस रही है। लाल आँट भयावनी वस्तु है। असमें गाँवका हित नहीं, अनहित है। किसानको अपने लिपे-पुते कच्चे घरोंसे प्यार था। वे अुसे सर्दीमें गरम और गरमीमें ठंडे लगते थे। अुन्हें वह स्वयं अपने हाथोंके बल-बूतेपर या पड़ोसियोंके साथ मिलकर बना डालता था, अुनकी लिपाअी, लिहसाअी और पुताअीमें अुसकी घरवाली अुसका हाथ बँटाती थी। अपने अन्न, घर और वस्त्रको पैदा करने और बनानेमें किसान स्वतन्त्र था, अेकदम आत्मनिर्भर। वेदके शब्दोंमें :—

स्व कषेत्रे अनमीवा विराज

अपने खेत या केन्द्रपर बिलकुल निर्भय, आधि-व्याधिसे दूर, आत्मनिर्भर होकर विराजता था। आज किसानकी आत्मनिर्भरता धीरे-धीरे चली जा रही है। अेक-अेक करके बाहरी कल-काँटे अुसके जीवनपर छापा मार रहे हैं और वह अुनके भ्रम-जालमें पड़कर अपनी आर्थिक और बौद्धिक स्वतन्त्रता खो रहा है। किसान घरका रहेगा न घाटका। यदि लाख-दो लाख आदमी अस मोहके शिकार होते तो अस मजाकको सह लिया जाता, लेकिन करोड़ों देहातके मनुष्योंको शहरकी खर्चीली चीजोंका गुलाम बना डालना अैसी भूल होगी जिसके बोझसे किसान पिस जाअेगा।

भारतीय किसानके पास हाथ-पैरका बल है, अुसके मनमें काम करनेका अुत्साह है, अुसमें अपनी धरती और घर-गृहस्थीसे प्रेम है। वह राह-राह चलता है, अुसमें बुद्धिका गुण भरपूर मात्रामें है। वस्तुतः समझ-बूझमें भारतका किसान बड़ा-चढ़ा है। अुसे किसी तरह बुद्ध नहीं कहा जा सकता। गाँवसे छँटकर जब

वह शहरमें आ जाता है तो शहरी धन्धोंको कितनी फुर्तीसे सीख लेता है, अथवा जब वह भरती होकर लामपर जाता है तब वहाँकी कवायद, हथियार और मशीनके कामको वह कितनी चालाकीसे सीख लेता है। भारतीय किसान भाषा और भाव दोनोंका धनी है। अुसके गीतोंमें अुसके सुख-दुखकी अनुभूति प्रकट होती है। अिस अनुभूतिके तार भारतीय साहित्यके अभि-प्रायोंसे मिले हैं। अुसकी पैनी बुद्धि गाँवकी चोखी कहावतोंमें जगमगाती है। मेल-जोल किसानके जीवनको बाँधनेवाली पोढ़ी रस्सी है, अुसमें मिल-जुलकर जीवन चलानेका अद्भुत गुण है। खेतीके गाढ़े समयमें जब कामका तोड़ रहता है, विशेषकर जुताओ-धुआओका मँड़नी-दवनीके कामोंमें वे खुले जीसे अेक-दूसरेका हाथ बँटाते हैं। शादी-ब्याह, जग्य-ज्योनारके समय किस तरह साग गाँव और पसगाँव भी अेक सूत्रमें बँध जाता है, यह देखने लायक होता है। टेहलेके घरेलू कामोंको कितने ही परिवार सुविधाके अनुसार बाँटकर भुगता देते हैं। मानो गेहूँ पीसना हो तो कितने ही घरोंकी स्त्रियाँ बाँट ले जाती हैं और गाते-गाते आटा तैयार हो जाता है। सारे गाँव-बिरादरीकी चक्कियाँ अेक परिवारकी सेवामें लग पड़ती हैं। दाल पीसना हो, कलावे रंगना हो, तीयल सीना हो, अिसी प्रकारकी पारिवारिक साझेदारीसे चटपट काम हो जाता है। सहकारिताकी भित्तिपर बनी हुआ जीवन-पद्धति गाँवमें पहलेसे चली आती है। अुसको यदि बाहरी चोला न पहनाया जाअे तो अुसी जीवनमेंसे पुनः अुसके कषेत्रका विस्तार किया जा सकता है।

भारतीय किसान कथा-वार्ताओंका प्रेमी रहा है। अुसे अपने पूर्वजोंके चरितोंमें रुचि है। ' आँखें अुसकी काले अक्पर नहीं देखती,

पर कानों द्वारा और कंठके द्वारा वह अपरिचित ज्ञानराशिकी रक्षा करता आया है। लाखों ग्रामगीत, हजारों कहानियाँ, लोकोक्तियाँ और ऋतु एवं प्रकृतिकी बातें किसानोंके कंठमें हैं, जहाँसे भाषाका अमित शब्द-भंडार प्राप्त किया जा सकता है। जाड़ोंकी चिलकती धूप और गरमीकी प्रशान्त रातोंमें, बरसातके घोरते-गरजते समय और वसन्तके फगुवा बयारमें किसानका रोम-रोम नृत्य और गीतके लिअे फड़कने लगता है। जीवनकी नसोंकी थिरकन भीतरी अल्लासको नृत्यमें अँडेल देती है। जीवनकी रक्षा करनी है तो लोकनृत्यको मरनेसे बचाना होगा, लोक संगीतकी लयको फिरसे सुनना होगा, जो जंगलको वसन्तके आगमनपर गीत-मंगलसे भर देती है। किसानके जीवनको पुनः चितानेके लिअे उसके नृत्य-गीत अमृतका काम करेंगे।

आज हलधर मनोवृत्ति बनानेकी आवश्यकता है। देशमें चारों ओर सब तरहकी मनोवृत्ति तैयार हो रही है, लेकिन हलकी मुठिया पकड़कर हलधर बनने या कहलानेकी मनोवृत्तिका टोटा है। कहते हैं, किसी गाढ़े समयमें जनकने हलकी मुठिया थामी थी, तब धरतीने सोना अगुला था। आज सोनेके घटकी देवी, धरतीकी पुत्री सीताके जन्मकी पुनः आवश्यकता है। और सब जगह तो हम जाते हैं, किसानोंके खेतोंमें जाना नहीं सीखा। क्या हमारे अभिनन्दन और अद्घाटन जनपदोंकी लक्ष्मीके लिअे अर्पित न होंगे? आवश्यकता है कि पर्याप्त प्रचार और अत्साहसे सारे जनपदके कल्याणका अद्घाटन हम किसी दिन करें और उसी मुहूर्तसे पृथ्वी और पृथ्वीके पुत्र किसानोंके जीवनका कायाकल्प करनेके लिअे जनपदके सच्चे सेवक व सरकारी अमला कमर कस लें। अक-अक जनपदको हम पाँच वर्षोंमें अन्न और वस्त्रसे पाट देंगे, वहाँकी भूमिके सेहा हल कराल

होकर गहरी फाड़ करने लगेंगे, वहाँके तिनकोंमें जान पड़ जायेगी. गाय-भैंसोंके सूखते पँजरोपर फिरसे माँसके लेवड़े चढ़ने लगेंगे और लुढ़कती हुआ टाँटवाले साँड़ खेतोंमें खड़े मँडारने लगेंगे। आजके जैसी मूर्छा-अुदासी असहायताका नाम-निशान न रह जायेगा। किसानके लिये चारों ओर आशाका नया संसार होगा। सभीके मन यदि संकल्पवान होंगे तो गाड़ी अटक नहीं सकती। हमारे भारी भरकम पौधोंका ज्ञान भी छनकर किसानतक पहुँचेगा और अुस भूमिके लिये अुपयोगी होगा, जिसके धनसे वह सींचा गया है। हलधर मनोवृत्तिका फगुनहटा देहातोंमें वहेगा तो अेक ओरसे दूसरे छोर तक सभी कुछ नया रस पाकर लहलहाने लगेगा। पैसा नहीं चाहिये, किसानका वलिष्ठ शरीर सकुशल बचा रहे, वह धरतीके साथ सती होकर अुसकी काया पलट देगा ?

धरतीका कायाकल्प यह देहातकी सबसे बड़ी समस्या है। आज धरती माता रूठ गयी है। किसान धरतीमें पचता-मरता है, पर धरतीमें अुपज नहीं होती। बीजके दाने तक कहीं-कहीं धरती पचा जाती है। धरतीसे अन्नकी चाहना करते हुअे गाँव-गाँवके किसानोंने पड़ती जंगल जोत डाले, बंजर तोड़ते-तोड़ते किसानोंके बैल थक गअे, पर धरती अक्काबाअीकी तरह न पसीजी और किसानोंकी दरिद्रता बढ़ती चली गयी। अधिक अन्न अुपजाओका सुग्गा पाठ किसान सुनता है। वह समझता है कि अधिक धरती जोतमें लानी चाहिये। अुसने बाग-बगियाके पेड़ काट डाले, खेतोंको बढ़ाया, पर धरतीने अधिक अन्न नहीं अुपजाया। अधिक धरतीके लिये अधिक पानी चाहिये, अधिक खाद चाहिये। वह पहलेसे ही नहीं था। किसानकी अुलझन बढ़ गयी, धरतीकी भूख-प्यास बढ़ गयी। धरती रूठी है। अब अुसे मनाना होगा।

अधिक अन्न 'अपजाओ' का अर्थ है हर बीघेमें आजसे सवाया-ड्यौड़ा अन्न उत्पन्न करना, नअी भूमिको तोड़कर जोतमें लाना नहीं। उसके लिअे विशेष पानी, बीज, खाद और श्रमकी आवश्यकता होगी। भूमिमें डाला हुआ अक बीज आज यदि चालीस दाने उत्पन्न करता है तो अैसी कोशिश होनी चाहिअे कि हर बालमें दानोंकी संख्या बढ़े और हर पूंजेमेंसे बिआसकी संख्या बढ़े। यह अच्छे खादसे हो सकेगा। असके लिअे गोबरकी तैयार की हुअी खाद अनमोल है। गोबरकी खाद मिट्टीके गड्ढोंमें डालकर ठीक तरहसे सड़ाअी और तैयार की गअी हो। मालभर पुरानी गोबरकी खाद भूमिकी सर्वोत्तम खुराक है। रीरिंककी बात ध्यानसे सुनने और मानने लायक है।

गोधनके लिअे चरावर धरती और खेतोंमें पैदा किअे हुअे चारेकी जरूरत है। खेतोंमें अन्न-भूसेकी कमी हुअी तो जंगलोंके भी खेत बना लिअे गअे। गाँवके पोहोंके लिअे चरनेका ठिकाना न रहा तो किसानके लिअे गोधनका रखना कठिन हो गया। गोधनके छीजनेसे अक ओर खादका और दूसरी ओर घी-दूधका सिलसिला टूट गया। खादके बिना धरतीकी मौत हुअी और गोरसके बिना मनुष्यकी देह सूख गअी। यह क्रूर चक्कर है, जिसकी कराल दाढ़ोंके बीचमें भारतीय किसान फँस गया है। धरती-खाद-गोधन-चरागाह अक ही लक्ष्मीके चार हाथ हैं। अककी कुशल दूसरेकी कुशलके साथ गुंथी हुअी है। अकको भी हम सचाअीसे ठीक करने लगे तो दूसरे अंग अुसीके साथ ठीक होने लगेंगे। गाँवोंके कल्याणका सन्देश ढीला पड़ा हुआ है। अुसमें बिजली भरनेकी आवश्यकता है। हलधर मनोवृत्तिके प्रचारसे शहर और गाँवोंमें किसानके जीवन्तके प्रति नअी रुचि अुत्पन्न होगी और संकल्पवान चित्तोंमें नअे कार्यक्रमका अुदय होगा।

७.

घुमक्कड़ी

* * *

श्री राहुल सांकृत्यायन

आपका जन्म रविवार ९ अप्रैल, १८९३ आी. तदनुसार वैशाख कृष्ण अष्टमी सम्बत १९५० को उत्तर प्रदेशके आजमगढ़ जिलास्थित पन्दहा नामक गाँवमें हुआ। पन्दहा आपका ननिहाल था। आपकी माता कुलवन्ती देवी अपने माता-पिताकी विशेष प्रिय सन्तान होनेके कारण अधिकांश मायकेमें ही रहा करती थी। पन्दहासे कड़ी कोसके फासलेपर कनैला गाँवमें आपके पिता पं. गोवर्धन पांडे रहा करते थे। आपका नाम केदारनाथ था। आपके तीन भाभी और भी थे।

शैशव कालमे ही आप बड़े शान्त थे। आपके नानाके यहाँ ही आपका पालन-पोषण हुआ। आपको अंक पढ़े-लिखे विद्वानके रूपमें देखनेकी नानाकी भुत्कट अच्छा होनेके कारण चार वर्षकी अवस्थामे ही आपका अक्षरारम्भ हो गया था। अध्ययनमें ये सदा अपने दर्जेमें अव्वल रहे और पाठशालाके सबसे अच्छे, सीधे और तेज बालकोंमें गिने जाते थे।

नाना द्वारा की गयी यात्राओंके वर्णनको सुननेके परिणामस्वरूप बालक राहुलके हृदयमें भी प्रेरणा पैदा हुयी कि वे यात्रा कर भारतके अद्भुत एवं अनुपम स्थानोंको अवश्य देखेंगे। आपने अुन्हीं दिनों अुर्दूकी अंक किताबमें यह प्रसिद्ध शेर भी पढ़ा था—

संर कर दुनियाकी गाफिल
जिन्दगानी फिर कहाँ ?
जिन्दगी गर कुछ रही तो
नौजवानी फिर कहाँ ?

आपने अपनी जीवन-यात्रामें इस शेरके पढ़नेके असरका अुल्लेख किया है।

आपका स्कूली अध्ययन मिडिल स्कूल (तबकी छठी कक्षा) तक ही हुआ। अिमके बाद अर्द , फारसी, संस्कृत और हिन्दी साहित्यका अध्ययन

करते हुअे आपने सारे भारतकी जो लम्बी यात्रा की अुमसे आपके ज्ञानमें असीम वृद्धि हुअी।

बोलांगसे गंगा, सिंह सेनापति, जय यौधेय, मधुर स्वप्न, बौद्ध दानि, बुद्धचर्या, बौद्ध संस्कृति, मानव समाज, दर्शन-दिग्दर्शन आदि आपकी रचनाअे आपके ज्ञानके संचित भंडारका प्रतीक हैं।

राहुलजीका जीवन अेक धुमक्कड़का जीवन है। अिसीलिये आपकी रचनाओंमें जीवनके विविध अनुभव और विभिन्न स्थानोंका परिचयात्मक ज्ञान संचित है। आपके निबन्ध अपनी अिसी विशेषताके लिये प्रसिद्ध हैं। अुनसे हमें जीवनके विविध पहलुओं, विविध अनुभवों, विविध स्थानोंकी संस्कृतियों आदिके दर्शन हो जाते हैं। अुनमें दर्शनसे लेकर जीवनके सामान्य विषयोंतकका समावेश है। 'साहित्य निबन्धावली' नामसे आपके निबन्धोंका संग्रह प्रकाशित हुआ है। आपकी भाषा सरल, बोधगम्य, निखरी हुअी और प्रभावशाली होती है। आप संस्कृत और फारसीसे आअे हुअे शब्दोंको तत्सम रूपमें ही लिखना पसन्द करते हैं।

* * *

विषय-वस्तु—

ज्ञान-प्राप्तिका सर्वोत्कृष्ट साधन है घुमक्कड़ी। यह वह पुस्तक है जिसे आँख खोलकर पढ़ते रहनेपर हमारे ज्ञानमें विविधतापूर्ण वृद्धि होती है। घुमक्कड़ीमें क्या सरलता अंबं अपयोगिता है, और घुमक्कड़ न बन पानेके कारण हम किन लाभोंसे वंचित रह जाते हैं, सफल घुमक्कड़ होनेके लिये किन गुणोंकी आवश्यकता है, इस धर्मको किन-किनने अपनाया और उससे क्या-क्या लाभ हुआ आदि बातोंका इस निबन्धमें अत्यन्त रोचक वर्णन है।

* * *

घुमक्कड़ी

मेरी समझमें दुनियाकी सर्वश्रेष्ठ वस्तु है घुमक्कड़ी। घुमक्कड़से बढ़कर व्यक्ति और समाजका कोई हितकारी नहीं हो सकता। कहा जाता है, ब्रह्मने सृष्टिको पैदा, धारण और नाश करनेका जिम्मा अपने ऊपर लिया है। पैदा करना और नाश करना दूसरी बात है, उनको यथार्थता सिद्ध करनेके लिये न प्रत्यक्ष प्रमाण सहायक हो सकता है, न अनुमान ही। हाँ, दुनियाके धारणकी बात तो निश्चय ही न ब्रह्माके ऊपर है, न विष्णुके और न शंकर ही के ऊपर। दुनिया दुखमें हो चाहे सुखमें सभी समय यदि सहारा पाती है, तो घुमक्कड़ोंकी ही ओरसे। प्राकृतिक आदिम मनुष्य परम घुमक्कड़ था। खेती, बागवानी तथा घर-द्वारसे मुक्त वह आकाशके पक्षियोंकी भाँति पृथ्वीपर सदा विचरण करता था, जाड़ेमें यदि अिस जगह था तो गर्मियोंमें वहाँसे दो सौ कोस दूर।

मैं मानता हूँ, पुस्तकें भी कुछ-कुछ घुमक्कड़ीका रस प्रदान करती हैं, लेकिन जिस तरह फोटो देखकर आप हिमालयके देवदारके गहन वनों और श्वेत हिम-मुकुटित शिखरोंके सौन्दर्य, उनके

रूप, अतः गन्धका अनुभव नहीं कर सकते, उसी तरह यात्रा-कथाओंसे आपकी उस बूँदसे भेंट नहीं हो सकती जो कि एक घुमक्कड़को प्राप्त होती है। अधिक-से-अधिक यात्रा-पाठकोंके लिये यही कहा जा सकता है कि दूसरे अन्धोंकी अपेक्षा अन्हें थोड़ा आलोक मिल जाता है और साथ ही ऐसी प्रेरणा मिल सकती है, जो स्थायी नहीं तो कुछ दिनोंके लिये अन्हें घुमक्कड़ बना सकती है। घुमक्कड़ क्यों दुनियाकी सर्वश्रेष्ठ विभूति है? इसलिये कि उसीने आजकी दुनियाको बनाया है। यदि आदिम-पुरुष एक जगह नदी या तालाबके किनारे गर्म मुल्कमें पड़े रहते तो वह दुनियाको आगे नहीं ले जा सकते थे। आदिमकी घुमक्कड़ोंने बहुत बार खूनकी नदियाँ बहायी हैं, इसमें सन्देह नहीं, और घुमक्कड़ोंसे हम हर्गिज नहीं चाहेंगे कि वे खूनके रास्तेको पकड़ें, किन्तु अगर घुमक्कड़ोंके काफिले न आते-जाते, तो सुस्त मानव-जातियाँ सो जातीं और पशुसे अपर नहीं उठ पातीं। आदिम घुमक्कड़ोंमेंसे आर्यों, शकों, हूणोंने क्या-क्या किया, अपने खूनी पथों द्वारा मानवताके पथको किस तरह प्रशस्त किया, इसे इतिहासमें हम अतना स्पष्ट वर्णित नहीं पाते, किन्तु मंगोल घुमक्कड़ोंकी करामातोंको तो हम अच्छी तरह जानते हैं। वारूद, तोप, कागज, छापाखाना, दिग्दर्शक, चश्मा यही चीजें थीं, जिन्होंने पश्चिममें विज्ञान-युगका आरम्भ कराया और अिन चीजोंको वहाँ ले जानेवाले मंगोल घुमक्कड़ थे।

कोलम्बस और वास्को-द-गामा दो घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने पश्चिमी देशोंके आगे बढ़नेका रास्ता खोला। अमेरिका अधिकतर निर्जन-सा पड़ा था। अशियाके कूप-मण्डूकोंको घुमक्कड़-धर्मकी

महिमा भूल गयी, जिसलिये उन्होंने अमेरिकापर अपनी झंडी नहीं गाड़ी। दो शताब्दियों पहले तक आस्ट्रेलिया खाली पड़ा था। चीन और भारतको सभ्यताका बड़ा गर्व है, लेकिन उनको अतनी अकल नहीं आयी कि जाकर वहाँ अपना झंडा गाड़ आते। आज अपने ४०-४५ करोड़की जनसंख्याके भारसे भारत और चीनकी भूमि दबी जा रही है, और आस्ट्रेलियामें अेक करोड़ भी आदमी नहीं हैं। आज अेशियायियोंके लिये आस्ट्रेलियाका द्वार बन्द है, लेकिन दो सदी पहले वह हमारे हाथकी चीज थी। क्यों भारत और चीन आस्ट्रेलियाकी अपार सम्पत्ति और अमित भूमिसे वंचित रह गये? इसीलिये कि वे घुमक्कड़-धर्मसे विमुख थे, उसे भूल चुके थे।

हाँ, मैं उसे भूलना ही कहूँगा, क्योंकि किसी समय भारत और चीनने बड़े-बड़े नामी घुमक्कड़ पैदा किये। वे भारतीय घुमक्कड़ ही थे, जिन्होंने दक्खिण-पूरबमें लंका, बर्मा, मलाया, यव द्वीप, स्याम, कम्बोज, चम्पा, बोर्नियो और सेलीबीज ही नहीं, फिलिपाइन तकका धावा मारा था, और अेक समय तो जान पड़ा कि न्यूजीलैंड और आस्ट्रेलिया भी बृहत्तर भारतका अंग बननेवाले हैं, लेकिन कूप-मंडूकता, तेरा सत्यानाश हो! इस देशके बुद्धोंने अपदेश देना शुरू किया कि समुन्दरके खारे पानी और हिन्दू-धर्ममें बड़ा बैर है, उसके छूनेमात्रसे वह नमककी पुतलीकी तरह गल जायेगा। अतना बतला देनेपर क्या कहनेकी आवश्यकता है कि समाजके कल्याणके लिये घुमक्कड़-धर्म कितनी आवश्यक चीज है? जिस जाति या देशने इस धर्मको अपनाया वह चारों फलोंका भागी हुआ और जिसने इसे दुराया, उसके

लिअे नरकमें भी ठिकाना नहीं। आखिर घुमक्कड़-धर्मको भूलनेके कारण ही हम सात शताब्दियों तक धक्का खाते रहे, अरे-गरे जो भी आये, हमें चार लात लगाते गये।

शायद किसीको सन्देह हो कि मैंने अिस शास्त्रमें जो युक्तियाँ दी हैं, वे सभी लौकिक तथा शास्त्र-बाह्य हैं। अच्छा, तो धर्मसे प्रमाण लीजिए। दुनियाके अधिकांश धर्मनायक घुमक्कड़ रहे। धर्माचार्योंमें आचार-विचार, बुद्धि और तर्क तथा सहृदयतामें सर्व-श्रेष्ठ बुद्ध घुमक्कड़-राज थे। यद्यपि वे भारतके बाहर नहीं गये, लेकिन वर्षके तीन मासोंको छोड़कर अेक जगह रहना वे पाप समझते थे। वे अपने ही घुमक्कड़ नहीं थे, बल्कि आरम्भ ही में अपने शिष्योंको अुन्होंने कहा था—“चरथ भिक्खवे ! चारिकं” जिसका अर्थ है—भिक्खुओ ! घुमक्कड़ी करो। बुद्धके भिक्खुओंने अपने गुरुकी शिक्काको कितना माना, क्या अिसे बतानेकी आवश्यकता है ? क्या अुन्होंने पश्चिममें मकदूनिया तथा मिस्रसे पूरबमें जापान तक, अुत्तरमें मंगोलियासे लेकर दक्खिणमें बाली और बाँकाके द्वीपों तकको रौंदकर रख नहीं दिया ? जिस बृहत्तर भारतके लिअे हरेक भारतीयको अुचित अभिमान है, क्या अुसका निर्माण अिन्हीं घुमक्कड़ोंकी चरण-धूलिने नहीं किया ? केवल बुद्धने ही अपनी घुमक्कड़ीसे प्रेरणा नहीं दी, बल्कि घुमक्कड़ोंका अितना जोर बुद्धसे अेक-दो शताब्दियों पूर्व भी था, जिसके ही कारण बुद्ध जैसे घुमक्कड़-राज अिस देशमें पैदा हो सके। अुस वक्त पुरुष ही नहीं, स्त्रियाँ तक जम्बू-वृक्षकी शाखा ले अपनी प्रखर प्रतिभाका जौहर दिखातीं। बादमें कूपमंडूकोंको पराजित करतीं सारे भारतमें मुक्त होकर विचरा करती थीं।

कोओ-कोओ महिलाओं पूछती हैं—क्या स्त्रियाँ भी घुमक्कड़ी कर सकती हैं, क्या उनको भी इस महाव्रतकी दीक्षा लेनी चाहिये ? घुमक्कड़-धर्म कोओ ऐसा संकुचित धर्म नहीं है, जिसमें स्त्रियोंके लिये स्थान नहीं हो। स्त्रियाँ इसमें उतना ही अधिकार रखती हैं, जितना पुरुष। यदि वे जन्म मफल करके व्यक्ति और समाजके लिये कुछ करना चाहती हैं, तो उन्हें भी दोनों हाथोंसे इस धर्मको स्वीकार करना चाहिये। घुमक्कड़-धर्म छुड़ानेके लिये ही पुरुषने बहुतसे बन्धन नारीके रास्तेमें लगाये हैं। बुद्धने सिर्फ पुरुषोंके लिये घुमक्कड़ी करनेका आदेश नहीं दिया, बल्कि स्त्रियोंके लिये भी उनका वही उपदेश था।

भारतके प्राचीन धर्मोंमें जैन धर्म भी है। जैन धर्मके प्रतिष्ठापक श्रमण महावीर कौन थे ? वे भी घुमक्कड़-राज थे। घुमक्कड़-धर्मके आचरणमें छोटी-से-बड़ी सभी बाधाओं और अपाधियोंको अन्होंने त्याग दिया था। करतलभिक्षा, तरतल-वास तथा दिगम्बरको अन्होंने इसलिये अपनाया था कि निर्द्वन्द्व विचरणमें कोओ बाधा न रहे। भगवान महावीर दूसरी-तीसरी नहीं, प्रथम श्रेणीके घुमक्कड़ थे। वे आजीवन घूमने ही रहे। वैशालीमें जन्म लेकर विचरण करते-करते ही पावामें अन्होंने अपना शरीर छोड़ा। बुद्ध और महावीरसे बढ़कर यदि कोओ त्याग, तपस्या और सहृदयताका दावा करता है, तो मैं उसे केवल दम्भी कहूँगा।

बुद्ध और महावीर जैसे सृष्टिकर्ता अश्वरसे अनकारी महापुरुषोंकी घुमक्कड़ीकी बातसे यह नहीं मान लेना होगा कि दूसरे लोग अश्वरके भैरोसे गुफा या कोठरीमें बैठकर मारी सिद्धियाँ पा गये या पा जाते हैं। यदि ऐसा होता, तो शंकराचार्य,

जो साक्षात् ब्रह्मस्वरूप थे, क्यों भारतके चारों कोनोंकी खाक छानते फिरे ? शंकरको शंकर किसी ब्रह्मने नहीं बनाया, अन्हें बड़ा बनानेवाला था यही घुमक्कड़-धर्म । शंकर बराबर घूमते रहे—आज केरल देशमें थे तो कुछ ही महीने बाद मिथिलामें और अगले साल काश्मीर या हिमालयके किसी दूसरे भागमें । शंकर तरुणाभीमें ही शिवलोक सिधार गये । किन्तु थोड़ेसे जीवनमें अन्होंने सिर्फ तीन भाष्य ही नहीं लिखे, बल्कि अपने आचरणसे अनुयायियोंको वह घुमक्कड़ीका पाठ पढ़ा गये कि आज भी अुसका पालन करनेवाले सैकड़ों मिलते हैं ।

महान घुमक्कड़-धर्म बौद्ध धर्मका भारतसे लुप्त होना क्या था, तबसे कूपमण्डूकताका हमारे देशमें बोलबाला हो गया । सात शताब्दियाँ बीत गयीं और अिन सातों शताब्दियोंमें दासता और परतन्त्रता हमारे देशमें पैर तोड़कर बैठ गयी, यह कोअी आकस्मिक बात नहीं थी । लेकिन समाजके अगुओंने चाहे कितना ही कूप-मण्डूक बनाना चाहा, लेकिन अिस देशमें माओके लाल जब-तब पैदा होते रहे, जिन्होंने कर्म-पथकी ओर संकेत किया । हमारे अितिहासमें गुरु नानकका समय दूरका नहीं है । लेकिन अपने समयके वे महान घुमक्कड़ थे । अन्होंने भारत-भ्रमणको ही पर्याप्त नहीं समझा और ओरान और अरब तकका धावा मारा । घुमक्कड़ी किसी बड़े योगसे कम सिद्धिदाअिनी नहीं है, और निर्भीक तो वह अेक नम्बरका बना देती है ।

दूर शताब्दियोंकी बात छोड़िअे, अभी शताब्दी भी नहीं बीती अिस देशसे स्वामी दयानन्दको बिदा हुअे । स्वामी दयानन्दको ऋषि दयानन्द किसने बनाया ? घुमक्कड़-धर्मने । अन्होंने भारतके अधिकांश भागोंका भ्रमण किया, वे पुस्तकें लिखते, शास्त्रार्थ करते हुअे बराबर

भ्रमण करते रहे। असलिये दयानन्दको मुक्त-बुद्धि और तर्क-प्रधान बनानेका कारण शास्त्रोंसे अलग कहीं ढूँढ़ना होगा। वह है उनका निरन्तर घुमक्कड़-धर्मका सेवन। अन्होंने समुद्र-यात्रा करने, दीप-दीपान्तरोंमें जानेके विरुद्ध जितनी थोथी दलीलें दी जाती थी, सबकी चिन्धी-चिन्धी अड़ा दी और बतलाया कि मनुष्य स्थावर वृक्ष नहीं है, वह जंगम प्राणी है। चलना मनुष्यका धर्म है, जिसने इसे छोड़ा वह मनुष्य होनेका अधिकारी नहीं है।

बीसवीं शताब्दीके भारतीय घुमक्कड़ोंकी चर्चा करनेकी आवश्यकता नहीं। अतना लिखनेसे मालूम हो गया होगा कि संसारमें यदि कोअी अनादि सनातन धर्म है, तो वह घुमक्कड़-धर्म है। लेकिन वह संकुचित सम्प्रदाय नहीं है, वह आकाशकी तरह महान है, समुद्रकी तरह विशाल है। जिन धर्मोंने अधिक यश और महिमा प्राप्त की है, वह केवल घुमक्कड़-धर्म ही के कारण। प्रभु अीसा घुमक्कड़ थे उनके अनुयायी भी अैसे घुमक्कड़ थे, जिन्होंने अीसाके सन्देशको दुनियाके कोने-कोनेमें पहुँचाया।

घुमक्कड़ी वही कर सकता है, जो निश्चिन्त है। घुमक्कड़ीके लिये चिन्ताहीन होना आवश्यक है। दोनोंका अन्योन्याश्रय होना दूषण नहीं भूषण है। घुमक्कड़ीसे बढ़कर सुख कहाँ मिल सकता है? आखिर चिन्ता-हीनता तो सुखका सबसे स्पष्ट रूप है। घुमक्कड़ीमें कष्ट भी होते हैं, लेकिन असे असी तरह समझिये, जैसे भोजनमें मिर्च। वस्तुतः घुमक्कड़ीमें कभी-कभी होनेवाले कड़वे अनुभव अुसके रसको और बढ़ा देते हैं, असी तरह जैसे काली पृष्ठभूमिमें चित्र अधिक खिल अुठता है।

व्यक्तिके लिये घुमक्कड़ीसे बढ़कर कोअी नकद धर्म नहीं है। जातिका भविष्य घुमक्कड़ोंपर निर्भर करता है, असलिये में

कहूँगा कि हरेक तरुण और तरुणीको घुमक्कड़-व्रत ग्रहण करना चाहिये, जिसके विरुद्ध दिये जानेवाले सारे प्रमाणोंको झूठ और व्यर्थका समझना चाहिये। यदि माता-पिता विरोध करते हैं, तो समझना चाहिये कि वह भी प्रह्लादके माता-पिताके नवीन संस्करण हैं। यदि हित-बान्धव बाधा उपस्थित करते हैं, तो समझना चाहिये कि वे दिवान्ध हैं। यदि धर्म-धर्माचार्य कुछ अलुटा-सीधा तर्क देते हैं, तो समझ लेना चाहिये कि अन्हीं ढोंगों और ढोंगियोंने संसारको कभी सरल और सच्चे पथपर चलने नहीं दिया। यदि राज्य और राक्षसी नेता अपनी कानूनी रुकावट डालते हैं, तो हजारों बारकी तजर्बा की हुअी बात है कि महानदीके वेगकी तरह घुमक्कड़ी गतिको रोकने-वाला दुनियामें कोअी पैदा नहीं हुआ। बड़े-बड़े कठोर पहरवाली राज्य-सीमाओंको घुमक्कड़ोंने आँखमें धूल झाँककर पार कर लिया।

संक्षेपमें हम यह कह सकते हैं कि यदि कोअी तरुण-तरुणी घुमक्कड़-धर्मकी दीक्षा लेता है—यह मैं अवश्य कहूँगा कि यह दीक्षा वही ले सकता है, जिसमें बहुत भारी मात्रामें हर तरहका साहस है—तो उसे किसीकी बात नहीं सुननी चाहिये, न भूलसे विवाह कर लाओ अपनी पत्नीके रोने-धोनेकी फिक्र करनी चाहिये और न किसी तरुणीको अभागे पतिके कल्पनेकी। बस गंकराचार्यके शब्दोंमें यही समझना चाहिये “ निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः ” और मेरे गुरु कपोतराजके वचनको अपना पथ-प्रदर्शक बनाना चाहिये—

सेर कर दुनियाकी गाफिल, जिन्दगानी फिर कहाँ ?

जिन्दगी गर कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ ?

दुनियामें मनुष्य-जन्म अक ही बार होता है और जवानी भी केवल अक ही बार आती है। साहसी और मानवी तरुण-तरुणियोंको इस अवसरसे हाथ नहीं धोना चाहिये। कमर बाँध लो, भावी घुमक्कड़ो ! संसार तुम्हारे स्वागतके लिये बेकरार है।

८.

बहसकी बात

* * *

—श्री सियारामशरण गुप्त

श्री सियारामशरण गुप्त

आपका जन्म सन १८९५ में चिरगाँव—झाँसीमें हुआ था। आपकी गिनती हिन्दीके प्रसिद्ध कवि, उपन्यासकार और कहानी-लेखकोंमें होती है। आप मौन साधक और विशुद्ध साहित्यिक हैं। आप कभी भाषाओं जानते हैं।

निबन्धोंके क्षेत्रमें आपने सुन्दर प्रतिभाका परिचय दिया है। आपका व्यक्तित्व जितना सरल और सात्विक है, आपके निबन्धोंमें भी अतनी ही सरलता और सात्विक भावुकता और चिन्तन प्रकट होता है। आपके छोटे निबन्धोंमें गहराईके अतिरिक्त आत्मीयता और सरलता है। आपपर गाँधी-वादका गहरा प्रभाव है जिससे आप अपने निबन्धोंमें दिखावटी शिष्टाचार और सामाजिक आडम्बरोपर व्यंग तो करते हैं, किन्तु उनमें तीखापन न होकर सरस विमर्श और आत्मानुभूतिकी मात्रा अधिक रहती है।

आपके निबन्धोंके विषय जीवन तथा साहित्य या समाजसे सम्बन्धित हैं। अपने निबन्धोंमें कही आप 'अपूर्णता' के महत्वसे प्रभावित होते हैं, तो कही 'धन्यवाद' के माध्यमसे आधुनिक कृत्रिम शिष्टाचारपर व्यंग करते हैं और कही स्त्रियोंके घूँघटसे बतलाते हैं कि हर आदमी एक तरहसे नकाब-पोश ही है।

आपके निबन्धोंको पढ़ते-पढ़ते पाठक सरलतासे लेखकके हृदयके रसमें मग्न हो जाता है। आपके निबन्धोंमें चाँदनीकी शीतलता है जो अद्विग्न मानव-हृदयको मुख और शान्ति प्रदान करती है।

नारी (उपन्यास) झूठ-सच (निबन्ध), मानुषी (कहानी-संग्रह) पुण्य पर्व (नाटक) आर्द्रा, पाथेय, मृण्मयी, बापू, अनुमुक्त, गीता, नोआखली (काव्य) आदि आपकी रचनाएँ विशेष प्रसिद्ध हैं।

विषय-वस्तु—

कभी-कभी बिना बातकी बातपर भी बहस हो जाती है और जब अंक बार बहस होनी शुरू हो गयी तो फिर दोनों पक्ष अपनी-अपनी बातको सही सिद्ध करनेपर तुल जाते हैं।

‘अंसा’ और ‘अंसा नहीं’ को दो पक्षों द्वारा अपनायी गयी तर्क-पद्धति और अुसपर अड़े रहनेकी नीति कभी-कभी महायुद्धोंतकका कारण बन बैठती हैं। अस मनोवृत्तिके मनोवैज्ञानिक कारणका पता लगानेका प्रयत्न करते हुअे लेखक अस निष्कर्षपर पहुँचा है कि अपने महत्वकी स्थापना की महत्वाकांक्षा ही बहसका कारण है। महत्व-स्थापनकी महत्वाकांक्षाकी अस मनोवृत्तिकी जड़ मानव-समाजमें अितनी गहरी हो चुकी है कि अुसे अुखाड़ सकना कठिन ही नहीं असम्भव है।

* * *

बहसकी बात

बहुत गम्भीर समस्या थी। अंक सज्जन कह रहे थे, यह घर पूर्व दिशामें है; दूसरे सज्जनका कहना था, ऐसा हो नहीं सकता। अपने गलेके जोरसे उस घरको अुठाकर ठेठ पश्चिममें रख देनेकी अनुकी अच्छा थी। अंक अँग्रेज कविके पूर्व और पश्चिमकी तरह अनि दोनोंका दिक्-विपर्यय किसी अंक दूसरेसे मिलना ही न चाहता था। अपने मध्यकेन्द्रको बहुत पीछे छोड़कर बात गरमागरमी और तेजीसे आगे बढ़ रही थी। ऐसी स्थितिमें अंकका मुक्का और दूसरेका सिर तो आपसमें मिल सकता था, परन्तु उनके मत नहीं। वे दक्षिणी और अुत्तरी ध्रुवोंकी अपेक्षा भी दूर होते जा रहे थे। ऐसे विकट प्रसंगमें उस घरका प्राण-संकट टालकर अंक तीसरे सज्जनने बताया कि यह घर आपके यहाँसे पूर्व है, आपके यहाँसे पश्चिम। अतएव सही हैं तो आप दोनों, और गलत हैं तो आप दोनों। परिणाम यह हुआ कि जिस तरह न तो पूर्वको पश्चिममें जाना पड़ा और न पश्चिमको पूर्वमें, चरम परिपाकके बिना ही वह बहस यहीं शान्त हो गयी—कमसे कम अपरसे तो हो ही गयी।

डर मुझे यह है कि अपने पाठकोंको मैंने नाराज कर दिया। मैं झूठ बोला जिसकी तो कोअी बात नहीं। झूठ बोलना तक

मुझे नहीं आया, इसकी शिकायत अवश्य की जायेगी। बहस कभी बिना बात-की-बातपर चल पड़ती है, यह मान लिया जायेगा। परन्तु क्या ऐसा भी कोअी हो सकता है, जो पूर्व और पश्चिम जैसे स्वयं प्रकाशित विषयको लेकर मरने-मारनेको तैयार था—असपर फिर अेक नअी बहस अुठ खड़ी होगी। अुठ खड़ी हो, मै अपनी बातसे पीछे हटना नहीं चाहता।

यह ठीक है कि पूर्व और पश्चिमका भेद सुस्पष्ट करनेके लिये किसीने दिनमें ही सूर्यकी यह मशाल जला रखी है। पर अुसीके साथ अुतना ही ठीक क्या यह नहीं है कि अुसीके अस मशालकी पीठपर अन्धकार भी प्रतिष्ठित कर रखा है। दिन हो तो अुसके साथ रात है और रात हो तो अुसके साथ दिन। अुत्तर है तो दक्षिण भी होगा। अस तरह दोका यह अुत्तर-प्रत्युत्तर, यह तर्क-वितर्क अनादि कालसे चला आता है। तब फिर पूर्व और पश्चिमके लिये पूर्वोक्त सज्जनोंका अस प्रकार झगड़ पड़ना कुछ अन्होनी बात नहीं। देखा जाअे तो हममें कदाचित ही कोअी अैसा निकले जो अस पूर्व और पश्चिमके झगड़ेमें ठीक अिसी प्रकार लिप्त न हो। यह दूसरी बात है कि अपनी भिन्न-भिन्न बोलियोंमें अन्हें हम और कुछ कहते हों। मिट्टी हो, कंकड़ हो, पत्थर हो, कुछ क्यों न हो—अससे विग्रहकी प्राण-प्रतिष्ठा अुसीमें कर दी जाती है। कैसे की जाती है, यह बतानेके लिये अनेक आचार्योंने बड़े-बड़े ग्रन्थ रच डाले हैं। असकी शिष्याके लिये हमारे विश्व-विद्यालय भी कम सक्रिय नहीं। अस अचिर जीवनका केवल आधा ही लेकर अपने प्रमाणपत्रके साथ वे हमें छुट्टी दे देते हैं कि अब तुम किसी भी राजदरबारमें जाकर पूर्वको पश्चिम

घोषित कर सकते हो और पश्चिमको पूर्व । न्यायालयोंमें जितने भी मामले पहुँचते हैं, उनमें अधिकांश अनि सम्मुख विरोधी दो दिशाओंके विवादके ही नअ-नअ आदर्श अथवा साँचे हैं ।

न्यायालय ही नहीं, हमारा यह महाभारत रात-दिन सर्वत्र चला करता है । अिसके लिअे अठारह अक्षौहिणीकी आवश्यकता नहीं पड़ती । अेक और अेक दो, बस अितनी ही संख्या पर्याप्त है । कोअी दूसरा न हो तो अकेले अपने आप भी हम यह कसरत कर सकते हैं । परन्तु रूखी रोटीकी तरह अकेले-अकेलेकी यह कसरत हमारे मानसिक आहारमें अनाहारसे अधिक नहीं । कदाचित् अिसी कारण काल कोठरीकी सजा वर्तमान समयकी अेक बहुत बड़ी सजा है । तो हाँ, जहाँ हम दो अेकत्र हुअे, अेक कहता है,—‘यह बात अैसी है’ दूसरा तुरन्त अुत्तर देता है—‘नहीं, यह बात अैसी हो नहीं सकती !’ दूसरेका यह अुत्तर अितना स्वाभाविक, अतः तर्क-संगत है कि प्रसंग कुछ जाने-समझे बिना हम भी अुसे अपना मत दे सकते हैं । भला बताअिअे, वसा हो कैसे सकता है जब कि वैसा हो सकनेकी बात पहले ही कोअी कर चुका हो ।

यह तर्क या बहस प्रारम्भ हुअी नहीं कि अेक बड़ा जन-समूह तुरन्त हमारे आसपास अिकट्ठा हो जाता है । किसके पैरमें कितनी तेजी है, अिसके आगेकी बात शिष्ट पाठकको सहन न होगी, अिसीसे अस्पृश्य समझकर यहीं छोड़ी जाती है ।

परन्तु अिस तर्क-प्रसंगको मेरे अस्पृश्य समझ लेनेसे अिसका कुछ भी नहीं बिगड़ता । संसारके अधिकांश युद्धोंका अुद्गम अिसीके भीतर मिलेगा । वे होते ही रहते हैं । वहाँ आरम्भमें अेक कहता

है—‘अैसा’—दूसरा तुरन्त उत्तर देता है—‘अैसा हर्गिज नहीं।’ बस अिसीके बाद सेना, सैनिक, सेनापति और अुनकी तलवार, तोप और गोले संसारके अितिहासका सबसे अधिक रोचक अध्याय यही है।

तो हाँ, जब किसी अेकको अस्पृश्य कर छोड़ दिया गया है तो किसी दूसरेको ब्राह्मण कहना ही पड़ेगा। किन्तु बहुत शुद्धाचारी और तपस्वी होनेके कारण यह ब्राह्मण तर्क सबके लिये जान नहीं पड़ता। बात करने भी बैठे और डरते भी रहे कि कहीं किसीको चोट न लग जाअे तो भला यह भी कोअी बात हुआ ! सच पूछो तो तर्क जन्मसे ही कपत्रिय है। अिसका काम ही मारना, मरना और फिर-फिर जी अुठना है। अिककीस-अिककीस बार अिसे निर्वश ही क्यों न कर दो, फिर भी जब देखो तब अिसका वही तेज। साहित्यिकने व्यंग्य और व्यंजनाके आवरणमें कोमल करके—अिसे वैश्य-वर्णमें लानेका यत्न किया है। परन्तु वहाँ भी अिसका जन्म-गत जातीय गुण छिपा नहीं रहता।

पर अब कुछ सावधानीकी आवश्यकता है, नहीं तो यह आरोप किया जाअेगा कि लेखकको बहसमें मुँहकी खानी पड़ी है, अिसीसे छिपे-छिपे वह तर्ककी निन्दा कर रहा है। अिसपर मेरा कहना यह है कि जीभ रामका नाम लेनेमें ही हार सकती है, बहस अथवा तर्क करनेमें नहीं।

वास्तवमें जीभकी महिमा है ही अैसी। विधाताने हमें आँख, कान, हाथ, पैर ये सब दौ-दोकी संख्यामें दिअे हैं, तब प्रश्न अुठता है, जीभ ही अुसने हमें अेक क्यों दी ? नाक भी अुसने अेक ही दी थी।

जान पड़ता है, बादमें उसे इसमें अपनी भूल मालूम हुयी । इसीसे इसके बीचोबीच उसने एक दीवार खड़ी करके एकको दोमें बदल दिया है । चाहता तो वह जीभके लिये भी किसी ऐसे ही संशोधनका प्रबन्ध कर सकता था । परन्तु उसने ऐसा नहीं किया । मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षीपर भी यह प्रयोग करनेकी आवश्यकता उसने नहीं समझी । तब यह क्यों न माना जाये कि जीभके एक रखनेमें उसका कुछ विशेष हेतु था ? इसे उसकी कोअी भूल समझनेमें काम न चलेगा ।

निश्चय ही जीभका दो होना ठीक न होता । इस समय साँपके द्विजिह्व होनेकी बात कहकर मैं अपना समर्थन नहीं करना चाहता । यह कहकर भी नहीं कि उस अवस्थामें खाद्य पदार्थ और भी दुर्लभ हो जाते । मैं जो कहना चाहता हूँ वह यह है कि जीभकी संख्यामें दो होनेपर तर्क अथवा बहस करनेके लिये किसीको अन्यकी आवश्यकता न रहती उस समय कोअी भी हिमालयकी निर्जन कन्दराओंमें जा कर किसी दूसरेकी सहायताके बिना ही अपना काम चला लेता । मनुष्यकी एक जीभ कहती,—‘मीठा’, दूसरी तुरन्त प्रयुत्तर करती,—‘नहीं, कड़ुआ’ इस प्रकार अपन आपमें ही आनन्द रसके दोनों स्वाद पाकर मनुष्यमें जिस अनपेक्षित स्वार्थपरताका अुदय होता, उससे क्या हमारे इस बहुविचित्र संसारके असंख्य टुकड़े न हो जाते ? दूसरोंका हित करनेके लिये उस समय न तो हमें किसी सभामें अुपस्थित होनेकी आवश्यकता पड़ती और न किसी दूसरेका ग्रन्थ पढ़कर उसकी समालोचना लिखनेकी । न प्रजाके चीत्कारका अस्तित्व ही होता, न राजाकी अेकान्त काल कोठरीका । सचमुच ही यह बहुत बुरा

होता। इसी सबके कारण तो हमारा कर्म मुखरित संसार अितना प्रिय और मधुर है।

तर्क अथवा बहसकी ही वह वस्तु है, जो हमारे मनमें, अन-जाने ही सही, यह बोध उत्पन्न करती है कि हमें छोड़कर भी किसी औरको होना चाहिये। यह और कोभी ऐसा है जिसके बिना हमारा जीवन नीरस हो जाता है। ऊपरसे अुसपर हम प्रहार ही क्यों न करें, भीतरसे प्यार तो अुसे करते ही हैं। मनुष्यमें वाणी ही अुसका सबसे बड़ा वैभव है। आँखें? वह हमसे अधिक गीधमें है। कान घोड़े और गधेके भी हमसे बहुत बड़े हैं। कुत्तेकी घ्राण-शक्तिकी बराबरी तो हम कर ही नहीं सकते। दौड़नेकी बात आती है, तब मृगका पशुत्व भूलकर, अुसीकी काल्पनिक समतामें गौरवका अनुभव करना पड़ता है। जो बात कहीं दूसरेमें नहीं मिलंती, वह है हमारी वाणी। अतएव जब हम किसीकी बात सुनते हैं तो स्वभावतः हमें यह अनुभूति होती है कि यह अपने अुसी बड़प्पनकी घोषणा कर रहा है। अुसका महत्व खंडित करके अपना महत्व स्थापित कर देना ही बहसकी मनोवृत्तिका कारण है। इसका काम है, महात्वाकांक्षाकी वृद्धि करके हमें और भी बड़ा कर देना। बैलोंमें जब यह वृत्ति पैदा होती है तो वे सींग चला देनेके सिवा किसी दूसरे ढंगकी बहस नहीं करते। मनुष्यकी जीभ बिना सींगके सींग तो चला ही लेती है, और भी अुसके लिये बहुत-सी बातें आसान हैं। सच पूछो तो दूसरे प्राणियोंमें विधाताका जिह्वादान अुसके बड़े-से बड़े अपव्ययोंमेंसे अेक है।

परन्तु अब और कुछ^१ लिखनेको जी नहीं करता। जीभकी स्तुति जीभ चलाकर ही की जा सकती है, लेखनी चलाकर नहीं।

अिन बातोंको काटकर कुछ कहनेवाला कोअी दूसरा होता तब भी कुछ बात थी। यदि किसी दूसरेने यह सब कहा होता तो वह कठिन काम में स्वयं स्वीकार कर लेता। पर अब तो बाहर जाकर ही जीभकी यह प्यास मिट सकेगी। मैंने जिसे पूर्व कह दिया है, उसे पूर्व ही कहता जाऊँ, तब यह असम्भव है कि उसे पश्चिम कहनेवाला कोअी न मिल सके। हम दोके बीचमें भी कोअी ऐसा आ पड़ा, जो मेरे पूर्वको पूर्व रहने दे और दूसरेके पश्चिमको पश्चिम, तो भी हानि नहीं है। चतुर माली द्वारा कुछ काट-छीलकर अेकमें बाँधी गअी भिन्न-भिन्न वृक्षोंकी दो शाखाओं अेक रस हो सकती हैं और हो जाती हैं। पर मेरेमें मेरा फूल खिलेगा, दूसरेमें दूसरेका, अिसमें अन्तर आना असम्भव है।

* * *

९.

गेहूँ बनाम गुलाब

* * *

—श्री रामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी

श्री रामवृक्ष शर्मा बेनीपुरी

हिन्दी साहित्यके वर्तमान युगके शैलीकारोंमें बेनीपुरीजीका अेक महत्व-पूर्व स्थान है। विशेष कर शब्दचित्रके क्षेत्रमें तो अिनकी प्रतिभा अप्रतिम है। अिनके शब्दचित्रोंके सम्बन्धमें श्री बनारसीदासजी चतुर्वेदीने कहा है कि 'यदि हममे प्रश्न किया जाये कि आजकल हिन्दीका सर्वश्रेष्ठ शब्द-चित्रकार कौन है तो हम बिना किसी संकोचके बेनीपुरीका नाम अपुस्थित कर देंगे।' राष्ट्रकवि मैथिलीशरणजीके शब्दोंमें 'बेनीपुरीजीकी लेखनी जादूकी छड़ी है।' प. माखनलाल चतुर्वेदीकी दृष्टिमें 'वह फोलाद अुगलती है।' बेनीपुरीजीके सफल रेखा-चित्रकार होनेका रहस्य यही है कि वे शब्दोंके सम्राट हैं।

किसी भी लेखककी शैलीमें मार्मिकता और प्रभावोत्पादकता तभी आती है जब लेखक जीवन-सागरमें गोते लगाकर वहाँसे कटु-मधु अनुभवोंके मोती प्राप्त करता है और अपनी नौकाको जीवन-सागरमें अेकाकी खेनेका साहस रखता है। जिसने स्वयं जीवनके हलाहलका पान नहीं किया, उसकी शैलीमें विद्वत्ता और मार्मिकता नहीं आ सकती।

लेखक अपने अनुभवोंको प्रेषणीय बनानेमें जब पूर्णतया सफल होता है, वस्तुतः तभी उसे हम शैलीकार कह सकते हैं। शैली-निर्माणका सीधा सम्बन्ध जीवनसे है। अिमें अध्ययनके द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता। बेनीपुरीजी अपने जीवनके प्रारम्भसे ही तूफानोंसे खेलते रहे हैं। फलतः अुनकी शैलीमें भी तूफानोंका-सा जोर और क्पिप्रता है।

बेनीपुरीजीकी रचनाओंमें माधुर्य, ओज और प्रसाद अिन तीनोंकी अेक अद्भुत त्रिवेणी प्रवाहित हो रही है। गेहूँ और गुलाबके अधिकांश चित्र माधुर्यमें ओतप्रोत हैं।

प्रमाद गुणसे तो बेनीपुरीजीका सम्पूर्ण साहित्य ही भरा पड़ा है।

बेनीपुरीजीके शब्दचित्रोंके तीन संग्रह अबतक प्रकाशित हो चुके हैं—माटीकी मूरतें, लाल तारा तथा गेहूँ और गुलाब। अिनमेंसे माटीकी

मूर्तोंपर तो भारत सरकारकी ओरसे दो हजार पञ्चका पुरस्कार भी मिल चुका है तथा गेहूँ और गुलाबके प्रकाशनने हिन्दी संसारमें अेक विचित्र आन्दोलन खडा कर दिया था। गेहूँ और गुलाबमें बेनीपुरीजीने हरमिगार, गेंदा और गुलाबमे पूर्ण जिस ममाजका चित्र अंकित किया है, अुस ममाजको अपनी आंखों देखनेके लिअे जैमे आकुल-व्याकुल हैं ; क्योंकि जीवनकी कटुता और तिक्तताका अनुभव अुन्होंने अपनी किशोरावस्थामे ही किया है।

यही कारण है कि जब वे दीन चरवाहे अथवा मजदूरकी अवलकी बेबसीका चित्र खीचने हैं तो अुनकी अेक-अेक पंक्तिमें करुणाका सागर अुद्बलित होकर लहराने लगता है।

गेहूँ और गुलाब नामक चित्रमें वे अेक जगह कहते हैं—‘पृथ्वी और आकाशके कुछ तत्व अेक विशेष प्रक्रियामे पौदोंकी बालियोंमे संग्रहीत होकर गेहूँ बन जाते हैं, अुन्हीं तत्वोंकी कमी हमारे शरीरमें भूख नाम पाती है।’ मानवीय कषुधाकी अिस वैज्ञानिक परिभाषाके पश्चात वे अिमकी परितृप्तिके लिअे भी ऋजु वैज्ञानिक पद्धति बतलाने हैं—‘क्यों पृथ्वीकी जुताअी, कुड़ाअी, गुड़ाअी क्यों आकाशकी दुहाअी ? हम पृथ्वी और आकाशमे अुन तत्वोंको सीधे क्यों नही ग्रहण करें ?’

आजके युगकी आर्थिक दामताकी प्रचुरतामे फैलनेवाली भावनापर जीवनकी सांस्कृतिक महत्ताकी विजयका मन्देश हमें बेनीपुरीजीके अिन वाक्योंमें मिलता है।

‘गेहूँकी आवश्यकता अुसे है, किन्तु, अुसकी चेष्टा रही है गेहूँपर विजय प्राप्त करनेकी। प्राचीन कालके अपवाम, व्रत, तपस्या आदि अुसी चेष्टाके भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं।’

विषय-वस्तु—

गेहूँ और गुलाब दोनों मानवके विकासके लिये समान रूपसे आवश्यक हैं। गेहूँ शारीरिक विकासके लिये तो गुलाब मानसिक विकासके लिये।

पेटकी भूखकी तृप्ति तक तो मानव और पशुमें कोई अन्तर नहीं रहता। बुद्धिका विकास, मानसका विकास ही एक अंसा तत्त्व है जो मनुष्य और पशुमें भेद करता है और मनुष्यको पशुसे श्रेष्ठ सिद्ध करता है। किन्तु गेहूँ और गुलाबकी समान उपयोगिताका यह सन्तुलन आज टूट गया है। परिणामतः संघर्षका सृजन हुआ है ; अशान्ति पैदा हुआ है। किन्तु अशान्ति किसे प्रिय हो सकती है ? अतः इस संघर्षका अन्त होना आवश्यक है। वह कैसे ? इसीके उत्तरमें लेखकने उपाय खोजते हुए कहा है—

‘शरीरपर मानसकी पूर्ण प्रभुता स्थापित हो—गेहूँपर गुलाबकी।’

*

*

*

अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाबकी दुनिया कहेंगे—

गुलाबकी दुनिया-मानसका संसार-सांस्कृतिक जगत। और यही होगा ‘स्थूल शारीरिक, आवश्यकताओंकी जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस जगतका नया लोक जिसमें नृत्य, गीत—आनन्द और अत्साह होगा।’ लेखककी दृष्टिमें तो यह नया लोक अत्यन्त समीप आ भी गया है और वह सभीकी अुनकी आँखोंपर पड़े हुए गेहूँके मोटे पर्वको हटाकर देखनेका आह्वान भी कर रहा है। वह कहता है—

‘शौके दीवार अगर है, तो नजर पैदा कर।’

* * *

गेहूँ बनाम गुलाब

गेहूँ हम खाते हैं, गुलाब सूँघते हैं। अकेले शरीरकी पुष्टि होती है दूसरेसे हमारा मानस तृप्त होता है।

गेहूँ बड़ा या गुलाब? हम क्या चाहते हैं... पुष्ट शरीर या तृप्त मानस? या पुष्ट शरीरपर अतृप्त मानस!

जब मानव पृथ्वीपर आया, भूख लेकर। कषुधा, कषुधा, पिपासा, पिपासा। क्या खाओ, क्या पियो? माँके स्तनोंको निचोड़ा, वृक्षोंको झकझोरा, कीट पतंग, पशु-पक्षी... कुछ न छूट पाओ अस्से!

गेहूँ... अस्की भूखका काफला आज गेहूँपर टूट पड़ा है। गेहूँ अुपजाओ, गेहूँ अुपजाओ, गेहूँ अुपजाओ!

मैदान जोते जा रहे हैं, बाग अुजाड़े जा रहे हैं... गेहूँके लिये!

बेचारा गुलाब... भरी जवानीमें कहीं सिसकियाँ ले रहा है! शरीरकी आवश्यकताने मानसिक वृत्तियोंको कहीं कोनेमें डाल रखा है, दबा रखा है।

*

*

*

किन्तु, चाहे कच्चा चरे, या पकाकर खाओ... गेहूँ तक पशु और मानवमें क्या अन्तर? मानवको मानव बनाया गुलाबने!

मानव, मानव तब बना जब उसने शरीरकी आवश्यकताओंपर मानसिक वृत्तियोंको तरजीह दी !

यही नहीं, जब उसके पेटमें भूख खाँव-खाँव कर रही थी, तब भी उसकी आँखें गुलाबपर टँगी थीं, टँकी थीं ।

असका प्रथम संगीत निकला, जब उसकी कामिनियाँ गेहूँको अखल और चक्कीमें कूट-पीस रही थीं । पशुओंको मारकर, खाकर ही वह तृप्त नहीं हुआ, उसकी खालका बनाया ढोल और अनुकी सींगकी बनायी तुरही । मछली मारनेके लिये जब वह अपनी नावमें पतवारका पंख लगाकर जलपर अड़ा जा रहा था, तब उसके छप-छपमें उसने ताल पाये, तराने छोड़े ! बाँससे उसने लाठी ही नहीं बनायी, बंशी भी बजायी !

रातका काला-घुप्प पर्दा दूर हुआ, तब वह अच्छ्वसित हुआ सिर्फ़ असिलिये नहीं कि अब पेट-पूजाकी समिधा जुटानेमें उसे सहूलियत मिलेगी, बल्कि वह आनन्द विभोर हुआ अुषाकी लालिमासे, अुगते सूरजकी शनैः-शनैः प्रस्फुटित होनेवाली सुनहली किरणोंसे, पृथ्वीपर चमचम करते लक्ष-लक्ष ओस-कणोंसे ! आसमानमें जब बादल अुमड़े, तब अनुमें अपनी कृषिका आरोप करके ही वह प्रसन्न नहीं हुआ, अनुके सौन्दर्य-बोधने उसके मन-मोरको नाच अुठनेके लिये लाचार किया—अिन्द्रधनुषने उसके हृदयको भी अिन्द्रधनुषी रंगोंमें रँग दिया !

मानव शरीरमें पेटका स्थान नीचे है, हृदयका अूपर और मस्तिष्कका सबसे अूपर ! पशुओंकी तरह असका पेट और मानस समानान्तर रेखामें नहीं है ! जिस दिन वह सीधे तनकर खड़ा हुआ, मानसने उसके पेटपर विजयकी घोषणा की !

गेहूँकी आवश्यकता असे है, किन्तु, अउसकी चेष्टा रहीं है
गेहूँपर विजय प्राप्त करनेकी ! प्राचीन कालके अुपवास, व्रत,
तपस्या, आदि अुसी चेष्टाके भिन्न-भिन्न रूप रहे हैं ।

*

*

*

जब तक मानवके जीवनमें गेहूँ और गुलाबका सन्तुलन रहा,
वह सुखी रहा, सानन्द रहा ।

वह कमाता हुआ गाता था और गाता हुआ कमाता था ।
अुसके श्रमके साथ संगीत बँधा हुआ था, रातमें रास रचाता था ।

पृथ्वीपर चलता हुआ, वह आकाशको नहीं भूला था और
जब आकाशपर अुसकी नजरें गड़ी थीं, अुसे याद था कि अुसके पैर
मिट्टीपर हैं ।

किन्तु, धीरे-धीरे यह सन्तुलन टूटा !

अब गेहूँ प्रतीक बन गया हड्डी तोड़नेवाले, थकानेवाले,
अुबानेवाले, नारकीय यन्त्रणाओं देनेवाले श्रमका... अुस श्रमका,
जो पेटकी कषुधा भी अच्छी तरह शान्त न कर सके ।

और, गुलाब बन गया प्रतीक विलासिताका... भ्रष्टाचारका,
गन्दगी और गलीजका ! वह विलासिता... जो शरीरको नष्ट
करती है और मानसको भी ।

अब अुसने साँवले हाथमें शंख और चक्र लिखे । नतीजा....
महाभारत और यदुवंशियोंका सर्वनाश !

वह परम्परा चली आ रही है ! आज चारों ओर महा-
भारत है, गृहयुद्ध है... सर्वनाश है, महानाश है !

गेहूँ सिर धुन रहा है खेतोंमें, गुलाब रो रहा है बगीचोंमें...
दोनों अपने-अपने पालन-कर्तव्योंके भाग्यपर, दुर्भाग्यपर... !

*

*

*

चलो, पीछे मुड़ो। गेहूँ और गुलाबमें हम फिर अेक बां सन्तुलन स्थापित करें।

किन्तु मानव क्या पीछे मुड़ा है, मुड़ सकता है?

यह महायात्री आगे बढ़ता रहा है, आगे बढ़ता रहेगा!

और क्या नवीन संतुलन चिर स्थायी हो सकेगा? क्या अतिहास फिर दुहराकर नहीं रहेगा?

नहीं, मानवको पीछे मोड़नेकी चेष्टा न करो।

अब गुलाब और गेहूँमें फिर सन्तुलन लानेकी चेष्टामें सिखपानेकी आवश्यकता नहीं!

अब गुलाब गेहूँपर विजय प्राप्त करे!

गेहूँपर गुलाबकी विजय... चिर विजय! अब नअे मानवक यह नयी आकांक्षा हो!

क्या यह सम्भव है?

बिलकुल, सोलह आने सम्भव है!

विज्ञानने बता दिया है..... यह गेहूँ क्या है? और अुसने यह भी जता दिया है कि मानवमें यह चिर बुभुक्षा क्यों है।

गेहूँका गेहूँत्व क्या है, हम जान गअे हैं। यह गेहूँत्व अुसने आता कहाँसे है, हमसे यह भी छिपा नहीं है!

पृथ्वी और आकाशसे कुछ तत्व अेक विशेष प्रक्रियासे पौधोंकी बालियोंमें संग्रहीत होकर गेहूँ बन जाते हैं! अुन्हें तत्वोंकी कमी, हमारे शरीरमें, भूख नाम पाती है!

क्यों पृथ्वीकी जुतायी, कुड़ायी, गुड़ायी! क्यों आकाशक दुहायी, हम पृथ्वी और आकाशसे अुन तत्वोंको सीधे क्यों नहें ग्रहण करें?

यह तो अनहोनी बात—अुटोपिया, अुटोपिया !

हाँ, यह अनहोनी बात, अुटोपिया तब तक बनी रहेगी, जब तक विज्ञान संहार-काण्डके लिये ही आकाश-पाताल अेक करता रहेगा । ज्यों ही अुसने जीवनकी समस्याओंपर ध्यान दिया, यह हस्तामलकवत सिद्ध होकर रहेगी !

और, विज्ञानको अिस ओर आना है, नहीं तो मानवका क्या, सारे ब्रम्हांडका संहार निश्चित है !

विज्ञान धीरे-धीरे अिस ओर कदम बढ़ा भी रहा है !

कम-से-कम अितना तो बहुत तुरन्त कर ही देगा कि गेहूँ अितना पैदा हो कि जीवनकी अन्य परमावश्यक वस्तुअें—हवा, पानीकी तरह—अिफरात हो जाअें ! बीज, खाद, सिंचाअी, जुताअीके अैसे तरीके निकलते ही जा रहे हैं, जो गेहूँकी समस्याको हल कर दें !

प्रचुरता—शारीरिक आवश्यकताओंकी पूर्ति करनेवाले साधनोंकी प्रचुरताकी ओर आजका मानव प्रभावित हो रहा है ।

*

*

*

प्रचुरता ?—अेक प्रश्न चिन्ह !

क्या प्रचुरता मानवको सुख और शान्ति दे सकती है ?

हमारा सोनेका हिन्दोस्तान—यह गीत गाअिये, किन्तु यह न भूलिये कि यहाँ अेक सोनेकी नगरी थी, जिसमें राक्षसता वास करती थी !

राक्षसता—जो रक्त पीती थी, अभक्ष्य खाती थी, जिसके अकाय शरीर थे, दस सिर थे, जो छह महीने सोती थी,

जिसे दूसरेकी बहू-बेटियोंको अड़ा ले जानेमें तनिक भी झिझक नहीं थी ।

गेहूँ बड़ा प्रबल है—वह बहुत दिनों तक हमें शरीरका गुलाम बनाकर रखना चाहेगा । पेटकी कषुधा शान्त कीजिअे, तो वह वासनाओंकी कषुधा जागृत कर आपको बहुत दिनोंतक तबाह करना चाहेगा ।

तो, प्रचुरतामें भी राक्षसता न आये, अिसके लिअे क्या अुपाय ?

अपनी वृत्तियोंको वशमें करनेके लिअे आजका मनोविज्ञान दो अुपाय बताता है—अिन्द्रियोंके संयमनका और वृत्तियोंके अुन्नयनका !

संयमनका अुपदेश हमारे ऋषि-मुनि देते आये हैं, । किन्तु, अिसके बुरे नतीजे भी हमारे सामने हैं—बड़े-बड़े तपस्वियोंकी लम्बी-लम्बी तपस्याओं अेक रम्भा, अेक मेनका, अेक अुर्वशीकी मुस्कानपर खलित हो गयीं !

आज भी देखिअे । गाँधीजीके तीस वर्षके अुपदेशों और आदेशोंपर चलनेवाले हम तपस्वी किस तरह दिन-दिन नीचे गिरते जा रहे हैं ।

अिसलिअे अुपाय अेकमात्र है—वृत्तियोंके अुन्नयनका !

कामनाओंको स्थूल वासनाओंके कषेत्रसे अूपर अुठाकर सूक्ष्म भावनाओंकी ओर प्रवृत्त कीजिअे !

शरीरपर मानसकी पूर्ण प्रभुता स्थापित हो—गेहूँ पर गुलाबकी !

गेहूँके बाद गुलाब—बीचमें कोओ दूसरा टिकाव नहीं,
ठहराव नहीं !

*

*

*

गेहूँकी दुनिया खत्म होने जा रही है—वह स्थूल दुनिया,
जो आर्थिक और राजनैतिक रूपमें हम सबपर छाओ हुओ है !

जो आर्थिक रूपमें रक्त पीती रही है, राजनैतिक रूपमें
रक्तकी धारा बहाती रही है !

अब वह दुनिया आनेवाली है जिसे हम गुलाबकी दुनिया
कहेंगे ।

गुलाबकी दुनिया—मानसका संसार—सांस्कृतिक जगत ।

अहा, कैसा वह शुभ दिन होगा जब हम स्थूल शारीरिक
आवश्यकताओंकी जंजीर तोड़कर सूक्ष्म मानस-जगतका नया
लोक बसाओंगे ।

जब गेहूँसे हमारा पिड छूट जाओगा और हम गुलाबकी
दुनियामें स्वच्छन्द विहार करेंगे !

गुलाबकी दुनिया—रंगोंकी दुनिया, सुगन्धोंकी दुनिया !

भौरे नाच रहे, गूंज रहे, फुलसुँघनी फुदक रही, चहक
रही !

नृत्य, गीत—आनन्द, अछाह !

कहीं गन्दगी नहीं, कहीं कुरूपता नहीं ! आँगनमें गुलाब,
खेतोंमें गुलाब । गालोंपर गुलाब खिल रहे, आँखोंसे गुलाब झाँक
रहा !

जब सारा मानव-जीवन रंगमय, सुगन्धमय, नृत्यमय, गीत-
मय बन जाओगा !

वह आ रहा है—क्या आप देख नहीं रहे? कैसी आँखें है आपकी! शायद अनुपर गेहूँका मोटा पर्दा पड़ा हुआ है। पर्देको हटाओ और देखो वह अलौकिक, स्वर्गीय दृश्य इसी लोकमें, अपनी इस मिट्टीकी पृथ्वीपर ही!

“शौके दीदार अगर है, तो नजर पैदा कर!”

* * *

१०.

मेरा बचपन

* * *

—स्व. रवीन्द्रनाथ ठाकुर

स्व. रवीन्द्रनाथ ठाकुर

आपका जन्म ७ मजी, सन १८६१ को कलकत्ताके अेक सम्पन्न परिवारमे हुआ था। आपने जिस कुटुम्बमें जन्म लिया उसपर लक्ष्मी और सरस्वती दोनोंकी असीम कृपा थी। परिवारकी अपनी विशेषताओं—अध्यात्म-चिन्तन, साहित्य-साधना, कला-अुपासना, राष्ट्रोद्धार, समाज-सुधार आदिका बालक रवीन्द्रपर असर होना स्वाभाविक ही था। घरके ठाठ-बाटके बन्धनोंने तथा अन्य कअी परिस्थितियोंने कविको आरम्भ-ही-से अन्तर्मुखी प्रवृत्तिका बना दिया था, जिससे अुनके कवि-संस्कारोंके विकासके लिअे तेजीसे अपुयुक्त भूमि तैयार हो चली। हिमालयकी यात्रामें निसर्गकी विराट झाँकी देखनेके अनुपम अवसरने रवीन्द्रके कवि-हृदयको कमलकी तरह खिलकर अपनी प्रतिभा पराग बिखेरनेको अुतावला कर दिया। शान्ति-निकेतनके मुक्त वातावरणमें आपने अपनी आन्तरिक अुमंगों (काव्य-सर्जना) की पूर्ति की।

आपका व्यक्तित्व बहुत विशाल था। आपकी रचनाओंका परिमाण और गाम्भीर्य अतुलनीय है। साहित्यके प्रत्येक क्षेत्रको आपने अपनी प्रतिभाके बलपर अत्यधिक समृद्ध बनाया है। कविता, कहानी, अपुन्यास, नाटक, प्रबन्ध, समालोचना, गान आदिके क्षेत्रमें आपने भारतीय साहित्यको जो कुछ दिया है वह अपूर्व और अपरिमेय है।

भानुसिंहेर पदावली, कविकाहनी, ठाकुरानीरहाट, पृथ्वीराज पराजय, रुद्रचंड, भग्न हृदय, कालमृगया, वाल्मीकि प्रतिभा, शैशव संगीत, संध्या संगीत, और प्रभात संगीत, छवि ओ गान, कड़िओ कोमल, प्रकृतिर प्रतिशोध, मायार खेला, राजा ओ रानी, विसर्जन, चित्रांगदा, बिदाय अभिशाप, मानसी, सोनारतरी, चित्रा, चैताली, कल्पना, नैवेद्य, खेया, प्रायश्चित्त, राजा, गोरा, गीतांजलि, जीवनस्मृति, अचलायतन, डाकघर आदि आपकी रचनाअें हैं। 'गीतांजलि' पर ही आपको १३ नवम्बर, सन १९१३ में 'नोबल पुरस्कार'

मिला था। विश्वकविकी यह अमर काव्यकृति और 'विश्वभारती, शान्ति-निकेतन' आपकी सजीव स्मृति है। जबतक अिन दोनोंका अस्तित्व है तबतक कवीन्द्र रवीन्द्र भारतके साहित्यकाशमें अेक प्रेरक और ज्वलन्त प्रतीक बनकर चमकते रहेंगे।

प्रस्तुत निबन्धमें यह बताया गया है कि धनी परिवारके बालकोंके चारों ओर बन्धनोंकी बड़ी-बड़ी दीवारे खड़ी रहती हैं जिनके कारण वे स्वच्छन्दतापूर्वक-स्वतन्त्रतापूर्वक जीवनका आनन्द नहीं अुठा सकते। कविके लिअे अनुभवोंका भरा-पूरा खजाना होना अत्यन्त आवश्यक है और अिमीलिअे अैसी स्वतन्त्रता प्राप्त करनेके लिअे बचपनमे ही कविकी आत्मा छटपटानी थी। कविकी प्रतिभाका भी स्वाभाविक विकास तभी हुआ जब अुमने अपनेको अिन सभी बन्धनोंसे मुक्त कर लिया।

जटिल-से-जटिल विषयको भी, कविकी विनादपूर्ण प्रकृति तथा स्पष्ट वर्णन-शैली मनोरंजक बना देती है। हर विषयपर अुनके सुलझे हुआ विचार रहते हैं जिनकी स्पष्ट झाँकी हम अिम निबन्धमें पाते हैं।

* * *

विषय-वस्तु—

बड़े लोगोंकी बचपनकी बातें हमारे जीवनको सावधान करनेमें, अन्नत बनानेमें सहायक होती हैं। बड़े घरोंके बालक अक्सर नौकरों-चाकरों, घरकी चहार दीवारोंसे घिरे और प्रतिष्ठा और सम्मानकी दुर्लभ सीमाओंमें बँधे रहते हैं। परिणाम स्वरूप बाहरके स्वच्छन्द वातावरणसे, अनुभूत जीवनसे उनका सम्पर्क बहुत कम आता है। जो अिन दीवारोंको बाँधने और बन्धनोंको तोड़नेमें सफल हो जाते हैं वे सफल जीवन बिता सकते हैं, बिताते हैं। कविवर रवीन्द्रका भी यही मत है कि 'यदि हम अँसा खयाल बना लें कि बच्चेको घरसे बाहर नहीं जाने देंगे, उसके खेलमें खलल डालेंगे और उसे भले मानसकी तरह शान्तिसे बिठाए रखेंगे, तो निश्चय ही हम अत्यन्त कठिन समस्याको सृष्टि करेंगे।' तब फिर अुचित यही है कि 'यदि वह खेल सके, बौड़ सके, अपना कुतूहल मिटा सके तभी सहज स्वाभाविक हो सकता है।'

अपने असि सिद्धान्तके प्रतिपादनमें कविवरने अपने ही बचपनके जीवनकी घटनाओंका अुदाहरण देते हुअे असि सिद्धान्तका प्रस्तुत निबन्धमें समर्थन किया है।

* * *

मेरा बचपन

अपने बचपनकी ओर जब मैं मुड़कर देखता हूँ तो जगत और जीवन-रहस्यसे परिपूर्ण मालूम होते हैं। उस समय यह बात प्रति दिन ही मनमें जागा करती थी कि संसारमें सर्वत्र ही कुछ न-कुछ अद्भुत और अचिन्तनीय है, और कब वह दिखायी दे जाये, उसका कोअी ठीक नहीं। प्रकृति मानो मुट्ठी बन्द करके हँसती हुआी पूछा करती थी—अिसमें क्या है बताना भला ? उसमें क्या नहीं हो सकता है—निश्चित रूपसे नहीं बता सकता था।

घरसे बाहर जाना हम लोगोंके लिअे निषिद्ध था, यहाँतक कि घरके भीतर भी जहाँ जी चाहे, वहाँ हम आ-जा नहीं सकते थे, अिसलिअे हमें विश्व प्रकृतिकी ओटमेंसे ही देखना पड़ता था। बाहर नामका अेक अनन्त प्रसारित पदार्थ था, जो मेरे लिअे दूरकी वस्तु थी, किन्तु उसका रूप-रस-शब्द-गन्ध दरवाजे और जंगलोंके नाना छिद्रोंमेंसे घुसकर मुझे अचानक छू जाता और मेरे साथ खेलनेकी कोशिश करता रहता। वह था मुक्त, मैं था बन्दी,—मिलनेका कोअी अुपाय नहीं था, अिसीलिअे आकर्षण प्रबल था। आज खड़ियाकी वह लकीर मिट गयी है, किन्तु लीक नहीं मिटी है। दूर अब भी दूर है, बाहर अब भी बाहर ही है।

बड़े होनेपर इसी भावको व्यक्त करनेवाली जो कविता मैंने लिखी थी, वह अब भी याद है:—

घरकी चिड़िया थी पिंजड़ेमें, वनकी चिड़िया वनमें,
मिलीं अंक दिन अकस्मात् वे, था कुछ विधिके मनमें ।
वनकी चिड़िया बोली तब यों, “ सुन री पिंजड़ेवाली,
अड़ चल वनको मेरे संग तू, कर दे पिंजड़ा खाली । ”
बोली पिंजड़ेकी चिड़िया तब, “ सुन री चिड़िया वनकी,
तू भी आ, बस जा पिंजड़ेमें, बात करें दो मनकी । ”
“ मैं क्यों फँसूँ भला बन्धनमें ! ” — वनकी चिड़िया बोली ।
हो अुदास पिंजड़ेकी चिड़िया, मन-ही-मनमें रो ली,—
“ छोड़ चलूँ मैं सोनेका घर, भटकूँ जाकर वनमें ? ”
घरकी चिड़िया थी पिंजड़ेमें, वनकी चिड़िया वनमें ॥

जब मैं कुछ बड़ा हुआ और नौकरोंका शासन कुछ शिथिल हुआ, जब घरमें नही बहुओंका समागम हुआ और अवकाशके साथियोंके रूपमें अनुकी तरफसे मुझे प्रश्रय मिलने लगा, तब किसी-किसी दिन मैं दोपहरको अपने घरकी छतपर पहुँच जाता था । उस समय जब सब घरवाले खा-पी चुकते थे, घरके काम-धन्धोंसे सबको छुट्टी मिल जाती थी, अन्तःपुर विश्राममें मग्न रहता था, सूखनेके लिये फैलायी गयी भीगी साड़ियाँ छतकी कार्निशोंपर हवा खाया करती थीं, और आँगनमें पड़ी जूठनपर कौओंकी सभा बैठ जाती थी, तब उस निर्जन अवकाशमें प्राचीरके छिद्रोंमेंसे पिंजड़ेकी चिड़ियाका वनकी चिड़ियाके साथ, चोंचके द्वारा, परिचय चालू हो जाया करता था । बड़ी देरतक खड़ा-खड़ा मैं देखा करता था—अपने मकानकी चहारदीवारीके भीतरका

बगीचा और अुसके चारों तरफ खड़े हुअे नारियलके पेड़ । अुन्हींके बीचमेंसे दिखाअी देता था—सिन्धी-बगान मुहल्लेका अेक तालाब, और अुस तालाबके किनारे, अुस तारा ग्वालिनका घर, जो हमारे घर दूध देने आया करती थी । अुससे भी दूर दिखाअी देता था पेड़ोंकी चोटियोंके साथ मिली हुअी कलकत्ता शहरकी नाना आकार और नाना प्रकारकी दीवारोंवाली अूंची-नीची छतें, जो दोपहरकी धूपकी प्रखर शुभ्रताके साथ पूर्व दिगन्तकी पाण्डु वर्ण नीलिमामें समाअी जा रही थी । अुन अति दूरवर्ती मकानोंकी छतोंपर जीनोंकी गुमटियाँ सिर अुठाअे खड़ी रहतीं । अैसा मालूम होता मानो वे निश्चल तर्जनी अुठाअे आँखें मिचकाकर अपने भीतरका रहस्य अिशारोंसे मुझे समझानेकी कोशिश कर रही हों । राजप्रासादके बाहर खड़ा हुआ कोअी भिखारी राज-भंडारके बन्द सन्दूकोंमें अद्भुत रत्न-माणिक्योंकी जिस प्रकार कल्पना किया करता है, मैं भी अुसी तरह अुन अपरिचित मकानोंको न जाने कितने खेल और कितनी स्वाधीनताका भंडार समझा करता था—आज कुछ कह नहीं सकता । सिरके अूपर आकाशव्यापी प्रखर धूप होती, आकाशके दूरतम प्रान्तसे चीलोंकी सूक्ष्म-तीक्ष्ण पुकार मेरे कानोंमें आकर प्रवेश करती रहती, और सिन्धी-बगानकी गलीमें दिवा-निद्रामें मग्न मकानोंके सामनेसे फेरीवाले बिसाती अपने अेक खास स्वरमें ‘चूड़ी लो, चूड़ी ! खिलौने लो, खिलौने !’ की आवाज देतें हुअे चले जाते ! यह सब देख-सुनकर मेरे मनमें अेक तरहकी अुदासी छा जाती थी ।

मेरे पिताजी प्रायः भ्रमण किया करते थे, घरपर बहुत कम रहते थे। उनका तीसरी मंजिलवाला कमरा प्रायः बन्द रहता था। झिलमिलीके अन्दर हाथ डालकर चिटकनी अुठाकर मैं उस कमरेका दरवाजा खोल लेता, और कमरेमें दक्षिणकी तरफ रखे हुअे सोफेपर चुपचाप पड़ा-पड़ा दुपहरी बिता देता। अेक तो प्रायः बन्द रहने-वाला कमरा, दूसरे प्रवेश निषिद्ध होनेके कारण, मेरे लिअे उस कमरेमें मानो अेक तरहका रहस्य छिपा था। असिके अलावा और भी अेक आकर्षण था। शहरमें तब नअे-नअे पानीके नल लगे थे। तब उस नअी महिमाकी अुदारताने भारतीय मुहल्लोंमें कंजूसी शुरू नहीं की थी। शहरके दक्षिण और अुत्तरमें उसका समान दाक्षिण्य था। पानीके नलके उस सतयुगमें पिताजीके स्नान-घरमें तीसरी मंजिलपर भी पानी चढ़ता था। नलकी टोंटी खोलकर मैं असमयमें भी जी भरकर नहाकर मनके अरमान मिटा लेता। मेरा वह स्नान आरामके लिअे नहीं, सिर्फ अिच्छाकी पूर्ति मात्रके लिअे होता। अेक ओर मुक्ति और दूसरी ओर बन्धनकी आशंका—दोनों मिलकर मेरे मनमें पुलक-शर बरसाती रहतीं।

बाहरका सम्पर्क मेरे लिअे कितना ही दुर्बल क्यों न रहा हो, किन्तु बाहरका आनन्द मेरे लिअे शायद अिसी कारण सहज था। अुपकरणोंकी भरमार होनेसे मन आलसी हो जाता है, और वह हमेशा बाहरपर ही सब कुछ छोड़कर बैठ जाता है। वह यह भूल जाता है कि आनन्दके भोजनं बाहरकी अपेक्षा भीतरका अनुष्ठान ही मुख्य है। बचपनमें मनुष्यकी सर्वप्रथम शिक्षा यही

है। बचपनमें उसकी पूंजी कम और तुच्छ होती है, किन्तु आनन्द पानेके लिये इससे ज्यादा उसे और किसी चीजकी जरूरत नहीं। संसारमें जो अभाग बच्चा खेलकी काफी चीजें पाता रहता है, उसका खेल ही मिट्टी हो जाता है।

खूब याद है, दक्षिणके बरामदेके अंक कोनेमें सीताफलके बीज गाड़कर रोज उसमें पानी दिया करता था। उस बीजसे पेड़ भी हो सकता है—यह सोचकर मनमें बड़ा आश्चर्य और अत्साह पैदा होता था। सीताफलके बीजसे अब भी अंकुर निकलते हैं, किन्तु उसके साथ-साथ अब मनके अन्दर विस्मय अंकुरित नहीं होता। यह शरीफके बीजका दोष नहीं, मनका ही दोष है। गुणेश भाभी साहबके बगीचेके क्रीड़ा-शैल (बनावटी पहाड़) से पत्थर चुरा-चुराकर हम लोगोंने भी अपने पढ़नेके कमरेके अंक कोनेमें नकली पहाड़ बनाना शुरू कर दिया था। उसपर अधर-अधर फूलोंके पौधे लगा दिये थे। उनकी सेवाके नामपर उनके प्रति हम लोग अतना अत्याचार किया करते थे कि बेचारे, चूँकि वे पेड़ थे, इसीलिये सब कुछ चुपचाप सह लेते थे। उस पहाड़से हमें कितना आनन्द और आश्चर्य होता था, उसे शब्दोंमें कहकर समाप्त नहीं किया जा सकता। हमारे मनमें ऐसा विश्वास था कि हमारी यह सृष्टि गुरुजनोंके लिये भी जरूर आश्चर्यकी वस्तु होगी, किन्तु जिस दिन अपने उस विश्वासकी परीक्षाका मौका हाथ आया, उसी दिन देखा गया कि हमारे कमरेका वह पहाड़ अपने पेड़-पौधों समेत न जाने कहाँ अन्तर्धान हो गया। पढ़नेका कमरा पर्वत-सृष्टिका

अुपयुक्त क्षेत्र नहीं है—अिस बातकी शिक्षा जिस तरह अकस्मात और जैसी रुढ़ताके साथ मिली, अुससे हम लोगोंको बड़ा दुख हुआ था । हमारे खेलके साथ बड़ोंकी अिच्छाके अैसे जबरदस्त प्रभेदकी याद करके, कमरेसे हटाअे गअे पत्थरोंका बोझ हमारे मनमें जमकर बैठ गया ।

अुस जमानेमें अिस पृथ्वीका रस हमारे लिअे कैसा आकर्षक था ! क्या मिट्टी और क्या पानी, क्या पेड़-पौधे और क्या आकाश—सभी मानों मुझसे बातें करते थे, मनको किसी भी हालतमें अुदास नहीं रहने देते थे । पृथ्वीको सिर्फ अूपरसे ही देख सका हूँ, अुसके भीतरका कुछ भी नहीं देख पाया है—अिस बातने मेरे मनको कितने दिनों तक परेशान किया था, आज कह सकना कठिन है । किस प्रकार पृथ्वीकी यह मटीले रंगकी मोटी जिल्द खोली जा सकती है, अिसके सम्बन्धमें अुस समय न जाने मैंने कितने तरीके सोचे होंगे । कभी मन-ही-मन सोचता कि अेकके बाद अेक, अिस तरह बहुतसे बाँस यदि ठोक-ठोककर गाड़े जाअें, तो पृथ्वीके गम्भीरतम तलका किसी प्रकार पता लगाया जा सकता है । माघोत्सव के अुपलक्षमें हमारे घरके बाहरवाले आँगनमें चारों ओर कतारसे लकड़ीके खम्भे गाड़े जाते थे । अिसके लिअे माघके पहले दिनसे ही आँगनमें मिट्टीकी खुदाअी शुरू हो जाती थी । सर्वत्र ही अुत्सवका आरम्भ लड़कोंके लिअे अत्यन्त अौत्सुक्य-जनक होता है, किन्तु मेरे लिअे यह जर्मनीकी खुदाअी विशेष रूपसे आकर्षक थी । यद्यपि प्रत्येक वर्ष ही अिस तरह जमीनका खोदा

जाना में देखा करता था, देखा करता था कि गड्ढे गहरे होते होते अतने गहरे हो जाते थे कि अंनमें आदमी समा जाता था, किन्तु अंनमें कभी ऐसा कुछ दिखायी न दिया, जो किसी राजपुत्रकी पातालपुर-यात्राको सफल कर सके। फिर भी प्रत्येक बार ऐसा लगता, मानो किसी रहस्यपूर्ण सन्दूकका ढकना खोला जा रहा हो। कभी ऐसा भी सोचता कि अगर और जरा खोदा जाये, तो शायद पता लग सकता है। किन्तु वर्षके बाद वर्ष बीतते गये, वह 'और जरा' किसी बार भी खोदा नहीं गया। कभी सोचता था—अगर बड़े लोग चाहें, तो सब कुछ करा सकते हैं, मगर ये लोग ऐसा क्यों नहीं कराते—रुक क्यों जाते हैं ! हम जैसे छोटोंकी आज्ञा अगर चलती होती, तो पृथ्वीका गूढ़तम सम्वाद अिस तरह अुदासीन रूपमें मिट्टीमें दबा न पड़ा रहता।

अेक और बात मनमें प्रायः अुठा करती थी, वह यह कि आकाशमें नीलिमाके पीछे आकाशका सारा रहस्य छिपा पड़ा है। जिस दिन हमारे पंडितजीने 'बोधोदय' पढ़ाते समय हमें बताया कि आकाश तो शून्य है दीखनेवाली नीलिमा कोअी बाधा नहीं है, अुस दिन ऐसा असम्भव आश्चर्य हुआ था कि कहा नहीं जा सकता। अुन्होंने कहा—सीढ़ी-पर-सीढ़ी लगाते हुअे चाहे जितना चढ़ते जाओ, कहीं भी सिर न टकराअेगा। मैंने सोचा कि सीढ़ियोंके विषयमें वे अनावश्यक कंजूसी कर रहे हैं। मैं बराबर स्वर चढ़ाता हुआ कहता गया, 'फिर सीढ़ी,' 'फिर सीढ़ी,' 'फिर सीढ़ी,' 'और भी सीढ़ी !' अन्तमें जब समझमें आ गया कि सीढ़ियोंकी संख्या

बढ़ानेसे कोअी लाभ नहीं, तब आश्चर्यसे दंग रहकर सोचने लगा, और तब मुझे अँसा लगा कि यह जो अेक आश्चर्यकी बात है अुसे केवल मास्टर लोग जानते है, और कोअी नहीं जानता ।

भारतवर्षके अतिहासमें दास-राजाओंका राज्य-काल सुखका काल नहीं था । अपने जीवनके अतिहासमें भी भृत्योंके शासन-कालपर जब दृष्टि डालता हूँ, तो अुसमें भी किसी प्रकारके आनन्दके दर्शन नहीं पाता । मेरे घरमें भी अिन राजाओंका—मेरा मतलब भृत्योंसे है—परिवर्तन बार-बार होता रहा, किन्तु हमारे भाग्यमें जो निषेध और प्रहारकी व्यवस्था बाँधी थी, अुसमें भी कभी भी कोअी परिवर्तन नहीं हुआ । पीठपर जो पड़ता था, अुसे पीठपर ही सह लेता था और समझता था कि संसारका यही धर्म है—जो बड़े हैं वे मारते हैं और जो छोटे हैं वे मार खाते हैं । अिससे अुलटी बात, अर्थात् जो छोटे हैं वे ही मारते हैं और जो बड़े हैं वे मार खाते हैं—सीखनेमें बहुत ज्यादा देर लगी थी ।

कौन दुष्ट है और कौन शिष्ट—शिकारी अिस बातको पक्षीकी दृष्टिसे नहीं देखता, अपनी ही दृष्टिसे देखता है । अिसीलिअे गोली खानेके पहले जो सतर्क पक्षी शोर मचाकर स्वजातीय दलको भगा देता है, शिकारी अुसे कोसता है । मार खाकर हम रोते थे, किन्तु मारनेवाला अुसे शिष्टोचित नहीं समझता था । वस्तुतः यह रोना भृत्य राजाओंके विरुद्ध राजद्रोहसे कम न था । मुझे अच्छी तरह याद है, अुस राजद्रोहको सम्पूर्ण रूपसे दमन करनेके लिअे, पानीके बड़े बड़े जालाओं (मिट्टीके बने जलपात्र) में हमारे रोदनको

विलुप्त कर देनेकी कोशिश की जाती थी। इस बातको कोअी भी अस्वीकार नहीं कर सकता कि “रोदन” वस्तु प्रहारकारीके लिये अत्यन्त अप्रिय और असुविधाजनक है।

अब मैं कभी-कभी सोचा करता हूँ कि नौकरोंके हाथसे क्यों हम इस तरहका निर्मम व्यवहार पाया करते थे ! मोटे हिसाबसे देखा जाये तो यह नहीं कहा जा सकता कि आकार-प्रकारमें हम स्नेह-दयाके लिये अयोग्य थे। मुख्य कारण यह था कि नौकरोंपर ही हमारा सम्पूर्ण भार जा पड़ा था। और सम्पूर्ण भार निस्सन्देह रूपसे सबके लिये बड़ी असह्य चीज होती है। परम आत्मीय भी उसे खुशीसे नहीं ढो सकते। छोटे बच्चेको यदि छोटा बच्चा रहने दिया जाये, यदि वह खेल सके, दौड़ सके, अपना कुतूहल मिटा सके—तभी वह सहज स्वाभाविक हो सकता है। इसके विपरीत यदि हम ऐसा खयाल बना लें कि बच्चेको घरसे बाहर नहीं जाने देंगे, उसके खेलमें खलल डालेंगे और उसे भले मानसकी तरह शान्तिसे बिठाये रखेंगे, तो निश्चय ही हम अत्यन्त कठिन समस्याकी सृष्टि करेंगे। जब बच्चोंको अपना स्वाभाविक जीवन जीने नहीं दिया जाता, तब वे अपने शासन-कर्ताओंके लिये अंक भार बन जाते हैं। इसके मानी हैं घोड़ेको जमीन पर न चलने देकर उसे कन्धेपर लादे फिरना। जो बेचारा कन्धेपर लादता है, उसका मिजाज ठीक नहीं रह सकता। मजूरीके लोभसे वह कन्धेपर लादता जरूर है, किन्तु बेचारे घोड़ेसे वह कदम-कदमपर बदला लेता रहता है।

अपने बचपनके शासनकर्ताओंमें बहुतोंकी स्मृतियाँ केवल थप्पड़-मुक्कोंकी शकलमें ही याद आती हैं, अिससे ज्यादा और कुछ याद नहीं आता ।

* * *

११.

गोसाओंजीकी कला

* * *

—स्व. डा. श्यामसुन्दरदास

स्व. डा. श्यामसुन्दरदास

श्यामसुन्दरदामजीका जन्म सन १८७५ मे बनारसमें हुआ था। आपका अध्ययन बी० अं० तक हुआ था। कुछ दिनों तक अधर-अधर अध्यापन तथा अन्य कार्य करनेके बाद आप हिन्दू विश्वविद्यालय काशीमें कअरी वर्ष तक हिन्दी-विभागके अध्यक्ष रहे। अिस कार्यसे आपने सन १९३९ में अवकाश ग्रहण किया और ५ वर्ष विश्राम करनेके बाद सन १९४५ में आपका स्वर्ग-वास हो गया।

आपने अपने सतत परिश्रमसे काशी नागरी प्रचारिणी सभा जैसी साहित्यिक संस्थाकी स्थापना करके हिन्दीके अपुकारका चिरस्थापी मार्ग प्रस्तुत कर दिया। अिस सभाकी सारी समृद्धि और कीर्ति आपके ही त्याग और मतत परिश्रमका फल है।

प्रमार और मर्जन दोनों ही क्षेत्रोंमें डा. श्यामसुन्दरदासने हिन्दी साहित्यकी प्रशंसनीय सेवा की। अन्य भाषाओंके साहित्य-शास्त्र और मिद्धान्तोंका अध्ययनकर अुन्हे हिन्दीमे अपुस्थित किया। आनेवाली पीढ़ियोंके लिये मौलिक साहित्य-सृजनकी प्रेरणा आपकी रचनाओंसे मिली।

आप कवियोंकी खोज तथा अितिहास आदिके सम्बन्धमें लेख लिखते आये। आपकी भाषा अिस विशेषताके लिये बहुत प्रसिद्ध है कि अुसमें अरबी, फारसीके विदेशी शब्द नहीं आते। आपकी लेखन-शैली शुद्ध संस्कृतमय है।

आपने बड़ा भारी काम लेखकोंके लिये सामग्री प्रस्तुत करनेका किया है। हिन्दी पुस्तकोंकी खोजके द्वारा आपने हिन्दी साहित्यका अितिहास, कवियोंके चरित्र और अपुनपर प्रबन्ध आदि लिखनेका बहुत-सा मसाला अिकट्ठा कर दिया। आधुनिक हिन्दीके नये-पुराने लेखकोंके संक्षिप्त परिचय, जीवनवृत्त, 'हिन्दी कोविद रत्नमाला' के दो भागोंमें आपने संग्रहीत

किअे हैं। 'भाषा विज्ञान,' 'हिन्दी भाषा और साहित्य' तथा 'साहित्यालोचन' भी आपने लिखी व संकलित की है। 'हिन्दी शब्द सागर' और 'हिन्दी-वैज्ञानिक कोश' का भी सम्पादन आपने किया। अिस कार्यमें आपको अन्य विद्वानोंमें भी सहयोग प्राप्त हुआ था। आपके अिस कार्यने हिन्दी भाषाको अिस योग्य बनानेका महत्वपूर्ण कार्य किया जिससे अुसके द्वारा गम्भीर विषयोंका भी प्रतिपादन किया जा सके।

बाबू साहबका सबसे महत्वपूर्ण कार्य यही रहा कि आपने 'भाषा-विज्ञान' और 'साहित्यालोचन' जैसे गूढ़ और गम्भीर विषयोंपर ही अधिकतर लिखकर अैसे कठिन विषयोंको छोटे-छोटे वाक्यों द्वारा विद्यार्थियोंके लिये सरल बनानेका प्रयत्न किया। अैसा करते समय आप सदा अिसके लिये जागरूक रहे कि वाक्य बड़े न हो जाअे और बात सरलतासे समझमें आ जाअे। भाषाकी कठिनायी या भावोंकी अुलझन न हो। समझानेके लिये अपने विषयको आपने बार-बार दुहराया है।

आपके कुछ निबन्धोंमें हमें हिन्दीके प्रचलित रूपकी भी झाँकी देखनेको मिलती है। आपकी शैलीमें मुहावरों और कहावतोंका प्रयोग नहीं-सा होनेके कारण खटकता भी है।

कहनेका तात्पर्य यह है कि बाबूजीके निबन्धो तथा ग्रन्थोंमें भाषाके दोनों तरहके अुदाहरण मिलते हैं—अेक तो भाषाका साहित्यिक रूप और दूसरे प्रचलित भाषाका सरल रूप, जिसमें सत्यको सरल और सहज ढंगसे व्यक्त किया गया है। आपने अपनी भाषामें विषयोंके अनुरूप व्यावहारिकता, सरलता आदि गुणोंकी रक्षा की। अुसमें तार्किक शैलीका योग है, विचारोंकी प्रधानता है। विषयके स्पष्टीकरणमें व्यास शैलीका प्रयोग है। आपके निबन्धोंमें अध्ययन और संकलन ही आधिकारिक रूपमें बोलता है।

विषय-वस्तु—

गोस्वामी तुलसीदासजीने 'रामचरित-मानस' की असी अनुपम देन दी है जिसे पढ़कर जीवनकी किसी भी समस्याका हल सहज ही में निकाला जा सकता है। यह उनके जीवन सम्बन्धी व्यापक अनुभवका द्योतक है। काव्यकी दृष्टिसे मानसकी महानता उनके महान कवित्व शक्तिकी परिचायिका है। भक्तिके क्षेत्रमें वे रामके अनुपम अनन्य भक्त थे। अपनी अलौकिक कवित्व शक्तिके कारण वे केवल भारतके ही नहीं वरन समस्त संसारके हो गये हैं। उनकी कृतियोंमें कलाकी चरम उत्कर्ष प्राप्त हुआ है।

उनकी यह कला चरम सीमाके भक्त होनेमें, रचनाओंके लिये उपयुक्त पात्रोंके चुनावमें तथा उनको उपस्थित करनेके ढंगमें किस-किस खूबीसे प्रयुक्त हुई है इसका इस निबन्धमें विश्लेषण किया गया है।

* * *

गोसाओंजीकी कला

गोसाओंजी भक्तिके क्षेत्रमें जितने महान थे अतने ही कविताके क्षेत्रमें भी। वस्तुतः उनका कविता भक्तिका ही प्रतिरूप थी। उनकी भक्ति ही वाणीका आवरण पहनकर कविताके रूपमें व्यक्त हुई थी। उनकी कविता अपने आप अपना अद्देश्य नहीं थी। “कवि न होऊँ नहिं चतुर प्रवीना” में जहाँ उनके विनयका पता चलता है, वहाँ यह भी संकेत है कि वे अपनेको कवि न समझकर कुछ और समझते थे। जिस बड़ी अग्रमें उन्होंने कविता करना आरम्भ किया था उससे पता चलता है कि जिसे मिल्टन अन्नत-मनाओंकी निर्बलता कहते हैं, वह यशोलिप्सा उन्हें छू तक नहीं गयी थी।

जिस प्रकार गोसाओंजीका जीवन राममय था उसी प्रकार उनकी कविता भी। अक रामको अपनाकर उन्होंने सारे जगतको अपना लिया। ‘राम-चरित’ कहकर कोअी वस्तु असी न रही जिसके विषयमें उनके लिअे कहना शेष रह गया हो। राम-चरित्रकी व्यापकतामें उन्हें अपनी कलाके सम्पूर्ण कौशलके विस्तारका सुयोग प्राप्त था। असीमें उन्होंने अपनी सूक्ष्म पर्यवेक्षण-शक्तिका परिचय दिया। अन्तःप्रकृति और बाह्य प्रकृति दोनोंसे उनके हृदयका

समन्वय था। दोनोंको अन्होंने भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें देखा था। अुनकी पारगामी, सूक्ष्म दृष्टि अुनके अन्तस्तलतक पहुँची थी। अिसीसे अुन्हें चरित्र-चित्रण और प्रकृति-चित्रण दोनोंमें सफलता प्राप्त हुअी। परन्तु गोसाअीजी आध्यात्मिक, धर्मशील प्रकृतिके मनुष्य थे। सबके संरक्षणक रामके प्रेमने अुन्हें संरक्षणके मूल शीलमय धर्मका प्रेमी बनाया था, जिसके संरक्षणमें अुन्हें प्रकृति भी संलग्न दिखाअी देती थी। पम्पासरोवरका वर्णन करते हुअे वे कहते हैं—

फल-भर नम्र विटप सब, रहे भूमि निअराअि।

पर अुपकारी पुरुष जिमि, नर्वाह सुसम्पति पाअि ॥

सुखी मीन सब अेक रस, अति अगाध जल माहि

जथा धर्मशीलन्हके, दिन सुख-संजुत जाहि ॥

प्राकृतिक दृश्योंमें शील-संरक्षिका धर्मशील नीतिकी यह छाया अुनके काव्योंमें सर्वत्र दिखाअी देती है। किष्किन्धा काँडके अन्तर्गत वर्षा और शरद ऋतुके वर्णन अिसके बहुत अच्छे अुदाहरण हैं। यह गोसाअीजीका महत्व है कि धर्म-सादृश्य, गुणोत्कर्ष आदि अलंकार-योजनाके सामान्य नियमोंका निर्वाह करते हुअे भी वे शील और सुरुचिके प्रसारमें समर्थ हुअे हैं।

बाह्य प्रकृतिसे अधिक गोसाअीजीकी सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि अन्तः-प्रकृतिपर पड़ी थी। मनुष्य-स्वभावसे अुनका सर्वांगीण परिचय था। भिन्न-भिन्न अवस्थाओंमें पड़कर मनकी क्या दशा होती है, अिसको वे भली भाँति जानते थे। अिसीसे अुनका चरित्र-चित्रण बहुत पूर्ण और दोष-रहित हुआ है। रामचरितमानसमें प्रायः सभी प्रकारके पात्रोंके चरित्र-अंकनमें अपनी सिद्धहस्तता दिखाअी

है। दूसरेके अतुल्यको अकारण ही न देख सकनेवाले दुर्जन किस प्रकार किसी दूसरे व्यक्तिको अपनी मनोवृत्ति देनेके लिये पहले स्वयं स्वार्थ-त्यागी बनकर अपनेको अनिष्ट हितैषी जताकर अन्तः हृदयमें अपने भावोंको भरते हैं, इसका मन्थराके चरित्रमें हमें अच्छा दिग्दर्शन मिलता है। दुर्जनोंकी जितनी चालें होती हैं, अन्तर्हीके दिग्दर्शनके लिये मानो सरस्वती मन्थराकी जिह्वापर बैठी थी।

जिस पात्रको जो स्वभाव देना अन्हें अभीष्ट रहा है, उसे अन्होंने कोमल वयमें बीज-रूपमें दिखलाकर आगे बढ़ते हुअे भिन्न-भिन्न परिस्थितियोंमें उसका नैसर्गिक विकास दिखाया है। रामचन्द्रके जिस स्वार्थ-त्यागको हम बाहु-बलसे विजित, न्यायतः स्वायत्त और वस्तुतः हाथमें आये हुअे लंकाके समृद्ध राज्यको बिना हिचक विभीषणको सौंप देनेमें देखते हैं, वह अंकाकी आत्मीयता अमंगका परिणाम नहीं है। वह रामचन्द्रका बाल्यकालसे ही क्रमपूर्वक विकास पाता हुआ स्वभाव है। उसे हम चौगानके खेलमें छोटे भाइयोंसे जीतकर भी हार मानते हुअे बालक राममें, अन्य पुत्रोंकी अपेक्षाकर जेठे पुत्रको ही राज्याधिकारी माननेवाली अन्याय-युक्त प्रथापर विचार करते हुअे युवा राममें, और फिर प्रसन्नतासे राज्य छोड़कर वनवासी ऋषि मुनियोंकी भाँति तपोमय जीवन बिताते हुअे वनवासी राममें देखते हैं।

रामचरितमानसमें रावणका जितना चरित्र हमारी दृष्टिमें पड़ता है, उसमें आदिसे अन्ततक उसकी एक विशेषता हमें दृष्टिगत होती है। वह है घोर भौतिकता। कदाचित् आत्माकी अपेक्षा करते हुअे भौतिक शक्तिकी अर्जन ही गोसांजी राक्षसत्वका अभिप्राय समझते थे। उसका अपार बल, विश्वविश्रुत वैभव,

अनुकी धर्महीन शासन-प्रणाली जिसमें ऋषि-मुनियोंसे कर वसूल किया जाता था, उसके राज्य-भरमें धार्मिक अभिरुचिका अभाव, ये सब उसके भौतिकवादके द्योतक हैं। प्रश्न अठ सकता है कि वह बड़ा तपस्वी भी तो था? किन्तु उसके तपसे भी उसकी भौतिकताका ही परिचय मिलता है। वह तप उसने अपनी आध्यात्मिक अन्नति या मुक्तिके अद्देश्यसे नहीं किया था वरन इस कामनासे कि भौतिक सुखको भोगनेके लिये वह इस शरीरसे अमर हो जाये।

हनुमानजीमें गोसांजीजीने सेवकका आदर्श खड़ा किया है। वे रामके सेवक हैं। गाढ़े समयपर जब सबका धैर्य और शक्ति जवाब दे जाती है तब हनुमानजीसे ही रामका काम सधता है। समुद्रको लाँघकर सीताकी खबर वे ही लाये। लक्ष्मणको शक्ति लगनेपर द्रोणाचल पर्वतको अखाड़ ले आकर अन्होंने संजीवनी बूटी प्रस्तुत की। भक्तके हृदयमें बसनेकी रामकी प्रतिज्ञा जब व्यवधानमें पड़ी तब अन्होंने अपना हृदय चीरकर उसकी सत्यता सिद्ध की। परन्तु हनुमानजीके चरित्रमें अेक बातसे कुछ असमंजस हो सकता है। वे सुग्रीवके सेवक थे। सुग्रीवसे बढ़कर रामकी भक्ति करके, क्या अन्होंने सेवाधर्मका व्यक्तिक्रम नहीं किया? नहीं, लंका विजयतक वास्तवमें अन्होंने सुग्रीवकी सेवा कभी छोड़ी ही नहीं और लोगोंसे कुछ दिन बादतक जो वे अयोध्यामें रामकी सेवा करते रहे, वह भी सुग्रीवकी आज्ञासे—

दिन बसि करि रघुपति-पद-सेवा । पुनि तब चरन देखिहौं देवा ॥
पुन्य-पुंज तुम पवन-कुमारा । सेवहु जाअि कृपा-आगरा ॥

अिसी प्रकार भरतके हृदयकी सरलता, निर्मलता, निस्पृहता और धर्म-प्रवणता उनकी सब बातोंसे प्रकट होती है । राम खुशीसे उनके लिये राज्य छोड़ गये हैं, कुलगुरु वशिष्ठ उनको सिंहासनपर बैठनेकी अनुमति देते हैं, कौसल्या अनुरोध करती हैं, प्रजा प्रार्थना करती है; परन्तु सिंहासनासीन होना तो दूर रहा, वे अिसी बातसे कषुब्ध हैं कि लोग कैकेयीके कुचक्रमें उनका हाथ न देखें । वे मातासे उसकी कुटिलताके लिये रुष्ट हैं । परन्तु साथ ही वे अपनेको मातासे अच्छा भी नहीं समझते, अिसीमें उनके हृदयकी स्वच्छता है । जब माता ही बुरी है तो पुत्र भला कैसे हो सकता है ?—

मातु मन्द में साधु सुचाली । अुर अस आनत कोटि कुचाली ॥

अुनसे सिंहासन स्वीकार करनेके लिये आग्रह करनेवाले लोगोंसे अुन्होंने कहा था—

कैकेयि-सुअन कुटिल-मति, राम-विमुख गत-लाज ।

तुम्ह चाहत सुख मोह-वस, मोहिसे अधमके राज ॥

भरतके सम्बन्धमें चाहे यह बात न खपती और वे प्रजाका पालन बड़े प्रेमसे करते जैसा अुन्होंने किया भी; परन्तु उनका राज्य स्वीकार करना महत्वाकांक्षी राजकुमारों और द्वेषपूर्ण सौतीके लिये अेक बुरा मार्ग खोल देता, जिससे प्रत्येक अभिषेकके समय किसी-न-किसी काँडकी आशंका बनी रहती । अिसी बातको दृष्टिमें रखकर अुन्होंने कहा था—

मोहि राज हठि देअिहअु जबहीं । रसा रसातल जाअिहि तबहीं ॥

भरतकी लोक-मर्यादाकी, जिसका ही दूसरा नाम धर्म है, रक्षा की अिस चिन्ताने ही रामको—

भरत भूमि रह राअुरि राखी ।

कहनेके लिये प्रेरित किया था। अमड़ते हुअे हृदय और वाष्प-गदगद कंठसे भरतके रामको लौटा लानेके लिये चित्रकूट पहुँचनेपर जब रामने अुनसे अपना धर्म-संकट बतलाया तब अुसी धर्म-प्रवणताने अुन्हें राज्यका भार स्वीकार करनेके लिये बाध्य किया। परन्तु अुन्होंने केवल राजाके कर्तव्यकी कठोरताको स्वीकार किया, अुसके सुख-वैभवको नहीं। सुख-वैभवके स्थानपर अुन्होंने वनवासीका कष्टमय जीवन स्वीकार किया, जिससे अुनके अुदाहरणमें धर्मोल्लंघनकी आशंका दूर हो जाअे।

परन्तु वास्तविक मानव-जीवन अितना सरल नहीं है जितना सामान्यतः बाहरसे दिखायी देता है, यह अूपरके वर्णनसे प्रकट हो सकता है। मनुष्यके स्वभावमें अेक ही भावनाकी प्रधानता नहीं रहती। प्रायः अेकसे अधिक भावनाअें अुसके जीवनमें स्थित होकर अुसके स्वभावकी विशेषता लक्षित कराती हैं। जब कभी अैसी दो भावनाअें अेक दूसरेकी विरोधिनी होकर आती हैं, अुस समय यदि कवि अिनके चित्रणमें किंचित भी असावधानी करे तो अुसका चित्रण सदोष हो जाअेगा। अुदाहरणके लिये गोसाअीजीने लक्ष्मणको प्रचंड प्रकृति दी है, परन्तु साथ ही अुनके हृदयमें रामके लिये अगाध भक्तिका भी सृजन किया है। जहाँपर अिन दोनों बातोंका विरोध न हो वहाँपर अिनके चित्रणमें अुतनी कठिनायी नहीं हो सकती। जनकके “वीर विहीन मही मैं जानी” कहते ही वे तमककर अुठते हैं—

रघुबंसिन महँ जहँ कोअु होअी । तेहि समाज अस कहें न कोअी ॥

परशुरामके रोष-भरे वचनोंको सुनकर वे खरी-खरी सुनानेमें कुछ अुठा नहीं रखते—

भृगुवर परसु देखावहु मोही । बिप्र बिचारि बचौं नृप-द्रोही ॥
मिले न कबहुँ सुभट रन गाढ़े । द्विज देवता घरहिके बाढ़े ॥

और भरतको ससैन्य चित्रकूटकी ओर आते देख रामके अनिष्टकी आशंका होते ही वे बिना आगा-पीछा सोचे भरतका काम तमाम करनेके लिये अुद्यत हो जाते हैं—

जिमि करि-निकर दलअि मृगराजू । लेअि लपेट गवा जिमि बाजू ॥
तेसेहि भरतहि सेन समेता । सानुज निदरि निपातअुं खेता ॥

अिस प्रकार, जिस स्वभावका व्यक्ति जिस अवस्थामें जैसा काम करता, गोसाअीजीने अुसे वैसा ही करते दिखाया है । अिसका केवल अेक अपवाद हमें मिलता है । वह है रामका बालिको छिपकर मारना । यह शील-सागर, न्याय-प्रेमी रामके स्वभावके अनुकूल नहीं हुआ है—

मारेहु मोहिं ब्याधकी नाअीं ।

मरते समय बालिके किअे हुअे अिम दोषारोपणका राम कोअी सन्तोषजनक अुत्तर नहीं दे सके ।

अनुज वधू भगिनी, सुत-नारी । सुन सठ कन्या सम ये चारी ॥
अिनहि कुदृष्टि विलोकअि जोअी । ताहि बधे कछु पाप न होअी ॥

अनुज वधू यदि कन्याके समान है तो क्या अग्रज वधू भी मातके समान नहीं? सुग्रीवका तो असके लिये रामचन्द्रने वध नहीं किया? यदि बालि वध्य भी था और वह भी रामके द्वारा तो भी कोअी यह नहीं कह सकता कि जिस अपायसे रामने बालिको मारा वह अचित था। रामको चाहिये था कि पहले बालिपर दोषारोपण करते, फिर उसे ललकारकर युद्धमें मारते, जैसा महावीर-चरितमें भवभूतिने कराया है। उसमें रामके बालिको अपना शत्रु समझनेका भी कारण दिया गया है; क्योंकि बालिने पहले रामके विरुद्ध रावणसे मित्रता कर ली थी। दूसरेके साथ युद्धमें लगे हुअे व्यक्तिको, जिसे अनुकी ओरसे कुछ भी खटका नहीं है, पेड़की आड़से छिपकर मारना रामके चरित्रपर अक बड़ा भारी कलंक है, जिसपर न तो हेतुवादके चूनेसे कोअी लीपा-पोती की जा सकती है और न मनुष्यताके रंगसे ही। अद्देश्य चाहे कितना ही उत्तम क्यों न हो, वह अितने गहित अपायके अनौचित्यको दूर नहीं कर सकेगा और न यह कलंक रामचन्द्रको अवतारसे मनुष्यकी कोटिमें अुतार लानेके लिये ही आवश्यक है। विरहातुरतामें करुण विलाप करते हुअे तथा लक्ष्मणको शक्ति लगनेपर यह कहते हुअे—

जनत्यो जो बन बन्धु-बिछोह । पिता-बचन मनत्यो नहि ओह ॥

अुन्होंने जो हृदयकी मानवोचित मधुर-कमजोरी दिखायी है, वही अुन्हें मनुष्यताकी कोटिसे बिलकुल बाहर जानेसे रोकनेके लिये पर्याप्त है, और नीचे अुतरकर धर्माधर्मका बिलकुल विचार ही त्याग देना मनुष्यताकी कोटिसे भी नीचे गिरना है।

परन्तु इसका सारा दोष गोसाजीजीपर ही नहीं मढ़ा जा सकता। अनुसरे पहलेके रामचरितके प्रायः सभी लेखकोंने रामचन्द्रसे यह कर्म कराया है। इससे इस घटनाका महत्व अतिहासका-सा हो जाता है, जिसके विरुद्ध चलना गोसाजीजी चाहते न थे। अन्यत्र गोसाजीजीने असे भक्त-वत्सलताका अुदाहरण कहकर समझानेका प्रयत्न किया है, परन्तु अुससे कुछ भी समाधान नहीं होता। यह कहना पड़ेगा कि आपत्तिमें पड़कर रामको बहुत कुछ कर्तव्याकर्तव्यका ज्ञान नहीं रह गया था। अुन्हें अेक मित्रकी आवश्यकता थी, जो चाहे जिस प्रकार हो, अुनके अुपकारके भारसे दबकर अुनका सच्चा सहायक हो जाता। सुग्रीवने पहले मित्रताका प्रस्ताव किया, इसलिये रामने अुसीके साथ मित्रता कर ली। यदि बालिको रामचन्द्रकी मित्रता अभीष्ट होती और वह सुग्रीवके पहले मित्रताका प्रस्ताव करता तो सम्भवतः बालिके स्थानपर सुग्रीवको स्वर्गकी यात्रा करनी पड़ती।

सक्षेपमें, चाहे जिस दृष्टिसे देखें गोसाजीजीमें हम सब दशाओंमें कलाका अन्यतम अुत्कर्ष पाते हैं। जहाँ कहीं हम अुन्हें देखते हैं वहाँ हम अुन्हें सर्वोपरि देखते हैं। पहलेसे दूसरा स्थान भी अुनका कहीं नहीं दिखायी देता और काव्य-साहित्यका अैसा कौन क्षेत्र है जहाँ हम अुन्हें नहीं देखते? वास्तवमें हिन्दी भाषाकी सम्पूर्ण वैभवसे पूर्ण शक्तिका साक्षात्कार गोसाजीजीमें ही होता है, परन्तु हिन्दीके होकर वे केवल हिन्दुस्तानके ही नहीं रहे, बल्कि अपनी अलौकिक कवित्व-शक्तिके कारण समस्त संसारके हो रहे हैं। अेक न माने जानेवाले पूर्व और पश्चिम भी अुनकी प्रशंसा करनेके लिये अेक हो रहे हैं। देश और कालका अनिव्रमण

करनेवाली अनुकी प्रतिभाके मूलमें अनुकी आत्म-विस्मृतिकी तल्लीनता ही है; इसीलिए अनुकी कृतियोंमें कलाको वह अत्युत्कर्ष प्राप्त हुआ है जिसे देखकर “हरिऔध” जीकी सार्थक वाणीमें अपना स्वर मिलाते हुअे, हमें भी यही कहते बनता है कि—

कविता करके तुलसी न लसे,
कविता लसी पा तुलसीकी कला ।

* * *

१२.

मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है

* * *

—डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी

डा. हजारीप्रसाद द्विवेदी

आपका जन्म सन १९०७ में ओझावालिया नामक स्थान पर हुआ। आपकी शिक्षा काशी में हुई। आप हिन्दी साहित्य के प्रसिद्ध आलोचक, अनेक ग्रन्थों के अनुवादक तथा संस्कृत के पण्डित हैं। आप अनेक भाषाओं के ज्ञाता हैं। आप शान्तिनिकेतन में अध्यापक और वहाँ के हिन्दी भवन के डाइरेक्टर रह चुके हैं। इस समय आप बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष हैं। आपमें ज्ञानकी अपूर्व भूख है।

आपके निबन्धों में भारत की प्राचीन गौरवमयी स्वस्थ परम्परा, नवीन गति-विधि और भविष्य की आशा का स्वर है। प्राचीन और अर्वाचीन के संघर्ष में आज जो सामाजिक अव्यवस्था उत्पन्न हो रही है उसे भारतीय संस्कारों में वर्तमान की अनुरूपता में संस्कारित कर मानव के स्वस्थ विकास की दिशा आपके निबन्धों में हमें देखने को मिलती है।

आपके विविध विषयों पर लिखे हुए निबन्धों को दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—विषय प्रधान और ललित निबन्ध। आपके निबन्धों में अधिकांश ललित निबन्ध हैं, जिनमें विषय-परिचय भी मिल जाता है। प्रसंग-गमत्व आपके निबन्धों की एक अभूतपूर्व विशेषता है। भारतीय संस्कृति और इतिहास के प्रति आपका मोह भी आपके निबन्धों में प्रकट होता है। समाज-कल्याण और लोकमंगल की अदात मानवीय भावना आपके निबन्धों के प्राण है ?

द्विवेदीजी की समीक्षा का मूल मान “मनुष्य” है। अनेक स्थलों पर उन्होंने कहा है कि “मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है।” वे कहते हैं—“मैं साहित्य को मनुष्य की दृष्टि में देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षिता में बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजोद्दीप्त न बना सके, जो उसके हृदय को पर-दुःख-कातर और सम्बेदन-शील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है।”

अिम प्रकार द्विवेदीजीकी समीक्षाका मूल मान और अनुकी दृष्टि मानववादी है। अनुकी मानवता मानव-समाजमें जहाँ भी अुत्पाड़न देखती है, ढुलक पड़नेकी पक्षपातिनी है, क्योंकि प्रत्येक मानवमें अेक ही आत्माके सचरित होनेपर अनुका विश्वास है। अनुके विचार समन्वयात्मक है।

आलोचना और निबन्धको मिलाकर द्विवेदीजीकी देन बहुत ही व्यापक और महत्वपूर्ण है। वे केवल आलोचक और निबन्ध-लेखक ही नहीं वरन साहित्याचार्य और नेता भी है और अनुके प्रभावका क्षेत्र बहुत व्यापक है।

सूर-साहित्य, हिन्दी साहित्यकी भूमिका, कबीर, विचार और वितर्क, अशोकके फूल, हमारी साहित्यिक समस्याअे, कल्पलता, साहित्यका साथी, हिन्दी साहित्य, आधुनिक साहित्यपर विचार, बाण भट्टकी आत्म-कथा आदि आपकी रचनाअे है।

* * *

विषय-वस्तु—

साहित्यकी अपयोगिता तभी है जब वह मानवके लिये अपयोगी सिद्ध हो सके। जो साहित्य ऐसा नहीं कर सकता है, मनुष्यको दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षितासे बचा नहीं सकता, उसकी आत्माको तेजोदीप्त नहीं बना सकता, उसके हृदयको पर-दुःख-कातर और सम्बेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहनेमें संकोच होना स्वाभाविक ही है।

अंसे साहित्यके निर्माण करनेमें और निर्मित साहित्यको जनताके गले तक अतारनेमें हमें किन अपायोंको काममें लाना होगा; अंसा करते समय किन-किन परिस्थितियोंको ध्यानमें रखना होगा आदि बातोंपर अस निबन्धमें अत्यन्त विद्वत्तापूर्ण ढंगसे प्रकाश डाला गया है।

* * *

मनुष्य ही साहित्यका लक्ष्य है

मैं साहित्यको मनुष्यकी दृष्टिसे देखनेका पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्यको दुर्गति, हीनता और परमुखापेक्षितासे बचा न सके, जो उसकी आत्माको तेजोद्दीप्त न बना सके, जो उसके हृदयको परदुःखकातर और सम्बेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहनेमें मुझे संकोच होता है। मैं अनुभव करता हूँ कि हम लोग एक कठिन समयके भीतरसे गुजर रहे हैं। आज नाना भौतिक संकीर्ण स्वार्थोंने मनुष्यको कुछ ऐसा अन्धा बना दिया है कि जाति-धर्म-निर्विशेष मनुष्यके हितकी बात सोचना असम्भव-सा हो गया है। ऐसा लग रहा है कि किसी विकट दुर्भाग्यके अंगित पर दलगत स्वार्थके प्रेतने मनुष्यताको दबोच लिया है। दुनिया छोटे-छोटे संकीर्ण स्वार्थोंके आधारपर अनेक दलोंमें विभक्त हो गयी है। अपने दलके बाहरका आदमी सन्देहकी दृष्टिसे देखा जाता है। उसके रोने-गानेतकपर असदुद्देश्यका आरोप किया जाता है। उसके तप और सत्यनिष्ठाका मजाक उड़ाया जाता है। उसके प्रत्येक त्याग और बलिदानके कार्यमें 'चाल' का सन्धान किया जाता है और अपनी-अपने दलोंमें ऐसा करनेवाले सफल नेता भी मान लिए जाते हैं; परन्तु मेरा विश्वास है कि ऐसा

करनेवाला आदमी सबसे पहले अपना ही अहित करता है। बड़े-बड़े राष्ट्रनायक जब अपनी विराट अनुचरवाहिनीके साथ इस प्रकारका गन्दा प्रचार करते हैं तो ऊपर-ऊपरसे चाहे जितनी भी सफलता उनके पक्षमें आती हुअी क्यों न दिखायी दे, अतिहास विधाताका निष्ठुर नियम-प्रवाह भीतर-ही-भीतर उनके स्वार्थोंका अनुमूलन करता रहता है। अतिहास शक्तिशाली व्यक्तियों और राष्ट्रोंकी चिताभूमिको कुचलता हुआ आगे बढ़ रहा है, फिर भी गन्दे तरीके सुधारे नहीं गये हैं, बल्कि और भी कौशलपूर्वक उनको प्रभावशाली बनाया जाता रहा है। जो लोग दृष्टा हैं वे इस गलतीको समझते हैं, पर उनकी बात मदमत्त व्यक्तियोंकी अँची गद्दियोंतक नहीं पहुँच पाती। संसारमें अच्छी बात कहने-वालोंकी कमी नहीं है, परन्तु मनुष्यके सामाजिक संगठनमें ही कहीं कुछ ऐसा बड़ा दोष रह गया है, जो मनुष्यको अच्छी बात सुनने और समझनेसे रोक रहा है। इसलिये आजकी सबसे बड़ी समस्या यह नहीं है कि अच्छी बात कैसे कही जाये, बल्कि यह है कि अच्छी बातको सुनने और माननेके लिये मनुष्यको कैसे तैयार किया जाये।

अिसीलिये साहित्यकार आज केवल कल्पनाविलासी बनकर नहीं रह सकता। शताब्दियोंका दीर्घ अनुभव यह बताता है कि उत्तम साहित्यकी सृष्टि करना ही सबसे बड़ी बात नहीं है। सम्पूर्ण समाजको इस प्रकार सचेतन बना देना भी परमावश्यक है जो उस उत्तम रचनाको अपने जीवनमें अुतार सके। साहित्यिक सभाओं यह कार्य कर सकती हैं। वे सम्पूर्ण जन-समाजको उत्तम साहित्य सुनानेका माध्यम बन सकती हैं। इस विशाल देशमें

शिक्षाकी मात्रा बहुत ही कम है। जिन देशोंमें शिक्षाकी समस्या हल हो चुकी है, उनके साहित्यिकोंकी अपेक्षा यहाँके साहित्यिकोंकी जिम्मेदारी कहीं अधिक है। फिर हमने जिस भाषाके साहित्य-भंडारको भरनेका व्रत लिया है, उसका महत्व और भी अधिक है। वह भारतवर्षके केन्द्रीय प्रदेशोंकी भाषा है, कभी करोड़ आदमियोंकी ज्ञानपिपासा उसे शान्त करनी है। इसीलिए उसे सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञानका वाहन बनाना है।

हम लोग जब हिन्दीकी “सेवा” करनेकी बात सोचते हैं तो प्रायः भूल जाते हैं कि यह लाक्षणिक प्रयोग है। हिन्दीकी सेवाका अर्थ है उस मानव-समाजकी सेवा जिसके विचारोंके आदान-प्रदानका माध्यम हिन्दी है। मनुष्य ही बड़ी चीज है, भाषा उसीकी सेवाके लिये है। साहित्य-सृष्टिका भी यही अर्थ है। जो साहित्य अपने आपके लिये लिखा जाता है, उसकी क्या कीमत है, मैं नहीं कह सकता; परन्तु जो साहित्य मनुष्य-समाजको रोग-शोक, दारिद्र्य-अज्ञान तथा परमुखापेक्षितासे बचाकर उसमें आत्मबलका संचार करता है, वह निश्चय ही अक्षय निधि है। उसी महत्वपूर्ण साहित्यको हम अपनी भाषामें ले आना चाहते हैं। मैं मनुष्यकी इस अतुलनीय शक्तिपर विश्वास करता हूँ कि हम अपनी भाषा और साहित्यके द्वारा इस विषम परिस्थितिको बदल सकेंगे।

परन्तु हमें सावधानीसे सोचना होगा कि हिन्दी बोलनेवाला जन-समुदाय क्या वस्तु है और वास्तवमें वह परिस्थिति क्या है, जिसे हम बदलना चाहते हैं। काल्पनिक प्रेतको घूँसा मारना बुद्धिमानका काम नहीं है। नगरों और गाँवोंमें फैला हुआ, सैकड़ों

जातियों और सम्प्रदायोंमें विभक्त, अशिक्षा, कुशिक्षा, दारिद्र्य और रोगसे पीड़ित मानव-समाज आपके सामने उपस्थित है। भाषा और साहित्यकी समस्या वस्तुतः अन्हींकी समस्या है। क्यों ये अतने दीन-दलित हैं? शताब्दियोंकी सामाजिक, मानसिक और आध्यात्मिक गुलामीके भारसे दबे हुअे ये मनुष्य ही भाषाके प्रश्न हैं और संस्कृति तथा साहित्यकी कसौटी हैं। जब कभी आप किसी विकट प्रश्नके समाधानका प्रयत्न कर रहे हों तो अन्हें सीधे देखें। अमेरिकामें या जापानमें ये समस्याएँ कैसे हल हुअी हैं, यह कम सोचें, किन्तु असलमें ये हैं क्या और किस या किन कारणोंसे ये अैसे हो गअे हैं, अिसीको अधिक सोचें। वड़े-वड़े विचारकोंने अिस देशके जन-समुदायके अध्ययनका प्रयत्न किया है, अब भी कर रहे हैं, पर ये अध्ययन या तो अन्हें अच्छी प्रजा बनानेके अुद्देश्यसे किअे गअे हैं या वैज्ञानिक कुतूहल-निवारणके अुद्देश्यसे। अनको अिस दृष्टिसे देखना अभी बाकी है कि वे मनुष्य कैसे बनाअे जाअें! हमारी भाषा, हमारा साहित्य, हमारी राजनीति—सब कुछका अुद्देश्य यही हो सकता है कि अनको दुर्गतियोंसे बचाकर किस प्रकार मनुष्यताके आसनपर बैठाया जाअे।

अपना यह देश कोअी नया साहित्यिक प्रयोग करने नहीं निकला है। अिसकी साहित्यिक परम्परा अत्यन्त दीर्घ, धारावाहिक और गम्भीर है।

साहित्य नामके अन्तर्गत मनुष्य जो कुछ भी सोच सकता है, अुस सबका प्रयोग अिस देशमें सफलतापूर्वक हो चुका है। यह अपनी भाषाका दुर्भाग्य है कि हमारी प्राचीन चिन्तनराशिको अुसमें संचित नहीं किया गया है। संस्कृत, पालि और प्राकृतकी बढ़िया

पुस्तकोंके जितने अुत्तम अनुवाद अँग्रेजी, फ्रेंच और जर्मन आदि भाषाओंमें हुअे हैं अुतने हिन्दीमें नहीं हुअे। परन्तु दुर्भाग्य भी लाक्षणिक प्रयोग है और यह वस्तुतः अुस विशाल मानव-समाजका दुर्भाग्य है जो अिस भाषाके जरिअे ही ज्ञान अर्जन करना चाहता है या करता है। यह विशाल साहित्य अपनी भाषाओंमें यदि अनूदित होता तो हमारा साहित्यिक सहज ही अुन सैकड़ों प्रकारके अपप्रहारों और हीन भावनाओंका शिकार होनेसे बच जाता, जो आज सम्पूर्ण समाजको दुर्बल और परमुखापेक्षी बना रहे हैं।

भारतवर्षके पड़ोसी देशोंमें आजकल हिन्दी-साहित्य पढ़ने और समझनेकी तीव्र लालमा जाग्रत हुअी है। चीनसे, मलायासे, सुमात्रासे, जावासे—ममस्त अेशियासे माँग आ रही है। अेशियाके देश अब अँग्रेजी पुस्तकोंसे प्राप्त सूचनाओंसे मन्तुष्ट नहीं हैं। वे देशी दृष्टिसे देशी भाषामें लिखा हुआ साहित्य खोजने लगे हैं। आगे यह जिज्ञासा और भी तीव्र होगी। मुझे चिन्ता होती है कि क्या हम अपनेको अिस अुठती हुअी श्रद्धाके अुपयुक्त पात्र सिद्ध कर सकेंगे? जिस दिन अितिहास-विधाता हमें ठेलकर विश्व-जनताके दरबारमें ला सकेंगे, अुस दिन तक क्या हम अितना भी निश्चय कर सके होंगे कि हमारी भाषा कैसी होगी, अुसमें भिन्न-भिन्न भाषाओंके शब्दोंका अनुपात क्या होगा और शब्दोंके “शुद्ध” और “गैर शुद्ध” अुच्चारणोंमेंसे कौन-सा अपनाया जाअेगा।

हिन्दी साधारण जनताकी भाषा है। जनताके लिअे ही अुसका जन्म हुआ था और जबतक वह अपनेको जनताके कामकी चीज बनाअे रहेगी, जैनचित्तमें आत्म बलका संचार करती रहेगी तबतक अुसे किसीसे डर नहीं है। वह अपने आपकी भीतरी

अपराजेय शक्तिके बलपर बड़ी हुई है, लोक-सेवाके महान व्रतके कारण बड़ी हुई है और यदि अपनी मूल शक्तिके स्रोतको भूल नहीं गयी तो निस्सन्देह अधिकाधिक शक्तिशाली होती जायेगी। उसका कोअी कुछ भी बिगाड़ नहीं सकता। वह विरोधों और संघर्षोंके बीच ही पली है। उसे जन्मके समय ही मार डालनेकी कोशिश की गयी थी, पर वह मरी नहीं है, क्योंकि उसकी जीवनी शक्तिका अक्षय स्रोत जनचित्त है। वह किसी राजशक्तिकी अंगुली पकड़कर यात्रा तै करनेवाली भाषा नहीं है, अपने आपकी भीतरी शक्तिसे महत्वपूर्ण आसनपर अधिकार करनेवाली अद्वितीय भाषा है।

शायद ही संसारमें ऐसी कोअी भाषा हो जिसकी अन्नतिमें पद-पदपर अतनी बाधा पहुँचायी गयी हो और फिर भी जो अिस प्रकार अपार शक्ति संचय कर सकी हो। आज वह सैकड़ों “प्लेटफार्मों” से, अनेकों विद्यालयोंसे और दर्जनों प्रेससे नित्य मुखरित होनेवाली परम शक्तिशालिनी भाषा है। उसकी जड़ जनताके हृदयमें है। वह करोड़ों नर-नारियोंकी आशा, आकांक्षा, कषुधा और पिपासा, धर्म और विज्ञानकी भाषा है। हिन्दी सेवाका अर्थ करोड़ोंकी सेवा है। अिसका अवसर मिलना सौभाग्यकी बात है।

साहित्यके अुपासक अपने पैरके नीचेकी मिट्टीकी अुपेक्षा नहीं कर सकते। हम सारे बाह्य जगतको असुन्दर छोड़कर सौन्दर्यकी सृष्टि नहीं कर सकते। सुन्दरता सामंजस्यका नाम है। जिस दुनियामें छोटाअी और बड़ाअीमें, धनी और निर्धनमें; ज्ञानी और अज्ञानीमें आकाश-पातालका अन्तर हो, वह दुनिया

सामंजस्यमय नहीं कही जा सकती और इसीलिअे सुन्दर भी नहीं है। इस बाह्य सुन्दरताके दूहमें खड़े होकर आन्तरिक सौन्दर्यकी अुपासना नहीं हो सकती। हमें अुस बाह्य असौन्दर्यको देखना ही पड़ेगा। निरन्न, निर्वसन जनताके बीच खड़े होकर आप परियोंके सौन्दर्य-लोककी कल्पना नहीं कर सकते। साहित्य सुन्दरका अुपासक है; इसलिअे साहित्यिकको असामंजस्य दूर करनेका प्रयत्न पहले करना होगा; अशिक्षा और कुशिक्षासे लड़ना होगा; भय और ग्लानिसे लड़ना होगा। सौन्दर्य और असौन्दर्यका कोअी समझौता नहीं हो सकता। सत्य अपना पूरा मूल्य चाहता है। अुसे पानेका सीधा और अेकमात्र रास्ता अुसकी कीमत चुका देना ही है। अिमके अतिरिक्त कोअी दूसरा रास्ता नहीं है। हमारे देशका बाह्य रूप न तो आँखोंको प्रीति देने लायक है, न कानोंको, न मनको, न बुद्धिको। यह सचाअी है।

अिस देशमें हिन्दू हैं, मुसलमान हैं, ब्राह्मण हैं, चाण्डाल हैं, धनी हैं, गरीब हैं—विरुद्ध संस्कारों और विरोधी स्वार्थोंकी विराट वाहिनी है। अिसमें पद-पदपर गलत समझे जानेका अन्देशा है, प्रति क्षण विरोधी स्वार्थोंके संघर्षमें पिस जानेका डर है, संस्कारों और भावावेशोंका शिकार हो जानेका अन्देशा है; परन्तु अिन समस्त विरोधों और संघातोंसे बड़ा और अिन सबके अूपर है मनुष्य। अिस मनुष्यकी भलाअीके लिअे आप अपने आपको निःशेष भावसे देकर ही सार्थक हौ सकते हैं। सारा देश आपका है। भेद और विरोध अूपरी हैं। भीतर मनुष्य है। अिस अेकको दृढ़ताके

साथ पहचाननेका यत्न कीजिये। जो लोग भेद-भावको पकड़कर ही अपना रास्ता निकालना चाहते हैं वे गलती करते हैं। विरोध रहे हैं तो अन्हें आगे भी बने ही रहना चाहिये, यह कोअी कामकी बात नहीं हुआ। हमें नअे सिरसे सब कुछ गढ़ना है; तोड़ना नहीं है। टूटेको तोड़ना है। भेदभावकी जयमालासे हम पार नहीं अुतर सकते। कबीरने हैरान होकर कहा था—

कबीर अस संसारको, समझाअूं कै बार ।

पूछ जु पकड़े भेदका, अुतरा चाहे पार ॥

मनुष्य अेक है। अुसके सुख-दुखको समझना, अुसे मनुष्यताके षवित्र आसनपर बैठाना ही हमारा कर्तव्य है।

* * *

शब्दार्थ

१. मेरे संस्मरण

पृष्ठ—५

माननीय गोखले—भारतके सुप्रसिद्ध नरम दलीय राजनैतिक नेता; आप कांग्रेसके बनारस अधिवेशनके अध्यक्ष थे। सन १९०५ में आपने 'सर्वेंट्स आफ इंडिया सोसायटी' (भारत सेवक समाज) नामक सुप्रसिद्ध राष्ट्रसेवी संस्थाकी स्थापना की। महात्मा गांधी अपने आपको इनका 'शिष्य' कहा करते थे।

होनहार—जिसके बढ़ने या श्रेष्ठ होनेकी आशा है, अच्छे लक्षणोंवाला।

शरीक होना—शामिल होना, (यहाँ) सदस्य बनना।

अंश-अशरत—मौज-मजे, सुख-भोग, आनन्द।

पृष्ठ—६

मयस्सर—प्राप्त।

दावा—अधिकार।

पूजा करना—आदर करना, सम्मान करना।

खोअे-हुअे-से—भूले हुअे-से, अन्हींकी बातोंको सोचते हुअे।

बरायनाम—नाम मात्रका, जिसमें कोई चि न रही हो।

पृष्ठ—७

खुलकर—स्पष्ट रूपसे।

हाल-बेहाल—अस्त-व्यस्त हालतमें (यहाँ) व्यथित, वेचैन।

तेज बोलनेवाली—सीधी चोट पहुँचानेवाली, बातें कहनेवाली।

पृष्ठ—८

हिम्मत टूट जाना—साहस खो बैठना, निश्चयसे डिग जाना, किसी कार्य या बिचारसे हट जाना।

आय—आमदनी, प्राप्ति, कमायी।
मवक्किल—वह जो किसीको अपना वकील मुक़रर करे।

मुलाकात—भेंट, मिलना।

अजलास—न्यायालय, कचहरी।

पृष्ठ—९

चुटकुले—छोटी-छोटी दिलचस्प बातें।

मुख्तार—(किसीका) अधिकार प्राप्त प्रतिनिधि ।

अपील—मुकदमा हार जानेके बाद अंची कोर्टमें को जानेवाली पुन-विचारकी प्रार्थना ।

दायर करना—दाखिल करना, पेश करना ।

सीनियर—पुराना तथा आभवी ।

जूनियर—कनिष्ठ, छोटा (यहाँ) नया

अुजबक—मूर्ख, अुजड्ड, गँवार ।

तेज—नीक्षण बुद्धि, होशियार ।

तारीफ़का पुल बाँधना—खूब प्रशंसा करना ।

पृष्ठ—१०

बहुत मानना—किसी व्यक्तिकी योग्यता तथा अुमके गुणोंमें परिचित होनेके कारण अुमका आदर करना ।

अूलजूल—असम्बद्ध, अव्यवस्थित ।

कपड़ेके बारेमें शौकीन होना—अच्छे तथा ढगदार कपड़े पहनना, फैशनके कपड़े पहनना ।

२. मेहमान

पृष्ठ—१४

मेहमान—गाहुना, अतिथि ।

देवी प्रकोप—श्रीश्वरीय क्रोध, अमी आपत्ति जिसपर मनुष्यका कोअी

नियन्त्रण न हो और न मनुष्यका अुगमें हाथ हो, जैसे—अत्यधिक वर्षा, बाढ़, भूकम्प, वज्रपात, तूफान आदि ।

नाजिल—पड़ना, टूटना ।

बरी होना—मुक्त होना, छूटना ।

मेजवान—वह जिसके यहाँ कोअी मेहमान आये, अतिथ्य करनेवाला व्यक्ति, मेहमानदार ।

कुचेष्टा—वह कार्य जिसमें नुकसान होनेकी सम्भावना रहती है, बुरी चेष्टा ।

तहजीब—मभ्यता, शिष्टाचर ।

भूचाल—भूकम्प ।

आ धमकना—अेकाअेक या अचानक चला आना, जबरदस्ती चला आना ।

अड़ौनी-पड़ौनी—आसपास रहनेवाला ।

आँखें मलते हुआ आना—अधूरी नीदमेंसे अेकाअेक जागनेके कारण आँखोंको रगड़ने हुआ आना, नीद भरी हुआ आँखोंमें अुठकर आना ।

बला—आफ़त, विपत्ति ।

टूँक—(अँ.) पेटो ।

पृष्ठ—१५

गुजरना—जाना, पासमें जाना ।

दिल छटपटाना—अच्छाकी पूर्ति न होनेके कारण या किसीकी बार-

बार याद आनेके कारण मनका
बेचैन हो जाना, अधीर हो उठना।
निवृत्त होकर—फारिग होकर, निवट
कर।

पृष्ठ—१६

गृहस्वामी—घरका मालिक (यहाँ)
मेजवान।

अधर-अधर की बातें—ऐसी बातें जो
गम्भीर नहीं हों, जो समय काटनेके
लिअे या मन बहलानेके लिअे की
जाती हों।

हुक्केको पूछना—हुक्का पियोगे क्या,
यह पूछना।

संकोच—हिचकिचाहट, लज्जा।

दीन—गरीब।

मजा आ जाना—धृष्टताका दंड मिलना,
गलती या अपराधकी वजहसे
परिहासका साधन बनना, विपत्तिमें
पड़ना।

धृष्टता—अनुचित साहस, ढिठाई,
गुस्ताखी।

मस्तिष्कके दोषके कारण—दिमाग
खराब होनेके कारण, मूर्खताके
कारण, बेवकूफीसे।

बुरी तरह—अपमानित करके।

घटना—किसी कामका हो जाना,
वाकया, बारदात।

डाक बँगला—वह बँगला या मकान
जो सरकारकी ओरसे यात्रियोंके
ठहरनेके लिअे बना रहता है।
राह पकड़ना—अपना रास्ता देखना।
असभ्य—अुजड्ड, गँवार, शिष्टाचार-
हीन।

भूत—कहा जाता है कि मृत व्यक्तिकी
असन्तुष्ट आत्मा भूत या प्रेत बन
जाती है और अपने सम्बन्धियों
या जो भी व्यक्ति उनकी लपेटमें
आ जाअे अुसको तरह-तरहसे तंग
करती है।

भूत... सवार हो जाना—पीछे पड़
जाना, लगातार तंग करना।

पुजारी होना—विना सोचें-समझें
नुकसानकी परवाह किअे बगैर,
अन्धश्रद्धासे कोअी काम करना,
(यहाँ) माननेवाला।

बला सिरपर लेना—आफतमें पड़ना।

पृष्ठ—१७

व्यग्र—किसी चीजमें अलक्षक
व्याकुल होना, किसी बातके लिअे
चिन्तित होना।

स्टाफ—कर्मचारियोंका समूह। (यहाँ)
घरके सब लोग।

रह-रहकर—बार-बार, थोड़ी थोड़ी
देरसे।

लाहौल विला कूवत—(लाहौल विला कूवत अल्लाव अल्लाह, अश्वरके सिवा ओर कोअी शक्ति नहीं है।) अस वाक्यका प्रयोग प्रायः घृणा या तिरस्कार सूचित करनेके लिये किया जाता है।

मगरिब—(यहाँ) सूर्यास्तके बाद पढ़ी जानेवाली नमाज।

नाक काटना—वेअिज्जती करना, प्रतिष्ठा नष्ट करना।

मौन—चुप्पी।

बड़बड़ाहट—अरुचि या क्रोध प्रकट करनेके लिये मुँहमे अस्पष्ट शब्द निकालना, बात बुरी लगनेपर मुँह-ही-मुँहमें कुछ बोलना।

गृहलक्ष्मी—घरकी मालकिन। (यहाँ पत्नी।

आवेशमें—गुस्सेमें।

हाथ-पैर फुला देना—घबराहट पैदा कर देना।

चार हाथ-पैर कैमे लगाअें—असम्भव शीघ्रता कैमे की जाअे? शक्तिके बाहर काम कैसे हो?

हथेलियोंपर सरसों जमाअे देना—असम्भव कामको करनेके लिये कहना।

कअी बांस सूरज है—सूरज डूबनेको बहुत देर है, काफी दिन बाकी है।

तोवा-तिल्ला मचाना—हल्ला-गुल्ला करना।

चार दिनका फाका—कअी दिनोंका भूखा।

पृष्ठ—१८

सिलसिला—क्रम, बात।

दौरा पड़ना—किसी अैसे रोगका प्रकट होना जो बार-बार होता है।

परेशान होना—किसी चिन्ता, दुख या कष्टके कारण अुद्विग्न होना, व्याकुल होना।

बातको पीना—प्रत्युत्तर न देना, चुप हो जाना, झगड़ा नहीं बढ़ाना।

कयामत—मुसलमानों, अीसाअियों तथा यहूदियोंके अनुसार सृष्टिका वह अन्तिम दिन जब सब मुर्दे अुठकर खड़े होंगे और अीश्वरके सामने अुनके कर्मोंका लेखा रखा जाअेगा। प्रलय—जब सब सृष्टि तथा प्राणी नष्ट हो जाते हैं। (यहाँ) बड़ी विपत्ति।

बरपा होना—आ खड़ी होना, (यहाँ) टूट पड़ना।

कानपर जूँ न रेंगना—कुछ भी परवाह न करना, कोअी ध्यान न देना।

ढोंग—झूठ-मूठका बहाना, पाखंड।
रुष्ट—क्रोधित।

भजाक अड़ाना—परिहास करना, व्यंग्य करना दोष देना।

दोषको कुरेद-कुरेदकर—अब ढूँढ़-ढूँढ़कर।

मुस्तलिफ—भिन्न-भिन्न, अलग-अलग।

साहब-बहादुरी—साहबों जैसे ठाठ-बाट, रसीमी।

कमोड—अक पेटी जिसमें मल-पात्र रहता है तथा जिसपर पैर लटकाये हुअे बैठकर मल-विसर्जन किया जाता है। यूरोपियनों तथा अनुकी देखादेखी हिन्दुस्तानी साहब लोग इसका व्यवहार करते हैं।

धूलमें मिल जाना—व्यर्थ हो जाना, बेकार चले जाना।

गँवारपन—असम्यता, बेवकफी, अजड्डता। असंस्कृत तथा गन्दी आदतें।

नाकमें दम कर देना—तंग कर देना, लगातार परेशानी पैदा करते जाना।

पृष्ठ—१९

शौचादिके लिये—मल-विसर्जन आदिके लिये।

परीक्षण—जाँच-पड़ताल, बारीकीसे देखभाल।

पीकदान—अक वर्तन जिसमें पानकी या तम्बाखूकी पीक डाली जाती है।

थूकदान—अक वर्तन जो थूकनेके लिये रहता है।

भगवान झूठ न बुलवाये—अक मुहावरा जिसका अर्थ है इसमें कोई अतिशयोक्ति-झूठ नहीं है, अकदम सच्ची बात है।

पीककी पिचकारियोंसे रंगे हुअे मिलेंगे—जगह-जगह पीक डाला हुआ मिलेगा।

आवारागर्दी—व्यर्थ या बिना किसी मतलबके अधर-अधर घूमना।

पृष्ठ—२०

अभ्यर्थना—(यहाँ) आतिथ्य, स्वागत।

पचास हजार बार—बार-बार।

अुदासीनता—अुपेक्षा।

तकाजा करना—किसी कामको जल्दी-जल्दी करनेके लिये कहना।

हृदय खोलकर स्वागत करना—तहे दिलसे, मनसे भरपूर स्वागत करना।

डिनर देना—(अँग्रेजी) (डिनर-दिनका प्रमुख भोजन।) विधिवत या कायदेसे भोजनका अन्तजाम करना।

पृष्ठ—२१

प्रीत-भोज—(प्रीति-भोज), वह भोजन

या खान-पान जिसमें मित्र तथा बन्धु आदि प्रेमपूर्वक सम्मिलित होते हैं।

ताता लगा रहना—अेकके बाद अेकका क्रम बँधा रहना, लगातार होते जाना।

अेक-आध-दिन—अेक दो दिन, बहुत ही कम समयके लिये।

आनाकानी करना—अनिच्छा प्रदर्शित करना, हिचकिचाहट दिखाना।

अपने घरके आकाशको पृथ्वी और पृथ्वीको आकाश न करना पड़े—अुलट-पुलट न करनी पड़े, हमेशाकी व्यवस्थामें बुनियादी फर्क न करना पड़े।

हम-खयाल—जिनके विचार अेकसे ही हैं।

आडम्बर—दिखावा, तैयारी, कृत्रिम सज-धज।

सूखी रोटी...हलवा-पूड़ी समझ कर खाते हैं—जो कुछ सादा भोजन हमारे यहाँ हैं उसे बड़े प्रेमसे खाते हैं, मानो पकवान ही खा रहे हैं।

पृष्ठ—२२

कष्टोंका ध्यान होना—कष्ट न हो इसकी कोशिश करना, अमुविधाओं न पैदा होने देना।

कृतज्ञ होना—अुपकार या अच्छे कामके प्रति आदर या श्रद्धाकी भावनामें युक्त होना। अनुग्रहीत होना।

प्रार्थी—प्रार्थना करनेवाला, विनय करनेवाला।

निकृष्ट—सबसे हीन, अेकदम खराब। हृदय काँप अुठना—डर मालूम होना, भयभीत हो जाना।

रक्त सूख जाना—आशंकाके कारण अत्यधिक भयभीत हो जाना, अितना स्तब्ध हो जाना कि मानो शरीरमें रक्त ही नहीं है।

विचार-शक्ति-शून्य हो जाना—कुछ विचार न सूझना, किकर्तव्यविमूढ़ हो जाना, बहुत परेशान हो जाना।

अचरज—आश्चर्य, विस्मय।

चेचकके दाग—माताकी बीमारीके कारण पड़े हुअे भद्दे निशान।

जला हुआ-सा—बिगड़ा हुआ, अव्यवस्थित, (यहाँ) सनकी, झक्की, आधा पागल।

फलाँ—अमुक, किसी खास।

कुटिया—घर।

निशास्ता—किसी पदार्थको भिगोर अुसमेंसे निकाला हुआ सत या गूदा।

सेब—नासपातीकी जातिका मञ्जोले आकारका अक पश्चिमी फल जो हिमालय प्रदेश, काश्मीर तथा पंजाबमें बहुतायतसे होता है। अिमका रंग हल्का हरा और कभी-कभी लाल होता है। यह मुलायम तथा मीठा होता है।

आँवलेका मुरब्बा—(आँवला-गोल कागजी नींवूके बराबरका अक बहुत ही गुणकारी फल, जिसका स्वाद कैलापन लिअे हुअे खट्टा होता है।) आँवलोंको शक्करकी चासनीमें डालकर मुरब्बा बनाया जाता है जो खानेमें स्वादिष्ट, तथा शीतल होता है और रक्त शोधक, तथा वात शान्त करने-वाला माना गया है।

पपीता—अक फल जो जब पक जाता है तो अन्दरसे गहरा पीला निकलता है और मीठा होता है।

हकीम—वैद्य, डाक्टर, चिकित्सक।

पृष्ठ—२३

मोची—चमार।

जूतेके बीचमें पड़ना—गुस्सेका शिकार बनना।

बहकमें—झोंकमें, बहावमें, (यहाँ) अच्छा न होते हुअे भी किसी कामके हो जानेका भाव।

सृष्टि करना—अुत्पन्न करना, निर्माण करना, बनावट।

३. जीवन और शिक्षण

पृष्ठ—२८

बस्ता—पढ़नेकी किताबें, कापियाँ आदि बाँधनेका थैला।

औरोंके—दूसरोंके।

सावकाश—धीरे-धीरे।

भान होना—आभास मिलना, ज्ञान होना, अनुभव होना।

गैर जिम्मेदार—बिना किसी जिम्मेदारीके या अुत्तरदाअित्वके।

पृष्ठ—२९

हनुमान-कूद—सीताजीकी खोजके समयकी हनुमानजीकी लम्बी कूद (यहाँ) बड़ी अुडान।

भगवानने अर्जुनसे कुरुक्षेत्रमे गीता कही—कुरुक्षेत्रके मैदानमें युद्धके लिअे तैयार कौरवों तथा पांडवोंकी सेनाओंके बीच अर्जुनका मोह नष्ट करने तथा अुसे युद्धमें प्रवृत्त करनेके लिअे श्रीकृष्णने अध्यात्म तथा कर्तव्य-कर्मका जो सुन्दर अुपदेश दिया था वही ' श्रीमद्भगवद्गीता ' के नामसे प्रसिद्ध है। गीता भारतीय अध्यात्म तथा

कर्म-योगका अत्यन्त श्रेष्ठ विवे-
चन है।

गीता पची-गीताके सिद्धान्तोंका अनु-
करण किया।

अलिप्त-अमम्बन्धित, अलग।

अँचे विचारोंके महल बनाना-मनमें
बड़ी-बड़ी कल्पनाओं अठना, महत्वा-
कांक्षाओं पैदा होना।

न्यूटन-अक महान वैज्ञानिक जिन्होंने
पृथ्वीके गुरुत्वाकर्षण-सिद्धान्तको
खोज निकाला था।

न जाने-न मालूम।

नोन-तेल-लकड़ीका फेर-गृहस्थीकी
झंझटें, परिवारके पालन-पोषणके
लिअे कमाने तथा दैनन्दिन
जीवनके लिअे आवश्यक सामग्री
जुटानेकी समस्याओं।

पेटका प्रश्न-रोजी-रोटीका प्रश्न,
जीवन-निर्वाहकी समस्या।

पहाड़ सामने खड़ा हो जाना-बड़ी
विकट समस्याओं पैदा हो जाना,
विषम परिस्थितिमें फँस जाना।

पेटके लिअे बन-बन फिरनेवाले
शिवाजी-शिवाजी अपने छापेमार
दस्तोंको लेकर मुगलोंकी पलटनों
पर छापे मारा करते थे, और
भूखे-प्यासे वनोंमें भटका करते थे

अुमी तरह वह युवक नौकरी न
मिलनेके कारण भटकता है।

करुण गीत गानेवाले वाल्मीकि-जब
ऋषि वाल्मीकिने व्याधद्वारा
चक्रवाक-दम्पतिसे अेककी हत्या
होनेपर चक्रवाकीका विरहकातर
विलाप सुना तो अनका कोमल
हृदय छलक अुठा और 'मा निपाद'
नामक करुण काव्य-श्लोक अुनके
मुखसे प्रस्फुटित हो अुठा। अुमी
तरह वह युवक अपनी दुर्दशापर
करुण काव्य करने लगता है।

कल्पनाओंका समाधान करना-
अुमंगें पूरी न हो सकनेपर मनको
बहलाना, सन्तुष्ट करना।

पृष्ठ-—३०

गृहस्थ-गृहस्थाश्रमी; जिमपर घरका,
परिवारका जिम्मा है।

चिन्ताक्रान्त-चिन्तासे, या फिरसे
बेचैन।

ततः किम्-अुसके बाद क्या? (श्री
शंकराचार्यने, विद्या मिल गयी,
बल मिल गया, धन मिल गया,
लेकिन 'अुसके बाद क्या?' का
प्रश्न अपने कुछ श्लोकोंमें बारबार
दुहराया है, और अन्तमें कहा है
कि सब कुछ व्यर्थ है, जबतक कि
असली ज्ञान अर्थात् परमात्म तत्त्वसे
साक्षात्कार नहीं हो जाता।)

सवाल दिमागमें कसकर चक्कर लगाने लगा था—आगे क्या, इस प्रश्नका कोअी हल नहीं मिल रहा था, रोटी-रोजीके लिये कोअी रास्ता नहीं सूझ रहा था और अमीलिये वह प्रश्न मनमें लगातार चिन्ता उत्पन्न कर रहा था ।

पृष्ठ—३१

आजकी मौत कलपर ढकेलना—जिस आफतमे छुटकारा नहीं है, उससे बचनेकी असफल कोशिश करना, समस्याओंको बिना सुलझाये अनुसे बचकर, भागनेका यत्न करना ।

मरना ही पड़ता है—विपत्ति आती ही है, जिम्मेदारी अुठानी ही पड़ती है ।

अपना मरण अपनी आँखोंसे देखना—महाराष्ट्रके प्रसिद्ध सन्त-कवि तुकाराम महाराजके अेक मराठी अभंगके पद्यांश 'आपले मरण पाहिलें म्यां डोळां' का अनुवाद । लेकिन यहाँ—मरणके पहिले ही मर लेना, अपना मरण अपनी आँखोंसे देखना, मरणका अगाऊ (अग्रिम) अनुभव करना अर्थ है—आनेवाली विकट परिस्थितिकी पूरी कल्पना होना,अुसके लिये तन-मनसे तैयारी रखना । आगे चलकर जीविका

अुपाजित करनी पड़ेगी—और जीवन-संघर्षमें जूझना पड़ेगा अिस बातका ज्ञान विद्यार्थी-अवस्थासे ही होना आवश्यक है और अुसी अवस्थामें अुसके लिये साधन जुटानेका कार्य आरम्भ हो जाना चाहिये ।

मरण टलना—आपत्तिमे बचना, सही-सलामत छूटना ।

मरणके अगाऊ अनुभवमे जो जी चुराते हैं—अपना अुत्तरदायित्व सँभालनेकी जो पूर्ण तैयारी नहीं रखते, आनेवाले संकटकी गम्भीरताको जो नहीं आँकते ।

निरी मौत—आफत-ही-आफत, बड़ा भारी संकट ।

मौत ही कौन ऐसी बड़ी मौत है—स्वयं मृत्युमे भी कोअी बहुत ज्यादा डरनेकी आवश्यकता नहीं है ।

हीआ—बच्चोंको डरानेके लिये कल्पित भयानक आकार-प्रकारका अेक प्राणी । (यहाँ) व्यर्थका भय । पार—सीमा, मर्यादा ।

बनिस्वत—अपेक्का, तुलनामें ।

पृष्ठ—३२

निकम्मे—अनुपयोगी, महत्वहीन ।

जड़—मूर्ख, बुद्धिहीन, सारासार विचारसे शून्य ।

मोत-प्रोत-भरी हुआ, पूर्ण ।
बशर्ते कि-शर्त यह है कि, जिस शर्त-
पर कि ।

अनुपयुक्त-अनुचित, अनावश्यक ।
वामनाओं-अच्छाओं, लालसाओं ।
कुम्हलाना-मुरझाना, अदासीन या
मुस्त हो जाना ।

बहुतेरे-बहुतसे, अनेक ।
कलह-विवाद, झगड़ा ।

औसप नीति-औसपकी नीतिपूर्ण
कथाओं । औसप प्राचीन ग्रीसका
एक अनुभवी तथा बुद्धिमान
व्यक्ति था, जिसने पशु-पक्षियोंकी
छोटी-छोटी कथाओंके माध्यमसे
कभी बड़ी अनुपुक्त तथा शिक्वा-
प्रद बातें कही थीं । उसकी महत्व-
पूर्ण मलाहसे उसके मालिकको
बहुत लाभ पहुँचा था; जिसलिअे
उसने खुश होकर उसे गुलामीसे
मुक्त कर दिया था ।

अरसिक-सूरा, जो नीरस तथा
सरसका भेद न समझता हो ।

सीख-शिक्षा, उपदेश ।

मान देना-अच्छा, बढ़िया मानकर
स्वीकार करना, ग्रहण करना ।

सहकार-पहयोग, भागीचारा ।

बन्दरके हाथमें मोतियोंकी माला-
बन्दरको मोतियोंकी कीमत मालूम

नहीं रहती, वह तो हर चीजकी
अपयुक्तता “खाद्य पदार्थ” की
दृष्टिसे ही देखता है, जिसलिअे
जब अंगके हाथमें मोतियोंकी
माला पड़ जाती है, तो वह उसे
फोड़-फोड़कर, खानेके लिअे अनुप-
युक्त देखकर फेंक देता है । जिस
कहावतका उपयोग ऐसे मूर्ख
मनुष्यके लिअे होता है, जो किसी
अँची अच्छी चीज, कृति या
अुद्देश्यको नष्ट-भग्नकर देता है,
ठुकरा देता है, अनादृत करता है ।

मरकट-बन्दर ।

डार्विनका सिद्धान्त-डार्विन १९ वीं
शताब्दीके बहुत बड़े वैज्ञानिक थे ।
अुनका मत था कि मनुष्यकी
अुत्पत्ति बन्दरोंसे हुआ है ।

हनुमानके हाथमें मोतियोंकी माला-
रामचन्द्रजीके राज्याभिषेकके बाद
हनुमानजीको जब एक बहुमूल्य
माला दी गयी, तो अुन्होंने अुसका
प्रत्येक मोती फोड़-फोड़कर फेंकना
शुरू कर दिया, क्योंकि अुन्हें अुन
मोतियोंमें ‘राम’ के दर्शन नहीं
हो रहे थे ।

पृष्ठ—३३

वफादार-अीमानदार, प्रामाणिक,
सच्चे ।

पाकशास्त्र—स्वादिष्ट अत्र विभिन्न प्रकारकी रसोंकी अत्र पक्वान्न बनानेकी विधियोंवाला ज्ञान ।

जीवन जीने दो—जीवनका वास्तविक आनन्द अठाने दो ।

पृष्ठ—३४

आनुपंगिक—जिसकी नाधना किसी दूसरे प्रधान कार्यको करते समय बहुत कम प्रयाममें हो जाये । साथ-साथ होनेवाला कार्य ।

ठोकरें खा-खाकर—गलतियाँ करते हुअे तथा अुन गलतियोंका फल भोगते हुअे ।

स्वावलम्बी—स्वयंपर निर्भर रहने-वाला, अपना काम स्वयं करने-वाला ।

अपेक्षा—आशा अुम्मीद ।

मा फलेषु कदाचन—गीताका अेक-प्रसिद्ध श्लोकांश है 'कर्मण्येवाधिकारस्ते, मा फलेषु कदाचन' कर्म ही तेरा अधिकार है, फलकी कभी आशा न कर, अुममें अपना अधिकार मत मान—अिसी ख्यालसे जो काम किया जाता है अुसे निष्काम कर्म कहते हैं ।

पृष्ठ—३५

शिक्षा-मोह—शिक्षा प्राप्तिके प्रति आमक्ति, ज्ञान प्राप्त करनेका लालच ।

विकृत—विगड़ा हुआ, गलत ।

पेट भरना—परिश्रम करके रोजी-रोटी कमाना ।

पातक—पाप ।

सर्वेषामविरोधेन—सबका अविरोध करने हुअे, किसीसे न लड़ते हुअे, किसीका द्वेष न करते हुअे ।

शरीर-यात्रा—जीवन बिताना ।

पृष्ठ—३६

वामन पंडित—(सन १६३६-१६९५) प्रसिद्ध पंडित तथा मराठी कवि । आप फारसी भाषाके भी अच्छे ज्ञाता थे । आपने कभी काव्य तथा अध्यात्म ग्रन्थ लिखे हैं ।

समीकरण—गणितमें अेक राशिको या संख्याको दूसरी राशिके या संख्याके बराबर बतानेकी क्रिया । दो चीजोंको बराबरीका समझाने या दिखानेका कार्य ।

४. कुत्ते

पृष्ठ—४०

सालोत्तरी—(शालिहोत्री) पशुओंका डाक्टर।

दरियापत करना—पूछना, पता लगाना।

सिर खपाना—लगातार मोच-विचार करना, रहस्य समझानेकी सतत कोशिश करना।

लंडूरा—जिसकी पूँछ न हो, कुंवारा या रँडवा (यहाँ) कुत्तेसे वंचित।

तबीयत गुदगुदाना—मनमें मौज भुटना, आनन्दकी लहर आना।

अभ्यस्त—जिसे किसी कामको करनेका अभ्यास हो।

अुस्ताद—गुरु, प्रवीण।

भन्नाके—तावमें आकर, गुस्सेमें।

दाद देना—मुशायरों तथा कवि सम्मेलनोंमें किसी कवि या शायरके किसी टुकड़ेपर यदि वह जैच जाये या पसन्द आ जाये तो दाद दी जाती है, तारीफ की जाती है; (यहाँ) भूँकना।

कम्बख्त—(यहाँ) बदमाश।

बाज-बाज—कोओ-कोओ।

कवित्त—३१ अक्षरोंका अक वृत्त, घनाक्षरी द्वंद्व।

छप्पय—काव्यका अक मात्रिक छन्द जिसमें छह चरण होते हैं और प्रत्येक चरणमें २५ या २६ मात्राओंपर यति होती है।

हंगामा गरम होना—खूब हो-हल्ला मचाना, हंगामा खड़ा होना।

पृष्ठ—४१

आर्डर-आर्डर—जब सभामें काफी हो-हल्ला होने लगता है और सदस्य गण आपसमें संयम खो बैठते हैं तब सभापति 'आर्डर-आर्डर' (शान्ति, शान्ति) कहकर सभापर नियन्त्रण स्थापित करता है।

दरिया—बड़ी नदी।

शराफत—भलमनसाहत, सज्जनता।

डालियाँ—फल-फूल, मेवे तथा खाने-पीनेकी व भेंटकी वस्तुअे जो डलियोंमें सजाकर किसीके सम्मानार्थ भेजी जाती हैं। अँग्रेजोंके जमानेमें साहब लोगोंको रिश्वत देनेका यह अक सम्मानित तरीका था।

खुदा कसम—भगवानकी मौगन्ध, (बातकी यथार्थतापर जोर देनेके लिअे कहा जाता है।)

वाह-वाह, करके—तारीफ करते हुअे॥

बख—कुत्तेका धीरेसे आवाज करना।

पाक—पवित्र।

न राग न सुर, न सिर न पैर—कोओ
ताल-तन्त्र नहीं, कोओ मिलमिला
या सलीका नहीं।

बेताल कहींके—जिन्हें कोओ ताल-तन्त्र
नहीं मालूम हो।

गलेबाजी करना—लगानार चिल्लाते
जाना, बकते जाना।

तानसेन—मुगल बादशाह अकबरके
समयका अक अत्यन्त प्रसिद्ध
गवैया।

सम्बन्ध खिचा हुआ—सा रहना—पसन्द
न होना, घृणा होना।

पृष्ठ—४२

अगरचे—यद्यपि।

बैर मोल लेना—शत्रुता करना।

अलबत्ता—वशक, हाँ।

षड्जके सुर—संगीतके सात स्वरोंमेंसे
चौथा स्वर। यह गदहेके स्वरसे
मिलता-जुलता होता है और
असके अच्चारण स्थान छह है :—
नाक, कंठ, अुर, तालू, जीभ और
दाँत।

ओश्वरकी सर्वव्यापकता—ओश्वर सब
जगह है, यह भाव।

मार्ग-दर्शनकी प्रार्थना—ओम्कारियोंका
अक प्रसिद्ध प्रार्थना-गीत—Lead,
O Kindly Light ! (ओ

दयालु प्रकाशमय, मुझे रास्ता
बताओ।)

गीतकी नर्ज बुद्धिमें बिठानेकी कोशिश
करना—किसी गीतकी धुनको
हृदयंगम करनेका प्रयत्न करना,
अुसे बार-बार गुनगुनाना ताकि
वह याद हो जाअे।

हाथ-पाँव फूलना—डरके मारे अेक
जगह बँध जाना, अटक जाना,
स्तब्ध हो जाना।

पृष्ठ—४३

थूथनी—मूअर, घाड़े, बैल आदिका
लम्बा निकला हुआ मुँह, (यहाँ)
घबराहटके मारे फैला हुआ मुँह।

तराशी हुई—दाढ़ी तथा मुँछोंको
बिलकुल साफ कर देनेके कारण
चेहरा मुधड़ा, गढ़ा हुआ—सा दीखता
था।

वे-आवाज... निकल रही है—गा तो
रहा हूँ, पर डरके मारे आवाज
नहीं निकल रही है। गाते समय
मुँहकी जो बनावट थी सिर्फ वही
है, गलेमे आवाज नहीं निकल
रही है।

अित्तिफाक—अचानक।

मसिया—शोक गीत।

तुक—कविताकी वह पंक्ति जो अपनी पूर्वकी पंक्तिसे लय तथा तुकमें मेल खाती हो।

कुत्ता-घास—अेक प्रकारकी घास जिसकी बाल कपड़ोंमें लिपट जाती है। लपटौवा घास।

कब्रमें पाँव लटकाये बैठना—तुरन्त मृत्युकी सम्भावना बनी रहना, मरनेका खतरा बना रहना।

छुतहा रोग—वह रोग जो सक्रामक है, जो संसर्गसे बढ़ता है।

खुराट—अुस्ताद, जूना, बूढ़ा।

सिकन्दर—जबरदस्त, तगड़ा।

दबदबा—रोंब, प्रभाव, आतंक।

पिल्ला—कुत्तेका बच्चा।

बाज आना—काँची काम करनेसे बचना, दूर होना, अलग होना।

दुम—पूँछ।

खास तौरपर—विशेषतया।

पृष्ठ—४४

होश ठिकाने रहना—सोचने समझनेकी सामर्थ्य रहना।

बेढंगी हरकते—अजीब व्यवहार, समझमें न आनेवाला रवैया।

निश्चलता—(यहाँ) डरके मारे हिल-डुल न सकना।

दिमाग...खाक...सकता है—दिमाग कतअी काम नहीं कर सकता, सोचने-समझनेकी शक्ति चली जाती है।

तीर मारना—बड़ा काम करना, प्रशंसा योग्य काम करना।

परले सिरेका—अत्यधिक, बहुत।

शिष्टता—सम्भ्यता, नम्रता।

चीं-चपड़ करना—जवाब देना, अुज्ज करना, विरोध प्रदर्शन करना, खिलाफ बोलना।

सड़क नापनेमें—सड़कपर चलते रहनेमें, लगातार भटकनेमें।

सीनाजोरी करना—जबरदस्ती करना, ताकतके बलपर अत्याचार करना।

अपवाद—वह चीज जो व्यापक नियमके विरुद्ध हो, बाधक हो।

पृष्ठ—४५

अक्सर—प्रायः, बहुधा।

अितमीनान—भरोसा, विश्वास।

छिछोरी—ओछी, छोटी, फिजूल।

फकीरी शान—संन्यामियोंकी प्रतिष्ठा।

बड़े-मे-बड़ेकी परवाह न करनेकी साधुओंकी वृत्ति अथवा टेक।

दुरागीष—श्राप।

रोंगटे खड़े होना—रोमांच हो अुठना,

दिलका काँप अुठना—घबराहट शुरू हो जाना।

बेशुमार—अनगिनत ।

पृष्ठ—४६

चारपाओकी अदवान—चारपाओकी पैताने (पैरकी ओर) की वह रस्सी जिसे बुनावटको कसी रखनेके लिये लगाया जाता है ।

अनुमाद—पागलपन, अत्यधिक जोश ।

कसौली—शिमलेके पास ६००० फुट-की अँचाओपर अक स्थान जहाँ कुत्ते, सियार आदिके विषकी दवा की जाती है ।

सब कुत्ते कसौली पहुँच जायें—लेखक-के मनमें कुत्तोंके प्रति अितनी घृणा तथा द्वेष है कि यदि वह काट सके तो कुत्ते स्वयं पागल हो जायेंगे ।

अुरफी—किसी व्यक्तिका नाम ।

प्रतिद्वन्द्वी—विरोधी, स्पर्धा करनेवाला ।

चिल्ल-पों—चीख-पुकार, हल्लागुल्ला, व्यर्थकी कार्रवायियाँ ।

कुत्ते भूँकते रहते—विरोधी बदनाम करनेके लिये झूठ-सच कहते रहते, साजिश करते रहते ।

५. जीनेकी कला

पृष्ठ—५०

प्रतिपादन—(यहाँ) भली-भाँति पूरा करना ।

तदविषयक—अुस विषयसे सम्बन्धित ।

विज्ञान—विशेष शुद्ध ज्ञान, अैसा ज्ञान जो प्रयोग-सिद्ध हो, जिसमें हर चीज नयी-तुली अेवं व्यवस्थित हो ।

क्रियात्मक प्रयोग—प्रत्यक्ष, असली रूप ।

क्रियात्मक कला—किसी सिद्धान्त या बातका प्रत्यक्ष व्यवहारमें अुतारनेकी कला । दक्षतापूर्वक किया हुआ प्रयोग ।

सापेक्ष—अेक-दूसरेपर आधारित, अेक-दूसरेसे सम्बन्धित ।

तूलिका—कूँची या ब्रश जिसे रंगमें डुबो-डुबोकर चित्रकार चित्र आँकता है ।

ज्ञानको प्रयोगकी कसौटीपर कसना—किसी सिद्धान्तको प्रत्यक्ष व्यवहारमें अुतारकर अिम बातकी जाँच करना कि वह ठीक है या नहीं ।

परीक्षण—सावधानीसे किया हुआ प्रयोग । प्रत्यक्ष व्यवहार ।

ज्ञातव्य—जानने योग्य ।

पृष्ठ—५१

मन्त्रपाठी शुक—(यहाँ) बिना अर्थ समझे मन्त्रोंको बार-बार रटने-वाला तोता।

संस्कार—शिक्षा, उपदेश, संगति, धर्म, इतिहास, साहित्य, परम्परा आदिका मनुष्यके मनपर पड़ा हुआ वह प्रभाव जिससे अुसके विचार करनेका तरीका, काम करनेका ढंग, आदतें, रहन-सहन आदि सभी परिष्कृत हो जाते हैं।

सूत्र रूपमें—(सूत्र—थोड़े अक्षरों या शब्दोंमें कहा हुआ कोअी सारपूर्ण वाक्य जो अनुभव तथा ज्ञानका निचोड़ होता है, और जिसमें अर्थ भरा होता है।) संक्षेपमें, थोड़ेमेंसे।

प्रयोग रूपी टीका—(टीका—किसी सूत्र अथवा रहस्यको खोलकर समझाना) प्रत्यक्ष व्यवहारके माध्यमसे किसी सूत्रके रहस्यको खोलकर अुसकी सत्यता साबित करना।

सत्यं ब्रूयात्—सत्य बोलना चाहिअे।
हृदयंगम करना—पूरी तरहसे समझ लेना, मनमें अुतार लेना।
क्रोधजित—क्रोधपर काबू करनेवाला, संयम रखनेवाला।

पृष्ठ—५२

सिद्धान्तोंकी गठरी—नीति-ज्ञान तथा अध्यात्मकी बड़ी-बड़ी बातें, जिनका जीवनसे कोअी सम्बन्ध न हो।

कर्मक्षेत्रके द्वारतक—जीवन-निर्वाह तथा जीवन-यापनके कार्योंको पूरा करनेके लिअे।

निष्क्रिय—(यहाँ) ज्यादा कुछ न कर सकनेवाला, असफल।

अुपयोगसे—व्यवहारमें लानेसे।

सिद्धि—सफलता।

अवकाश—खाली समय, फुर्सत।

अपूर्ण वस्तु—वह वस्तु जो पूरी न हो, जो पूरी तरहसे सफल न हो, अधूरी हो।

अभिशाप—श्राप।

देशव्यापक—समस्त देशमें फैला हुआ।

बिरले—बहुत कम, कोअी-कोअी।

दृष्टि बिन्दु—लक्ष्य, अुद्देश्य।

दृष्टिसे आंझल होने देना—भूल जाना, ध्यानमें न रखना।

पृष्ठ—५३

अज्ञानावस्था—अध्यात्म ज्ञानसे रहित मनकी वह अवस्था, जिसमें व्यक्ति सांसारिक पचड़ोंमें-राग-द्वेषके कर्षुद्र झगड़ोंमें फँसा रहता है।
(यहाँ) अज्ञानकी स्थिति, अैसी

स्थिति जिसमें वस्तुओंकी सही जानकारी नहीं होती।

शताब्दी—सौ वर्ष।

सिद्धान्तोंका निर्जीव भार—कोरे तथा थोथे सिद्धान्त जिनका जीवनको सजाने-सँवारने या अपूर अठानेमें कोई उपयोग नहीं होता।

जीवनका ज्ञान और क्रियात्मक प्रवाह—अनुभवसे सिद्ध जीवनोपयोगी ज्ञान और आदर्शोन्मुख व्यवहार।

निदर्शन होना—द्योतक होना।

विरत करना—अलग करना, हटाना, काटना।

पैरोंकी बेड़ियाँ—अन्नतिके मार्गकी बाधाएँ, अड़चनेँ, कठिनावियाँ।

विशिष्ट—खास, विशेष।

मानवी—नारी।

असमें सहन शक्तिकी सीमा समाप्त है—नारीमें अत्यधिक दुख एवं कष्ट सहन करनेका सामर्थ्य है।

घोरसे घोरतर अग्नि-परीक्षा—कठिन-से-कठिन या बड़े-से-बड़ा दुख।

हँसते-हँसते पार करना—सहजमें सफल होना।

सिहरना—काँपना, डरना, भयभीत होना।

स्वार्थवृत्ति—सिर्फ अपना ही भला सोचने एवं चाहनेकी वृत्ति।

आहुति—बलिदान, सर्वस्व न्यौछावर करनेकी भावना।

पृष्ठ—५४

प्रस्तुत कर देना—(यहाँ) तैयार कर देना।

संस्कृतिका कोप—प्राचीन संस्कारोंकी भव्य परम्परा या खजाना।

संसारके जागृत अंश—(यहाँ) यूरोप तथा अुसकी मभ्यतासे प्रभावित देश।

भौतिक सुख-भोग—वे सुख जो अच्छे खाने, अच्छे पहनने, सजने, फैशन करने और आरामसे जीवन बितानेकी लालमायुक्त हों। सांसारिक अश्वर्य एवं भोग-विलास।

युगजीर्ण—बहुत पुरानी।

जीर्ण-से-जीर्ण कुटीर—अत्यधिक टूटी-फूटी (पुरानी) झोपड़ी।

अुजड़ा आँगन—गरीब घर।

सहनशीला—जो कष्ट सहन करनेमें समर्थ हो, तकलीफोंसे न घबराती हो।

ममतामयी—स्नेह करनेवाली, प्रेमसे परिपूर्ण।

हृदयका चूर-चूरकर—अपनी अच्छाइयों तथा आशाओंको मिटाकर, अपने सुखकी परवाह न कर।

पत्थरकी देव-प्रतिमा—अैसी नारी जो तपस्यापूर्ण जिन्दगी बिता रही हो, अेकदम सादा पहनती और अेकदम सादा खाती हो, जिसकी सब अिच्छाअे और अरमान नष्ट हो गअे हों।

दुधभूंही—नन्ही, छोटी, कम अुम्भकी।
(यहाँ) बाल-विधवा।

शापमअी युवती—वह युवती जिसे मानो किसीने श्राप दे दिया हो, जो बहुत ही दुखित अेवं पीड़ित है।
(विधवा जो अब युवती हो गअी है।)

अज्ञात व्यक्ति—अैसा व्यक्ति जिससे बालिकाका विवाह तो हुआ था पर जिसकी अुसे स्मृति नहीं रह गअी है।

सतीत्व—पति अथवा प्रेमीके प्रति पत्नी या प्रेमिकाकी अेकान्तिक निष्ठा।

संयम—मन तथा व्यवहारपर कठोर नियन्त्रण।

अमानुषिक यन्त्रणा—वह तकलीफ अेवं पीड़ा जिसे सहना मनुष्यके लिअे सम्भव नहीं, जो मनुष्य जैसे सम्वेदनशील-समझदार प्राणीके योग्य न हो।

अभ्यस्त बना लेना—अदी बनाना।
आदत डालना।

दूसरोंके...दे सकती—विधवा स्त्रीको अपने सुखका अभाव शुभ अवसरों-पर विशेष जोरसे खटकता है लेकिन वह अपने असि दुखको आँसू बहाकर हलका भी नहीं कर सकती, क्योंकि शुभ अवसरों-पर आँसू बहाने और रोकनेको अशुभ माना जाता है।

अर्धांगिनीकी विडम्बनाका भार लिअे—धर्ममें स्त्रीको पुरुषकी अर्धांगिनी आधा (अंग) शरीर माना गया है। पुरुषके लिअे यह आवश्यक है कि वह हर सामारिक कार्य अुमकी मलाहसे, अुमकी जानकारीमें और अुमसे पूछकर करे; लेकिन पुरुष-प्रधान समाजमें अैसा नहीं होता। पुरुष करता वही है जो अुसे जँचे और अच्छा लगे। वह अपनी गलत-सलत अिच्छा पत्नी-पर लादता जरूर है। पुरुषका यह कार्य अर्धांगिनी शब्दकी विडम्बना है।

सीता—रामकी पत्नी सीता, जिसने रावण द्वारा चुरा लिअे जानेपर, अुन दुष्टके कैदखानेमें, अत्याचारों-का मुकाबलाकर अपना सतीत्व कायम रखा था; पर जिसे रामने बिना अपराध, सिर्फ लोकोपवादके

कारण घरसे निकाल दिया था और जो अिसपर भी राम ही के प्रति निष्ठावान बनी रही थी।

सावित्री—पुराणोंके अनुसार मद्र देशके राजा अश्वपतिकी तेजस्विनी कन्या सावित्रीने अेक राज्यविहीन राजाके अत्यन्त अल्पायु पुत्र सत्यवानसे (सावधान कर दिअे जानेपर भी) विवाह कर लिया था। अेक वर्ष बाद जब यमराज सत्यवानके प्राण लेकर चला तो सावित्री अुसके पीछे हो ली थी और बहुत समझाने-बुझानेपर भी जब वह न लौटी तो हारकर यमराजको सत्यवानके प्राण लौटाने पड़े थे।

क्रीत—खरीदी हुआ।

मद्यप—शराब पीनेवाला।

निकृष्ट—नीचे दर्जेका, नीच।

पृष्ठ—५५

परिचर्या—सेवा-शुश्रूषा, देख-भाल।

जन्म-जन्मान्तर—आगे होनेवाले हर जन्ममें।

संग—साथ।

आश्चर्याभिभूत—आश्चर्य-चकित।

अिगित मात्रसे—अिशारेभरसे।

जीवन-प्रभात—तरुणात्रीकी प्रारम्भिक अवस्था।

रंगीन स्वप्नोंको—जीवनके सुखद सपने, सुखी जीवन।

विस्मृतिसे ढँककर—भूलकर।

बिना अेक दीर्घ निःश्वास लिअे—बिना कोअी दुख माने, सहज भावसे।

हृदय भर आना—पीड़ा या दुखका अनुभवकर दुखित होना, बहुत बुरा मालूम पड़ना।

अट्टालिका—बड़ी अूँची अिमारत।

भगिनी—बहन।

रक्षाबन्धन—श्रावणकी पूर्णिमाको बहनें भाअियोंके हाथोंमें रक्षा (राखी) बाँधती हैं, और अुनके मंगलकी कामना करती हैं। ब्राह्मण भी अपने यजमानोंके हाथमें राखी बाँधते हैं। यह भारतीयोंका प्रमुख मांगलिक त्योहार है।

साहसहीन अेवं निर्जीव-से—अत्यन्त साधारण, डरपोक अेवं कुछ भी बड़ा कार्य न कर सकनेवाले।

अुपेक्षा और अनादरसे आहत हृदय—जिमें बार-बार अपमान तथा-दुत्कार सहन करनी पड़ी हो तथा जिसकी सार-सँभाल ठीकसे न होती हो।

नवचिदपिकुमाता न भवति—माता कभी कुमाता अर्थात् बुरी माता

नहीं होती। कहनेका भाव यह है कि पुत्र चाहे कितना ही बुरा क्यों न हो जाये पर माता मदा अुमकी मंगल-कामना ही करती है।

अन्वेषक—शोधक, पता या खोज लगानेवाला, ढूँढ़नेवाला।

अप्रतिम—जिमकी तुलना न हो सके।
अलौकिक—वह जो मनुष्योंके लिये सम्भव न हो, जिसे देव या राक्षस ही दिखा सकते हों।

विभूति—महान व्यक्ति।

शव—लाश, मुर्दा।

अतल जल—समुद्र, खूब गहरा पानी।

मगर-मच्छ—समुद्रके अन्दर या गहरी नदियोंमें पाये जानेवाले बड़े-बड़े खतरनाक अेवं घातक जलचर।

अुदर—पेट।

निरन्तर—लगातार, सतत।

पथराओ आँख—मर जानेके कारण स्थिर और निष्प्रभ बनी हुआ आँख।

निस्पन्द—धड़कनविहीन, गतिविहीन।

पृष्ठ—५६

पक्षाघात—लकवेके कारण शरीरका कोओ अवयव या आधा भाग सुन्न हो जाना।

जड़ कर देना—सुन्न कर देना, गतिहीन बना देना।

चेष्टा द्वारा—अिशारोंसे।

सीमातीत सहिष्णुता—जिसमें सहन-ही-सहन करना पड़े, सहन करनेका अन्त ही न आये।

संज्ञाहीन—(यहाँ) किंकर्तव्यविमूढ़, कुछ न कर सकनेकी अवस्थामें।

परिधान—वस्त्र या कपड़े।

वामन—बौना, छोटा, कम अँचाओ-वाला।

प्राचीन-गौरव-गाथाका प्रदर्शन मात्र—परम्परागत त्याग, तपश्चर्या, कष्ट-सहन अेवं धर्म-भीरुताका सिर्फ अुदाहरण था।

मूक निरीह भावसे—बिना कुछ बोले, बिना कोओ विरोध या मत-प्रदर्शन किये। चुपचाप सिर झुकाये हुअे।

समय... होते आ रहे हैं—समय तेजीसे बदल रहा है।

पृष्ठ—५७

मृत्युका शृंगार—मौतकी तैयारी, खूब गहरा पतन।

पूँजीवाद—कारखानों, अुद्योगों तथा प्रतिष्ठानोंमें नफेके लिये लगाओ गओ सम्पत्तिसे लागत-पूँजीके

अलावा अतिरिक्त पूंजी (नफा) कमानेकी उत्पादन-व्यवस्थाको पूंजीवाद कहा जाता है। इस व्यवस्थामें उत्पादनका अंक मात्र लब्ध नफा या अतिरिक्त पूंजी कमाना ही रहता है।

गर्हित-घृणित, धिक्कारने योग्य।

प्रभुता-अधिकार।

अपार्जनका उत्तरदायित्व-भरण-पोषणकी, कमानेकी, जीविका अर्जन करनेकी जिम्मेदारी।

अंक प्रकारका पूंजीपतित्व प्राप्त होना-पेट भरनेकी, रोटी देनेकी शक्ति हाथमें होनेके कारण अपनी अच्छानुसार किसीसे काम करवा-लेनेकी सत्ताका होना।

महज प्राप्य-सरलतासे हासिल हो सकनेवाला।

स्वच्छन्द-अनुमत्त, नियन्त्रणसे परे।

अपकरण-साधन।

मानसिक दासता-जिममें दास या अधीनस्थ व्यक्ति, अपनी अधीनताकी बातको ठीक तथा न्यायोचित समझता है। मनसे, भावनासे, वृत्तिसे गुलाम होना।

शारीरिक दासता-शरीरसे गुलाम होना।

यन्त्रणा-बेहद कष्ट, पीड़ा, तकलीफ।

पृष्ठ—५८

मूक यन्त्रणा सहनेवाला-जो चुपचाप, बिना विरोध किए, कष्ट सहन करता हो।

प्रयाम माध्य-प्रयत्नसे साध्य होनेवाला, लगातार कोशिशोंसे हासिल होनेवाला।

पासंग-खाली तराजूके दोनों पलड़ोंको बराबर करनेके लिये, जिस तरफका पल्ला अपर हुआ हो उस तरफकी डंडीमें या पलड़ेकी रस्सीमें या पलड़ेमें बाँधी जानेवाली या रखी जानेवाली कोठी वस्तु।

ढेला-मिट्टीका टुकड़ा, कंकड़।

तुला-तराजू।

गुरु-भारी।

प्रदर्शन-दिखाना।

मत्तं शिवं सुन्दरम्-ऐसी चीज जो मत्त है, कल्याण-प्रद है तथा सुन्दर है।

समाज द्वारा निर्धारित विधान-समाजके नीति-नियम, प्रथाएँ तथा आचार-विचार।

वंशवृद्धि-वंशको आगे चलानेके लिहाजसे सन्तान उत्पन्न करना।
चिर निवेदित-अनेकों युगोंसे कही जाती रही।

वातावरण—आसपासकी
स्थितियाँ ।

अेकान्त रूपसे—अन्तिम तौरपर । शत
प्रतिशत, पूरी तरह ।

पृष्ठ—५९

स्वत्व—अधिकार ।

स्पृहणीय—अच्छी, जिसे सब लोग
अपनाना चाहें, वाछनीय ।

कारा रक्षक—जेलर, कैदियोंको जेलमें
बन्द रखनेवाला ।

देवताकी पाषाण प्रतिमा—पत्थरकी
निर्जीव मूर्ति, देवताओं जैसे गुणोंसे
युक्त परन्तु पराधीन, तेजोहीन
व्यक्ति ।

मनुष्यताका कलंक—अैसे कृत्य करने-
वाला जो कृत्य मनुष्यको नहीं
करने चाहिये ।

अुपेक्षणीय—अुपेक्षा करने योग्य ।
तिरस्कार करने लायक ।

पृष्ठ—६०

विकृत—विकार-युक्त ।

अन्तर्मुखी शक्ति—मन तथा आत्माकी
शक्ति । सोचने तथा विचार
करनेकी शक्ति ।

बहिर्मुखी शक्ति—शारीरिक शक्ति,
भौतिक शक्तियाँ ।

अवलम्ब—सहारा, आसरा ।

परि-

झंझा—तूफान, बहुत तेज बहनेवाली
हवा ।

मलय समीर—मलय पर्वतपर चन्दनके
अनेक वृक्ष हैं असलिये अुसकी
हवा बड़ी सुगन्धित तथा आनन्द-
दायी होती है ।

मूलस्थित—मूलभूत, जो टिकाये रखने
बनाये रखनेमें समर्थ हो, जिसपर
किमी वस्तुका पूर्ण आधार, रूप-
रंग आदि तथा विकास निर्भर हो ।
कटकाकीर्ण—काँटोंसे भरा हुआ, आप-
त्तियों, दुखों तथा पेचीदा सम-
स्याओंसे युक्त ।

प्रशस्त बनाना—चौड़ा करना, आने-
जाने योग्य बनाना, मरल बनाना ।

६. धरती

पृष्ठ—६५

खेतिहर—खेती करनेवाले, किसान ।
धरतीके बेटे—भूमिमें खेती करके अुसी-
पर जीनेवाले ।

बिलटना } —बर्बाद होना, नष्ट
बंटाढार होना } होना ।

जग-प्रलय—संसारका नष्ट हो जाना,
सर्वनाश ।

भारतका सर्वोदय—भारतमें रहनेवाली
जनताकी सब दृष्टिसे अुन्नति ।

देख-भालकर—समझ-बूझकर ।

खून-पसीना अंक कर देना—दिल
लगाकर कड़ी मेहनत करना, जुट-
कर काम करना।

जी चुराना—कामको टालना, कामसे
बचना, आलस्य करना।

आश्विनकी धूप—अग्न्य मासकी धूप
बड़ी कड़ी तथा बेचैन करनेवाली
होती है। बरसातके बादकी धूप
हानेके कारण अिसमें अुमस और
घुटन बहुत अधिक होती है।

डटा रहना—हिम्मतसे किसी काममें
लगे रहना।

मितव्ययी—कम खर्चीला, बचा-बचा
कर खर्च करनेवाला।

बुद्धू—मूर्ख, गँवार।

पुराणपन्थी—पुरानी विचारधाराओंके
अनुसार चलनेवाला।

आँखोंका अन्धापन है—अज्ञान,
नासमझी है।

चावसे—प्रेमसे, लगनसे।

भारी भरकम—बहुत वजनदार (यहाँ)
कठिन, पेचीदा।

अधकचरा—जो सम्पूर्ण रूपसे ठीक
न हो।

द्वारे—दरवाजेपर, सामने।

अंडेल देना—किसी चीजको अंकदम
डाल देना, (यहाँ) बिना समझाये,

अंकदम सामने रख देना।

पृष्ठ—६६

सस्ता विज्ञापन—ऐसी बात जो सरलता
पूर्वक प्रसारित और प्रचारित की
जा सके।

अपने पैरोंमें आप कुल्हाड़ी मारना—
अपने हाथसे अपना नुकसान
करना।

हमदर्दी या दयामया—महानुभूति।

मित्रोंसे भगवान बचाओ—जो मित्रता-
का, दोस्तीका, दावा करते हैं,
लेकिन जिनकी करतूतोंसे नुकसान
पहुँचता है, उनसे भगवान दूर
रखे।

त्रुटि—दोष, गलती।

अुसके घरकी. . वस्त्र पहना—किमानकी
घर रूपी लक्ष्मी अर्थात् कुटिया
जो तिनकोंसे, घास-फूससे छाओ
हुओ होती है।

भाना—अच्छा लगना, पसन्द आना।

बाँस और बल्लियोंके ठाठसे—गाँवोंमें
बाँस और बल्लियाँ बहुतायतसे
तथा जैसी चाहो वैसी मिलती हैं
और बहुत सस्ती पड़ती हैं।

ताल—तालाब, पोखर।

पायी हुओ—थोपी हुओ, बनाओ हुओ,
गढ़ी हुओ।

वाट्टी जगतका—गाँवके बारहकी बनी
हुआ चीजोंका, कारीगरोंका या
मददका।

मुँह ताकना—मददकी अपेक्षा रखना,
सहारेके लिये निर्भर रहना।

स्वावलम्बी—अपनी आवश्यकताओंके
लिये अपने पर ही निर्भर रहने-
वाला। आत्मनिर्भर।

जीवनकी कुंजी—सफल जीवनका
रहस्य, जीवन यापनका केन्द्र-
बिन्दु।

हेंगा—खेत जोतनेके बाद मिट्टीके ढेल
तोड़ने और मिट्टी बराबर करनेके
लिये खेतमें चलाया जानेवाला
लकड़ीका कुन्दा या पाटा।

पंजाली—बैलोंके गलेमें डाला जाने-
वाला जुआ जो पूरा हो अर्थात्
जिसमें ऊपरकी लकड़ी (अपरौंच)
नीचेकी लकड़ी (तूरींच) और
दोनों ओरकी खड़ी लकड़ियाँ
(सौज) लगी हो।

बरत—(सं. वरत्रा) कुअसे मांट या
चरस अठानेकी मोटी रस्सी।
असे लाव भी कहते हैं।

पुराही—चरस, मोट या पुर जो चमड़ेका
बहुत बड़ा नाँदनुमा डोल होता है।
कुदाल—लोहेका बना हुआ अंक औजार,
जो प्रायः अंक हाथ लम्बा और

चार अँगुल चौड़ा होता है; अगममें
अंक लम्बा लकड़ीका बेट लगा
रहता है और यह जमीन या मिट्टी
खोदने तथा खेत गोड़ने आदिके
काममें आती है।

हँसिया—लोहेका अंक धारदार औजार,
जो अर्ध चन्द्राकार होता है और
जिससे खेतकी फसल या तरकारी
आदि काटी जाती है।

गाँवकी जानी-पहचानी कारीगरी—
प्राचीन समयसे चले आनेवाले
लुहार, माँची, मुनार, तेली, बुन-
कर आदिके धन्धे, जिनके गुण-
दोषसे किसान भली भाँति परिचित
रहता है।

शिल्प—कारीगरी, कला, काम-धन्धे।
रस्सी गठियाना—रस्सीको बल देकर
मजबूत बनानेके लिये गाँठ आदि
देना।

छकड़ा-गाड़ी—बाँझ लादनेकी छोटी
दो पहियोंवाली गाड़ी जिसे ब्रैल
खींचते हैं।

अख—ओख, गन्ना।

बोना—बीजको जमीनमें डालना।

पेरना—दो भारी तथा कड़ी वस्तुओंके
बीचमें डालकर किसी तीसरी
वस्तुको उसका रस या सत्व निका-
लनेके अद्देश्यसे खूब दबाना।

खाँड—शक्कर।

प्रक्रिया—किसी अंक खास अद्देश्य प्राप्तिके लिये प्रयुक्त विशेष रूपकी क्रियाओंका सुसंगत क्रम।

अँगुलियोंके पौरवोंमें बसना—पौर अँगुलीकी गाँठ या जोड़ जहाँमें वह झुक सकती है ; अँगुलीका वह भाग जो दो जोड़ोंके बीचमें रहता है। यहाँ पूरी तथा विस्तृत जानकारी होना।

खंडमार—खाँड (बिना साफ की हुई चीनी, कच्ची शक्कर) बनानेका कारखाना, वह स्थान जहाँ खाँड बनती हो।

सिरवाल—पानीमें बालोंके लच्छोंकी तरह फैलनेवाली घास, जिसका रंग हल्का हरा होता है। यह चीनी साफ करने तथा दवाके काममें आती है।

पृष्ठ—६७

राब—गुड़ या शक्कर बनानेकी प्रक्रियामें आँचपर औटाकर खूब गाढ़ा किया हुआ गन्नेका रस जो गुड़से पतला और शीरेसे गाढ़ा रहता है।

शीरा—चीनी या गुड़का शहदके समान गाढ़ा रस जिसे राबमेंसे अलग

निकाला जाता है तथा जिसे बादमें शक्कर (खाँड) बनती है।
भिंडीकी मुकलाओ—भिंडीके पौधेकी जड़को पानीमें भिगोकर बनाया हुआ रस जो गन्नेके औटते हुए रसको साफ करनेके काममें आता है।

बगला—अंक पक्षी, जिसका रंग सफेद होता है तथा जो मछलियाँ आदि खाता है।

अुद्यांग चौपट हो जाना—अुद्यांग बर्बाद हो जाना, नष्ट हो जाना, घाटे (नुकसान) के कारण धन्धा बन्द हो जाना।

आँख खोलकर—भ्रान्तियोंको दूरकर, ध्यानपूर्वक।

मिस्त्री—कारीगर, यान्त्रिक।

लोप करना—गायब करना, खतम करना।

बड़ी-बड़ी लावके पक्के गोला कुअें—पक्की आँटोंका गोल बना हुआ कुआँ जो पहिले धरतीके पूर बना लिया जाता है। बीचकी मिट्टी क्रमशः निकालनेपर यह गोला नीचे खिसकता जाता है। इसे ही 'कुअेंका गोला गालना' कहते हैं। गोला कुअें याने गोला गलाकर बनाये हुए कुअें जिनके

ऊपर कभी-कभी चारों ओरसे चरम या मोटमें जल भरकर खींचे जानेका अन्तजाम रहता है। चरसकी रस्सीको 'लाव' कहते हैं। कुअँके जिम भागमें चरस खींचने और रस्सी आने-जानेका प्रबन्ध रहता है वह 'लाव' की लम्बाओके अनुसार बड़ा या छोटा बनाया जाता है। 'लाव' का बड़ा या छोटा होना कुअँकी गहराओपर निर्भर है।

बलबूता—सामर्थ्य अवं माहा।

माल-मसाला—किसी चीजके निर्माणमें लगनेवाला सामान, वस्तुअँ आदि।

कौशल—कुशलता, कारीगरी, चतु-राओका काम।

जी-खोलकर—खूब, अत्यधिक, मनोयोगपूर्वक।

धरतीके सोत फोड़कर—जबतक पानी नहीं लगे, कुआँ खोदा जाता है, जब खुदाओ धरतीकी परतोंके अन्दर बहनेवाले किसी झरनेकी सतहपर जा पहुँचती है तब कुअँमें पानी आता है।

सरिया—लोहेकी छड़।

गर्डर—लोहे या फौलादका लम्बा तथा कुछ चौड़ा बीम (Beam) जो

अमारतोंमें आधार तथा पकड़के लिये दिया जाता है।

जी फेर देना—किसी वस्तु विशेषके प्रति अनिच्छा पैदा कर देना।

पृष्ठ—६८

अुलटी गंगा बहना—अँसा काम होना जो ठीक नहीं है, हितकर नहीं है, स्वाभाविक नहीं है।

अनहित—नुकसान।

ल्हसाओ—मिट्टी, भूसा, गोबर आदिके षोलको मड़ाकर पैरोंसे गूँधकर, हाथोंसे दीवालों आदिमें लगानेकी क्रिया।

हाथ बँटाना—साथ-साथ काम करना।

आधि—मानसिक चिन्ता, व्यथा, फिक्र।

व्याधि—रोग, बीमारी, आफत, झंझट।

विराजना—आरामसे, निश्चिन्त होकर रहना, सुखसे जीवन बिताना।

बाहरी कलकाँटे—विदेशी मशीनें, यन्त्र तथा अुनके पुर्जे।

जीवनपर छापा मारना—जीवनको अभिभूत करना, जीवनमें अधिकाधिक प्रवेश करना।

आर्थिक स्वतन्त्रता खोना—अपनी रोजीके लिये तथा काम-धन्धेको चलानेकी दृष्टिसे आर्थिक रूपमें दूसरोंपर निर्भर रहना, पूँजी तथा

सम्पत्तिके लिये दूसरोंका मुँह ताकना।

बौद्धिक स्वतन्त्रता—अपनी अक्ल और बुद्धिसे सोच-विचार करने तथा अनुमान लगानेकी स्वतन्त्रता।

आर्थिक और... रहा है—बड़ी-बड़ी मशीनोंके खरीदनेमें लगनेवाली पूँजीको प्राप्त करनेके लिये उसे पूँजीपतियों, सरकार अथवा सरकारी समितियोंके नियमोंमें बँधकर पूँजी प्राप्त करनी होगी। अतः तरह-असुकी आर्थिक स्वतन्त्रता नष्ट होगी और फिर अतः कल-काँटोंको सुधारनेके लिये भी दूसरों-पर ही निर्भर रहना होगा। अतः तरह-असुकी बौद्धिक स्वतन्त्रता भी नष्ट होगी।

किसान घरका रहेगा न घाटका—किसी भी तरफसे असुका फायदा न होगा। न तो वह देहातका आत्म-निर्भर किसान ही रह सकेगा और न वह आधुनिक यन्त्रों द्वारा संचालित खेतीका पूर्ण रूपेण मालिक ही बन पायेगा।

पिस जाना—बर्बाद हो जाना, तबाह हो जाना।

हाथ-पैरका बल होना—मशकत एवं कार्यक्षम शरीर होना, शारीरिक परिश्रम करनेवाला बनना।

धरती—(यहाँ) कृषि-कार्य, खेती।

घर-गृहस्थी—कुटुम्बका भरण-पोषण, मार-सँभाल आदि।

राह-राह चलना—सीधी राह चलना, व्यर्थके भटकने तथा झंझटोंसे बचना, पूर्वजोंके अनुभवसे जो सीख हासिल हो चुकी है उसके अनुसार जीवन यापन करना।

समझ-बूझ—देखने तथा समझनेकी शक्ति, अनूठी तथा अपयोगी बातें सोचनेकी प्रतिभा, सूझ-बूझ।

बढ़ा-चढ़ा होना—दूसरोंसे श्रेष्ठ बनना।

छँटकर—अलग होकर।

पृष्ठ—६९

लाभ—युद्ध।

भाषा और भाव दोनोंका धनी है—असुके दिलमें बहुरंगी सरल, शिष्ट और अदात्त सभी तरहके भाव अछूते हैं और उन भावोंको अभिव्यक्त करनेमें, प्रकट करनेमें वह भली-भाँति समर्थ है।

गीतोंसे सुख-दुखकी अनुभूति प्रकट होती है—किसानके दुख और सुखके अनुभव देहाती गीतोंमें प्रति-

बिम्बित हाते है, देहाती गीत
अुगकी खुशियों-मस्तिषो, अुसी
तरह पीड़ाओं अेवं अभाबोंसे भरे
होते है।

तार—सम्बन्ध।

पैनी बुद्धि जगमगाती है—गाँवोंमें
प्रचलित कहावनें जो बड़ी सुन्दर
अेवं मार्मिक होती है, किमानकी
सूझ-बूझकी तथा प्रतिभाकी द्योतक
है।

मे ५-जोल—आपसका भाभी-चारा,
सामाजिक सम्बन्ध।

पोढ़ी—दृढ़, मजबूत।

गाढ़ा समय—अैसा कठिन समय जब
कि कामकी बहुत भरमार-रहती
है अथवा दुखका समय।

जुताअी-धुआअी—खेत जोतना तथा
जोती हुआ मिट्टीको बराबर
बोनेलायक बनाना।

मँडनी-दबनी—फसलको काटनेके बाद
अुसको बैलोंमें तथा आदमियोंसे
खुदवाने, कुचलवानेका काम
जिससे भुट्टों और बालियोंसे दाने
अलग हो जाअें।

खुले जीसे—पूरा मन लगाकर।

अेक-दूसरेका हाथ बँटाना—आपसमें
मदद करना।

जग्य—यज्ञ (हवन, पूजा आदि)।

ज्योनार—जाति-भोज या मामूहिक
भोज।

पसगाँव—पाग-पड़ौसका गाँव, आस-
पासका गाँव।

टेहला—विवाहकी रीति या रम्म।

भुगता देना—निबटा देना, पूरा कर
देना।

गाँव-बिरादरीकी—अुस गाँवमें रहने-
वालोंकी तथा जातिवालोंकी।

कलाबा—लाल-पीले सूतके धागोंका
लच्छा जिसे विवाह आदि शुभ
अवसरोंपर हाथ, घड़ों तथा और-
और वस्तुओंपर बाँधते है।

तीयल—स्त्रियोंके कपड़ोंकी जोड़
(साड़ी, चोली तथा घाघरा।)

पारिवारिक साझेदारी—(यहाँ) कअी
परिवारोंके, कुटुम्बोंके लोगोंका
मिल-जुलकर किसी कामको बाँट
लेना।

चटपट—फौरन, शीघ्र।

सहकारिता—सहयोग, आपसमें अेक-
दूसरेकी मदद।

भित्ति—आधार, सहारा।

बाहरी चोला—विदेशी रंग-ढंग (कार्य
करनेकी तथा विचार करनेकी
पद्धति।)

तथा-वार्ता—किसी-कहानियाँ।

पूर्वजोंके चरित—असके बाप-दादों द्वारा सम्पन्न अच्छे और महान कार्य।

आखें...आया है—वह पढ़ नहीं सकता लेकिन सुन-सुनकर उसने पूर्वजों-का ज्ञान अकट्टा किया है और उसे कहावतोंमें तथा देहाती गीतोंमें सुरक्षित रखा है।

पृष्ठ—७०

लोकोक्तियाँ—जनता द्वारा कही जाने-वाली तथा उनमें प्रचलित अंगी अुक्तियाँ (कहावते), जिनके पीछे अुमके पूर्वजोंका सदियों पुराना अनुभव छिपा है।

लाखों ग्राम-गीत... किया जा सकता है—असंख्य ग्राम गीतोंमें, कहानियोंमें तथा कहावतोंमें अनेक प्रकारकी भावनाओंको प्रकट करनेवाले अितने अधिक शब्द हैं कि अुन्हें यदि भाषामें प्रयुक्त किया जाये तो भाषा समृद्ध हो जायेगी। (अमित-अमर्यादित, अत्यधिक।)

जाड़ों—सर्दी, शीतकाल।

चिलकती धूप—चमचमाती हुआ धूप।

फगुवा बयार—वसन्त ऋतुमें बहने-वाली मादक सुगन्धित हवा।

राम-राम लगता है—मस्ती छा जाती है, मन झूम अुठता है और नाचने तथा गानेके लिये किमानका प्रत्येक अंग तत्पर हो जाता है।

जीवनकी नसोंकी... अुड़ेल देती है—मनके अन्दर अुमड़नेवाला अुत्साह तथा आनन्द नृत्यों और नाचने-वालोंमें अद्भुत गति भर देता है, तीव्रता ला देता है।

लोक नृत्य और लोक संगीत—सर्व-साधारण जनताके नाच तथा गाने।

लय—धुन, गीत-मंगलसे शुभ कामना-ओंग भरे हुए गीतोंमें।

चिताना—जीवित करना, प्रेरणा देना, अुत्साहित करना।

अमृत—वह वस्तु जिसके पीनेसे जीव अमर हो जाता है, और मरा हुआ जी अुठता है। पुराणोंके अनुसार समुद्रमन्थनसे अमृत निकला था और देवता अुमे ले भागे थे। (यहाँ) फिरसे जीवन प्रदान करने वाली चीज।

हलधर मनोवृत्ति—कृषि, खेती, किसानोंकी या अुनके हितोंका ध्यान रखनेकी मनोवृत्ति।

टोटा—अभाव।

कहते हैं... अंगुला था—पुराणोंकी कथा है कि अंक बार जब मिथिलामे अकाल पड़ा तब स्वयं महाराजा जनकने हल चलाया था और अम समय अन्हें खेतमें सोनेके अंक षडेमें सीता मिली थी (वेदोंमे सीताका अर्थ है खेतकी फसल तथा कृषिकी अधिष्ठात्री देवी) और तब फमल भी खूब हुआ थी।

जनपदोंकी लक्ष्मी—देहाती अलाकोंका वैभव, अर्थात् कृषि, फसल अत्यादि।

कल्याणका अद्घाटन—कल्याण कार्यका प्रारम्भ।

मुहूर्त—शुभ अवसर, मगल षड़ी।

कायाकल्प—आमूल परिवर्तन।

अमला—कर्मचारी, अफसर।

कमर कसना—त्त्पर हो जाना, तैयार हो जाना।

सेहा हल कराल होकर गहरी फाड़ करने लगेंगे—जब हल धरतीके साथ समतल चलता है तो असे 'सेहा' कहते हैं। वही जब कुछ अुठा हुआ या तिरछा चलता है तो असे 'कराल' कहते हैं। कराल हल भूमिको गहरी फाड़ता है।

पृष्ठ—७१

पंजर—रक्त-मौमहीन ढाँचा।

लेवड़ा—पुट, स्तर, मतह।

टाट—सिर, खोपड़ी, कपाल।

साँड़—गायका वह बछड़ा जो बैल नहीं बनाया गया हो।

मँडराने लगना—झूमने लगना, मस्त होकर घूमना।

मूर्छा-अुदासी—किसानोंकी अगतिकता तथा निरुत्साह।

नाम-निशान न रहना—बिलकुल मिट जाना, नष्ट हो जाना, गायब हो जाना।

सकल्पवान—दृढ़ प्रतिज्ञ, कार्यखतम करनेके मजबूत निश्चयवाला।

गाड़ी अटकना—काम रुकना, बाधा अुपस्थित होना।

भारी-भरकम पोथें—मोटे-ताजे ग्रन्थ, दुरूह ज्ञानसे भरी हुआ पुस्तकें, वैज्ञानिक ग्रन्थ।

जिसके धनसे वह सीचा गया है—किसानोंको ही लूटकर वह सम्पत्ति अिकट्ठी की गयी है जिससे बड़े-बड़े वैज्ञानिक पाले-पोसे जाते हैं और बड़ी-बड़ी विज्ञानशालाओं तथा प्रयोगशालाओं चलती हैं।

फगुनहटा—फाल्गुनमें बहनेवाली हवा,
वसन्त-पवन । (यहाँ) सुखद हित-
कर मनोवृत्ति ।

धरतीके साथ सती होना—धरतीके
प्रति श्रीमानदार रहकर अुसके
फलने-फूलनेकी कोशिशमें सब
कुछ न्यौछावर कर देना, सब कुछ
लगा देना ।

धरती माता रूठ गयी है—भूमिसे
अुपज बहुत कम और अनिश्चित
होती है ।

धरतीमें पचता-भरता है—धरतीको
अुपजाअू बनानेके लिये कड़ी मेह-
नत करता है ।

पड़ती जंगल—जंगलकी वह भूमि जो
बहुत अरसेमें जोती न जानेके कारण
कृषिके योग्य नहीं रह गयी है ।

बंजर—कँकरीली तथा अूसर जमीन ।

अक्काबाजी—दरिद्रताकी देवी ।

पसीजना—दर्याद्रि होना, अुपजाअू
बनना ।

सुग्गा-पाठ—तोता-रटंत, किसी बातको
व्यर्थ ही बार-बार दुहराना ।

धरती जोतमें लाना—धरतीपर खेती
करना ।

पृष्ठ—७२

डचीड़ा—डेढ़ गुना ।

जमीनको तोड़कर—जमीनको खेतीके
योग्य बनाकर ।

पूँजा—पौधेकी जड़ोंका गुच्छा ।

बिआस—(सं. विकास) गेहूँके बीजके
दानेमेंसे बहुतसे अंकुर निकलकर
बढ़ते हैं, उनमेंसे हरेक 'नरिआ'
(गेहूँका बड़ा पौधा जिमका मेरू-
दण्ड विकसित हो जाता है) बन-
कर अूपर आता है और बढ़ता
है । सब मिलकर पूँजेका बिआस
कहलाता है ।

रीरिक—हाँलैंडके अेक कृषि पंडित तथा
सज्जन जो लेखकमें मिले थे ।

गोधन—गाय-बैल ।

चरावर धरती—वह भूमि, जिसपर
खूब घास हो ।

पोहा—पशु, मवेशी, चौपाया ।

छीजना—कम होना, घटना ।

गोरस—गायका दूध ।

लक्ष्मी—सम्पत्ति, वैभव ।

कुशल—क्षेम ।

बिजली भरना—तीव्रता लाना, तेज
गति प्रदान करना ।

७. घुमक्कड़ी

पृष्ठ—७७

घुमक्कड़ी—देश-विदेश घूमना, पर्यटन।

घुमक्कड़—पर्यटक, घूमनेवाला।

धारण करना—टिकाये रखना, पालन-पोषण करना।

प्राकृतिक आदिम मनुष्य—सृष्टिके सबसे पहलेके वे मनुष्य जिन्हें जीवित रहनेके लिये आजकी तरह ज्ञान-विज्ञानका महारा न था सिर्फ अपने शरीरकी शक्ति और विकसित मस्तिष्कके सहारे ही अन्हें अपने दुश्मनोंसे जूझना पड़ता था और खानेका सामान जुटाना पड़ता था।

बागवानी—फल-फूल, साग-तरकारी आदिके बगीचे लगानेका अद्योग।

घर-द्वार—रहनेके लिये मकानादि।

श्वेत हिम मुकुटित शिखर—पर्वतकी ऊँची-ऊँची चोटियाँ जो सफेद-स्वच्छ बर्फसे आच्छादित हों।

पृष्ठ—७८

बूँद—रस, आनन्द।

यात्रा-पाठक—यात्राओंके वर्णन पढ़नेवाले।

आलांक—प्रकाश, (यहाँ) जानकारी।

सर्वश्रेष्ठ विभूति—सबसे महान व्यक्ति।

घुमक्कड़ोंके काफिले—यूरोप तथा अशियाका इतिहास बतलाता है कि समृद्ध देशोंपर बार-बार खूंखार बर्बर जातियोंके हमले होते रहे। ये खूंखार जातियाँ भटकनेवाली टोलियोंके समूह हुआ करती थीं तथा अपने पेटकी आगमें प्रेरित होकर समृद्ध देशोंपर टूट पड़ती थी। शक, हण, तातार, ये सब अमे ही घुमक्कड़ काफिलोंके अदाहरण हैं।

शक—एक प्राचीन घुमक्कड़ जाति जो २२०० वर्ष पहले मध्य अशिया (शक द्वीप) से भारतमें आयी थी और जिसने मथुरा, मालवा गुजरात तथा महाराष्ट्रपर अधिकार कर लिया था। लगभग दो सौ वर्षोंतक पश्चिमोत्तर भारतमें इनका बड़ा प्रभाव रहा।

हण—एक मंगोल घुमक्कड़ जाति जिसके धावोंमें सारा अशिया तथा यूरोप गन्वस्त हो गया था। विशाल रोम साम्राज्यकी जड़ें इसीने हिला दी थीं। आसानी पाँचवीं शताब्दीमें यह पूरे पश्चिमोत्तर भारतपर (अफगानि-

स्तानसे लेकर मालवा, सौराष्ट्र तक) छा गयी थी।

दिग्दर्शक—दिशा-सूचक यन्त्र, कुतुब-नुमा। कम्पास।

कोलम्बस—स्पेनका एक घुमक्कड़, जिसे समुद्रके जरिअे भारतका रास्ता खोज निकालनेकी धुन थी और जो भारतका रास्ता खोजते-खोजते अमरीकी महाद्वीपपर जा पहुँचा था।

वास्को द गामा—पुर्तगालका एक घुमक्कड़, जिसने समुद्रके रास्ते दक्षिण अफ्रीकाके जरिअे यूरोपसे भारत पहुँचनेका रास्ता ढूँढ़ निकाला था।

कूप मंडूक—कुअें तक ही जिनकी दुनिया सीमित है अैसे मेंढकोंकी-सी मनोवृत्तिवाले लोग, जो अपने अिलाके या समाजके बाहर जाकर बिलकुल नहीं सोचना चाहते, जो बदलती हुई दुनियासे बिलकुल बेखबर पड़े रहना चाहते हैं।

घुमक्कड़ धर्म—पर्यटन, करने, देश-विदेशोंमें घूमकर, ज्ञानार्जन करने का धर्म।

पृष्ठ—७९

नामी—प्रसिद्ध।

यवद्वीप—जावा जो भारतका प्राचीनतम उपनिवेश है। सबसे प्राचीन (पाँच लाख साल पहलेके) मानवकी खांपड़ी यही मिली थी। पहले यहाँ शैव धर्मकी प्रधानता थी, बादमें बौद्ध धर्म फैल और आज वहाँ अिस्लामका जोर है।

स्याम—थाइलैंड।

कम्बोज—आधुनिक कम्बोडिया है।

यह भी प्राचीन भारतीय उपनिवेश था। यहाँ आज हिन्दू धर्मपर आधारित बौद्ध धर्म प्रचलित है।

चम्पा—हिन्द चीनमें आधुनिक अनाम के दक्षिणमें सीम्पस प्रायद्वीपके पूर्वी किनारेपर पहाड़ और तटके बीचमें बसा हुआ भू-भाग जो अीस्वी मनके आरम्भमें भारतीय उपनिवेश बन गया था। पहले वहाँ शैव धर्मका जोर था, बादमें बौद्ध धर्म बढ़ा।

वृहत्तर भारत—भारत तथा वे अिलाके जहाँ भारतीय संस्कृति फैली।

मत्यानाश—(मं. मत्ता + नाश) सर्व-नाश, एकदम मिट जाना, पूरी बरबादी।

चारों फल—धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष।

दुराया—दूर किया, छोड़ा।

पृष्ठ—८०

ठिकाना—जगह, स्थान ।

अरे-गैरे—(यहाँ) वे विदेशी जो सम्यता, संस्कृति तथा नीतिकी दृष्टिसे हीन थे ।

चार लात लगाना—अपमान करना, दबाना ।

लौकिक—साधारण, अस जगतकी ।

प्रमाण—जिससे कोई चीज सिद्ध हो सके ; सबूत ।

सहृदयता—दूसरोंके भावोंको समझनेकी वृत्ति । सम्वेदना, करुणा, दया तथा अुदारताका सम्मिलित भाव ।

घुमक्कड़राज—पर्यटकोंमें सबसे श्रेष्ठ, सबसे अधिक प्रसिद्ध ।

अपने ही—सिर्फ, स्वयं ही ।

मकडूनिया—मेसोडोनिया ।

बाली—जावाके पूर्वमें एक छोटा द्वीप जहाँ आज भी एक प्रकारका हिंदू धर्म प्रचलित है तथा जहाँ बुद्धको शिषका छोटा भाभी माना जाता है ।

बृहत्तर भारतका निर्माण घुमक्कड़ोंकी चरण-धूलिमें नहीं किया ?—ये बौद्ध भिक्षुक तथा धर्म-प्रचारक जहाँ-जहाँ भी गये, वहाँ वे भारतीय संस्कृतिको तथा अुस

संस्कृतिके त्याग, तपस्या, धर्म-चरण तथा कष्ट-सहनेके गुणोंको भी ले गये । अुन प्रदेशोंकी जनता अुस संस्कृतिमें बहुत प्रभावित हुअी ।

जम्मू वृक्षकी शाखा लेकर—बौद्ध मतावलम्बी जामुनके पेड़को बड़ा पवित्र मानते हैं । बौद्ध भिक्षुक अुस वृक्षकी शाखा लेकर दूर-दूर धर्म-प्रचारके लिये निकल जाते थे । जामुनके वृक्षकी छाल, पत्ते तथा फल सब बड़े अुपयोगी तथा हितकारक होते हैं ।

प्रखर—तेज, श्रेष्ठ ।

जौहर—अुच्चतम, अुत्कर्ष, गुणोंका विकास, करतब, अुनूठा काम ।

विचरना—आरामसे घूमना, पर्यटन करना ।

पृष्ठ—८१

दोनों हाथोंसे स्वीकार करना—पूर्ण-रूपेण अपनाता ।

करतल भिक्षा तरतल वास—हथेलीमें भिक्षा लेना तथा वृक्षके नीचे रहना-सोना ।

दिगम्बर—(दिक्+अम्बर) दिशाओं ही वस्त्र होना अर्थात् शरीरपर कोई भी वस्त्र न धारण करना ।

निर्द्वन्द्व विचरण—बिना किसी सोच-विचार, चिन्ता-फिकरके पर्यटन करना।

आजीवन—जिन्दगीभर।

दम्भी—दम्भ युक्त, झूठे अभिमानसे भरा हुआ, पाखंडी।

सृष्टिकर्ता श्रीश्वरसे अनकारी महापुरुष—ऐसे महापुरुष जो यह नहीं मानते थे कि सृष्टिको उत्पन्न करनेवाला कोई श्रीश्वर है।

पृष्ठ—८२

ब्रह्मस्वरूप—(ब्रह्म—निरंजन निराकार परमात्मा, विश्वसत्ता, परमेश्वर) मैं ब्रह्मको जानता हूँ और मैं ब्रह्मको नहीं जानता, अतः दोनों प्रकारकी वृत्तियोंसे जो परे है और जो अद्वैत भावसे—पूर्णरूपसे ब्रह्ममें स्थित है अर्थात् जो अपनेमें तथा ब्रह्ममें कोई अन्तर नहीं मानता, वह ब्रह्मस्वरूप है—स्वयं ही ब्रह्मका रूप है।

भारतके चारों कोनोंकी—पूरे भारतकी।
खाक छानते फिरना—भटकना घूमना लगातार पर्यटन करना।
तरुणा—जवानी, युवावस्था ।

शिवलोक सिधार गये—मर गये, मरकर स्वर्ग चले गये। (शिवजी मृत्युके-विनाशके देवता माने जाते हैं, असलिये कल्पना है कि लोग मरनेपर उनके लोकमें जाते हैं और पुण्यात्मा तथा शंकर भक्त तो जाते ही हैं।)

भाष्य—सूत्रों, ग्रन्थोंकी विस्तृत व्याख्या या टीका।

कूपमंडूकता—संकीर्णता, छुआछूत, धर्म-अधर्मका बहुत अधिक विचार।

बोलबाला होना—धूम मचना, सर्वत्र प्रसार होना।

पैर तोड़कर बैठ जाना—जम जाना, स्थायी हो जाना।

अगुआ—नेता।

पृष्ठ—८३

माओका लाल—अपनी माँका सच्चा बेटा, असा काम करनेवाला जिससे उसकी तारीफ हो—प्रशंसा हो।
वीर, साहसी, अुदार या करुणाशील व्यक्तिके लिये प्रयुक्त होता है।

जब-तब—समय-समयपर।

कर्म-पथकी ओर संकेत करना—कर्तव्यकी राह दिखाना, जो अुचित कार्य है अुमे करनेको कहना।

गुरु नानक—पंजाबके अंक सुप्रसिद्ध
महात्मा जो सिख संप्रदायके आदि
गुरु थे। जन्म—सम्बत १५२६।

धावा मारना—चढ़ाओ करना, (यहाँ)
जाना।

योग—मन तथा शरीरको संयमितकर
किसी खास अद्देश्यके लिये साधना
करना।

सिद्धिदाहिनी—सिद्धि-योगसे प्राप्तफल,
सफलता, शक्ति विशेष। सिद्धियाँ
प्रदान करनेवाली।

नम्बर—(अं.) क्रम, अंक।

शास्त्रार्थ—शास्त्रोंपर वाद-विवाद
करना, तत्त्वज्ञान सम्बन्धी चर्चा
करना, वैज्ञानिक बहस करना।

मुक्त बुद्धि—जिसकी बुद्धि किसी अंक
दायरेमें न बँधी हो, जो स्वतन्त्र
विचारक हो।

तर्क-प्रधान—जो बात तर्कसे सप्रमाण
सिद्ध हो जाये उसे माननेवाला,
जीवनमें तर्कों—कारणको महत्व
देनेवाला, तर्कको आधारभूत मानने-
वाला।

सेवन—व्यवहार।

थोथी—खोखली, व्यर्थकी।

स्थावर वृक्ष—अंक जगह स्थिर रहने-
वाला झाड़।

सम्प्रदाय—मत या पन्थ विशेष।

दुनियाके कोने-कोनेमें—दुनियामें हर
जगह।

अन्योन्याश्रय होना—अंक-दूसरेपर
आधारित होना, निर्भर होना।

दूषण—दोष, कमी।

भूषण—श्रेष्ठता, अच्छाओ गुण।

नकद धर्म—वह कार्य जो फौरन प्रति-
फल दे, जिसका नतीजा शीघ्र
मिल जाये।

जाति—समाज, राष्ट्र।

पृष्ठ—८४

प्रह्लादके माता पिता—पुराणोंमें कथा
है कि ओश्वर-विरोधी राक्षस
राजा हिरण्यकश्यपके पुत्र प्रह्लाद
ओश्वरके बहुत अधिक भक्त थे
और इसी कारण उनके पिता
हिरण्यकश्यपने अन्हे कभी तरहसे
दण्डित (पीड़ित) किया, जानसे भी
मरवाना चाहा और अन्तमें वह
स्वयं खड्ग लेकर अन्पर टूट पड़ा।
तब पास ही के खम्भेमेंसे नरसिंहके
विकराल रूपमें भगवान प्रकट हुअे
और अन्हींने हिरण्यकश्यपका पेट
चौर डाला।

हित-बान्धव—दोस्त, रिश्तेदार तथा
कुटुम्बीजन।

दिवान्ध—जिनको दिनमें भी नहीं देखता है, जो स्पष्ट दिखनेवाले सत्यको भी नहीं समझते, जो मूर्ख हैं।

अुलटा-सीधा-तर्क—अैमो दलीले जो देखनेमें तो ठीक लगती हैं पर जो वास्तवमें गलत होती है, भ्रम-पूर्ण बातें, गलत तथ्योंपर आधारित तर्क।

तजुर्वा—अनुभव।

रोकनेवाला पैदा नहीं हुआ—कांजी नहीं रोक सकता।

आँखोंमें धूल झांकना—झाँसा देना, फँसाना, भ्रममें डालकर अपना काम पूरा कर लेना।

कल्पना—विलाप करना, दुखकी याद करके बार-बार रोना, किसी व्यथाको दुहरा-दुहरा कर रोना।

निस्त्रैगुण्ये पथि विचरतः को विधिः को निषेधः—सत्त्व गुणमें अधिष्ठित व्यक्ति तमोगुण तथा रजोगुणसे तो अपर अुठ ही जाता है, लेकिन जब वह इस चीजको भी भूल जाता है कि मैं अच्छा कार्य कर रहा हूँ, मैं महात्मा हूँ या ऋषि हूँ, अर्थात् जब वह अपनी देहको भी बिसरा देता, परमात्म तत्त्वके

साथ अविच्छिन्न रूपसे संलग्न हो जाता है तब वह सत्त्व गुणसे भी अपर अुठा हुआ कहलाता है, तब अुसे 'निस्त्रैगुण्य' कहते हैं। अैसे निस्त्रैगुण्य व्यक्तिके लिये क्या कर्तव्य है और क्या अकर्तव्य है यह कोअी समस्या हो नहीं रहती। जो कुछ वह करता है वही ठीक है, कारण वह अपने लिये कुछ करता ही नहीं, करनेकी क्रियाका अुमें भान ही नहीं रहता। अुसकी अच्छाअी-बुराअीमें अुसके मन-मस्तिष्कका कोअी सरोकार नहीं रहता। कार्यमें वह साधन मात्र है, करने-करानेवाला कोअी दूसरा ही रहता है। स्वयं अीश्वर ही अुसे प्रेरणा देते हैं। लेकिन यहाँ अिसका मतलब है, जिस व्यक्तिके चिन्ता छोड़ दी, माया छोड़ दी, घर-बार छोड़ दिया और धूमनेका ही व्रत धारण कर लिया है, अुसके लिये न कोअी रुकावट है न कोअी कर्तव्याकर्तव्यकी बाधा।

मर कर दुनिया... फिर कहाँ—(मैर कर-धूम, यात्रा कर। गाफिल-गफलतमें पड़ा हुआ, भूला हुआ, भ्रम युक्त। गर-यदि।) अै भ्रममें

भूले हुअे ! तू अस दुनियाकी सैर कर, असको खूब देख, खूब असका आनन्द अठा। अेक बार तू मर गया तो फिर दुबारा जीवन नहीं मिलता। यदि जीवन भी मिल गया तो तरुणाञ्जी-जवानी कहाँ मिलेगी, फिर तू मनुष्यके शरीरमें आकर जवान बन सकेगा क्या ?

मनस्वी—जो मानसिक दृष्टिसे दृढ़ है। गहरा विचार करनेवाला तथा अपने विचारोंपर दृढ़ रहकर, विघ्न-बाधाओंकी परबाह न कर अनुपर अमल करनेवाला। कमर बाँधना—किसी कामके लिये पूरी तरहसे तैयार हो जाना, अुद्यत होना।

बेकरार होना—अत्यन्त आतुर होना।

८. बहसकी बात

पृष्ठ—८८

ठेठ—(यहाँ) अेकदम, बिलकुल।
दिक्-विपर्यय—दिशाओंका विरोध।
अेक अँग्रेज कवि—आँग्ल भाषाके प्रसिद्ध साम्राज्यवादी कवि, रुडयर्ड किप्लिंग जिनकी अेक काव्य-पंक्तिका आशय यह है —

“पूर्व-पूर्व है, पश्चिम-पश्चिम, और दोनोंका कभी मिलाप नहीं हो सकता।”

मध्य-केन्द्र—वह विषय जिसपर बात आरम्भ हुई थी।

बात गरमागरमी... बढ़ रही थी—दोनों तरफसे खूब कड़वी और तीखी बातें कही जा रही थी, अेक-दूसरे-को कोसा जा रहा था।

घरका प्राण-संकट—घरकी आफत, घरको लेकर की गयी मारामारी, झगड़ा।

चरम परिपाक—अन्तिम परिणाम, (यहाँ) मारपीट।

पृष्ठ—८९

बिना बातकी बातपर—यूँ ही, बिना कोअी कारण या खास अुद्देश्यसे।
स्वयं प्रकाशित—अैसी चीज जो सबको स्पष्ट दिखाअी देती हो।

प्रत्युत्तर—जवाबका जवाब। विरोध।

बितर्क—तर्कका तर्क। अेक तर्कके मुकाबलेमें अुपस्थित किया जाने-वाला दूसरा तर्क। गलत तर्क।
अनादि कालसे—अेकदम प्रारम्भसे।
सृष्टिके भी पहलेसे।

पूर्वोक्त—अुपर अुल्लेख किये गये।

विग्रह—संघर्ष, विरोध।

प्राण-प्रतिष्ठा—निर्जीव वस्तुमें जीवन-
की कल्पना करना, जैसे पत्थरकी
मूर्तिमें देवत्वकी कल्पना। (यहाँ)
स्थापना।

पृष्ठ—९०

सम्मुख विरोधी—अेकदम विरोध
करनेवाले।

अचिर जीवन—वह जीवन जो शावश्त
नहीं है।

महाभारत—वह लोमहर्षक युद्ध जो
प्राचीन समयमें कौरवों और
पांडवोंकी अठारह अक्षौहिणी
सेनाओंमें दिल्लीके पास कुरुक्षेत्रमें
१८ दिनोंतक चलता रहा था।
(यहाँ) जीवनका संघर्ष।

अक्षौहिणी—सेनाकी अेक नियमित
संख्या जिसमें १,०९,३५० पैदल,
६५,६१० घोड़े, २१,८७० रथ
और २१,८७० हाथी रहते थे।

अनाहार—भूखा रहना।

काल कोठरी—जेलमें अेक बहुत तंग
तथा अँधेरी कोठरी, जिसमें
खतरनाक तथा घातक कैदीको
सबसे अलग रखा जाता है।

राजनैतिक कैदियोंको भी सताने
तथा पथभ्रष्ट करनेके लिये अैसी
कोठरियोंमें अलग-अलग बन्द कर
दिया जाता है। यहाँ बन्द कैदीको
कोठरीमें पेशाब, पाखाना, सोना
आदि सब करना पड़ता है अुसे
खाना भी वहीं देते हैं और २४
घंटे बन्द रखते हैं।

तर्क-संगत—तर्क-युक्त, कारणोंसे
समर्थित।

प्रसंग—सन्दर्भ।

शिष्ट—सभ्य, संस्कारी आदि।

अस्पृश्य—अछूत (यहाँ) जिसका
कहना अुचित नहीं है।

पृष्ठ—९१

अक्कीस-अक्कीस बार अिसे निर्वंश
ही क्यों न कर दे—परशुराम-
जीने पृथ्वीपरसे क्षत्रियोंका
अक्कीस बार नाश किया था—
अैसी कथा है। (यहाँ) बार-बार
जवाब देनेपर भी नअे-नअे तर्क
निकलते ही जाते हैं।

वैश्य वर्ण—चारवर्णोंमें क्रमके हिसाबसे
तीसरा वर्ण जिसका काम कृषि,
गो-रक्षा तथा वाणिज्य है।
(यहाँ) साहित्यमें तथा काव्यमें
जब कोअी बात कही जाती है

तो कहनेका ढंग कोमल मार्मिक तथा भाव-पूर्ण रहता है, तर्ककी कर्कशता असमं नहीं रहती।

मुँहकी खाना-हार जाना, परास्त हो जाना।

जीभ रामका नाम लेनेमें ही हार सकती है—मनुष्यका यह स्वभाव है कि वह दूसरोंकी निन्दा करनेसे, फिजूलका वाद विवाद, चर्चा, बहस-मुबाहसा करनेसे कभी नहीं थकता, लेकिन वही आदमी नितान्त शान्तिसे बहुत देरतक रामका नाम नहीं ले सकता।

पृष्ठ—९२

हेतु—अदृश्य।

कोरी—सिर्फ।

अनपेक्षित—जिस चीजकी अपेक्षा या आशा नहीं है।

स्वार्थपरता—स्वार्थहीका ध्यान रखनेका भाव।

बहु विचित्र संसार—ऐसा संसार जिसमें तरह-तरहके आकर्षण हैं और तरह-तरहके स्वार्थ।

प्रजाका चीत्कार—प्रजा द्वारा अपने कष्टों तथा अत्याचारोंके खिलाफ अुठाओ हुओ आवाज, आन्दोलन, संघर्ष, क्रान्तियाँ।

राजाकी काल कोठरी—शासनका भीषण दमन, अतंक, अत्याचार।

पृष्ठ—९३

कर्म मुखरित संसार—ऐसा संसार जिसमें सब काम करने रहते हैं, अनेकों प्रकारकी घटनाएँ होती रहती हैं।

गीघ्र—गिद्ध, एक मांमाहारी पक्षी जिसकी आँखें बड़ी तेज होती हैं, जो बहुत अँचाओपर उड़ने हुओ भी नीचेका अपना भक्षण देख लेता है।

घ्राण शक्ति—सूँघनेकी शक्ति।

अपव्यय—फिजूलखर्ची, वह काम जिसका कांओ अपुयोग न हो।

जीभ जलाकर—मुँहने बोलकर। खूब बोलकर।

९. गेहूँ बनाम गुलाब

पृष्ठ—९९

मानस—मन, आत्मा।

पुष्ट—ताकतवर, मुदृढ़।

क्वध्रा—भूख।

पिपासा—प्यास।

भूखका काफला गेहूँपर पड़—मनुष्य अपनी भूख मिटानेके लिये गेहूँ खाते हैं।

शरीरकी आवश्यकताने. . दबा रखा है—भौतिकताके नामसे अध्यात्मको आज कोसी नहीं पूछ रहा है, सांस्कृतिक विकासकी और नैतिकताकी ओर ध्यान नहीं दिया जा रहा है।

पृष्ठ—१००

तरजीह देना—किसी चीजमें अच्छा समझना।

भूख खाँव-खाँव कर रही थी—भूख बहुत अधिक सता रही थी, मन भूखके मारे व्याकुल हो रहा था।

कामिनियाँ—पत्नियाँ, प्रेमिकाएँ।

तुरही—अक प्रकारका बाजा जो फूँककर बजाया जाता है, यह आगेसे चौड़ा और मुखके पासमें पतला होता है।

अपनी नावमें. . जा रहा था—पानीमें पतवारोंसे तेजीसे नाव खेती जा रही थी।

तराने छोड़े—गीत गाये।

काला घुप्प—खूब अँधेरेसे युक्त।

अच्छ्वसित होना—प्रसन्नतासे नाच उठना, खूब आनन्दित होना।

पेट-पूजाकी समिधा—खामे-पीनेकी चीजें, जीवनकी आवश्यकताएँ।

आनन्द विभोर होना—आनन्दमें झूम उठना, प्रमन्नतामें सराबोर हो जाना।

शनैः शनैः—धीरे-धीरे।

कृपिका आरोप करके—(यहाँ) अनि बादलोंसे जो पानी बरसेगा, उससे मेरी खेती लहलहायेगी, अनाज उत्पन्न होगा, आदि कल्पना करके।

अनुके मौन्दर्य-बोधने—बादलोंकी अमृद्ध घुमड़, गर्जन-तर्जन तथा अनुमें चमकनेवाली बिजलीके मौन्दर्य-जानने।

हृदयको भी. . रंग दिया—हृदयको प्रमन्न बना दिया, मस्त बना दिया।

पशुओंकी तरह अमुका पेट और मानस समानान्तर रेखामें नहीं है—पशु चार पैरोंसे चलते हैं अमिलिअे अनुका पेट और मिर अक रेखामें, अक मतहमें रहते है। अर्थात् पशुकी विचार-शक्ति अपनी भूख, प्यासमें बँधी रहती है; अनुके अपर नहीं अठ सकनी। पशुओंकी बुद्धिका विकास नही होता पर मनुष्योंकी स्थिति अैसी नही है।

मानसने पेटपर. . घोषणाकी—(पेटपर विजय, भूखपर विजय, सामारिक विषय भाग, वैभव तथा स्वार्थपर

विजय) संस्कारक्षम मन, अध्यात्म, जड़ भौतिकतासे श्रेष्ठ है।

पृष्ठ—१०१

मानव जीवनमें गेहूँ गौर गुलाबका सन्तुलन रहा—श्रमद्वारा मनुष्यको जीवनोपयोगी आवश्यक वस्तुओंकी यथेष्ट प्राप्ति होती रही और साथ ही अतना समय भी बचता रहा, कि जिसमें उसके मनकी सम्मवेदना, संस्कारिता तथा ज्ञान-वैभव विकसित होता रहा। (सन्तुलन—दो वस्तुओंका सामंजस्य।)

कमाता हुआ गाता था—और गाता हुआ हुआ कमाता था—जब वह अपनी दैनन्दिन आवश्यकताओंके लिये परिश्रम करता था, तब भी वह प्रसन्नचित्त रहता था, आनन्दसे परिपूर्ण था। काममें उसे रस मिलता था। आनन्द और श्रम परस्पर विरोधी न थे।

रातमें रास रचाता था—काम खतम हो जानेके बाद रातको नाच-गानेमें मस्त रहता था।

पृथ्वी.....पर हैं—जीवनोपयोगी आवश्यकताओंकी प्राप्तिके लिये जब वह मेहनत करता था, तब

अुसकी कल्पनाओं सुन्दर सपने देखा करती थीं और जब वह सुन्दर कल्पनाओंको काव्यका रूप दिया करता था अुस समय वह जीवन-संघर्षको नहीं भूलता था।

गलीज—बीभत्सता।

अब अुसके साँवले...यदुवंशियोंका सर्वनाश—श्रीकृष्णका रंग साँवला-श्यामल है, अुनके हाथमें शंख है जो युद्धमें आव्हानका द्योतक है और चक्र है जो घातक अनिवार्य शस्त्रोंका द्योतक है। महाभारतका युद्ध कौरवोंकी अत्यन्त स्वार्थी तथा अन्यायी वृत्तिके कारण हुआ था। श्रीकृष्णका यदुवंश अपने वैभव और विलासमें अतना अुन्मत्त हो गया था कि अुसने अेक निरीह महर्षिका अपमान किया। अुसी महर्षिके श्राप द्वारा लेकिन वस्तुतः अपनी अुन्मत्तताके ही कारण आपसमें लड़-भिड़कर अन्तमें अुन सबका नाश हो गया। लेखकके अनुसार मनुष्योंमें भगवान कृष्णको शंख और चक्र असिलिये धारण करने पड़े कि समाजमें अेक तरफ बेहद विलासिताका बोलबाला था और दूसरी

तरफ मेहनत करनेवाले तथा
सज्जन व्यक्ति समाप्त होते जा
रहे थे ।

गृहयुद्ध—आपसकी लड़ाई ।

सिर धुनना—पश्चात्ताप करना, शोक
करना ।

पृष्ठ—१०२

सिर खपाना—गहराईसे सोच विचार
करना ।

सोलह आने—पूरी तरहसे । सम्पूर्ण
रूपसे ।

जताना—बताना ।

चिर-बुभुक्षा—ऐसी भूख जिसकी
शान्ति न होती हो, तृष्णा एवं
लालसाओं ।

कुड़ाई—खेतकी मिट्टीको कुछ गहराई
तक खोदकर अलुट देना, गोड़ना ।

आकाशकी दुहाई—आकाशके अणु
तत्वोंका शोषण जिनसे फसलें
अुत्पन्न होती हैं ।

पृष्ठ—१०३

अटोपिया—(अँग्रेजी शब्द) ऐसा
काल्पनिक आदर्श जिसका प्रत्यक्ष
व्यवहारमें आना सम्भव नहीं है ।

संहार-कांड—विनाशका कार्य ।

हस्तामलकवत—हाथमें रखे हुए
आँवलेकी तरह स्पष्ट दिशाई
देनेवाला । सहज साध्य ।

ब्रह्मांड—समस्त विश्व ।

अफरात—अधिकता, विपुलता, प्रचु-
रता ।

सोनेका हिन्दुस्तान—ऐसा भारत
जिसमें खूब सुख-वैभव और धन-
दौलत थी ।

सोनेकी नगरी... करती थी—लंकामें
मकानादि सोनेके थे और मनुष्यों
तथा देवोंको सतानेवाले, लूटने-
वाले राक्षसोंकी वह नगरी थी,
महाप्रतापी रावण अुसका राजा
था ।

अभक्ष्य—जो न खाना चाहिये ।

अकार्य शरीर—असाधारण, अनोखे
शरीर ।

दस सिर थे—रावणके दस सिर थे ।

छह महीने सोती थी—रावणका भाई
कुम्भकर्ण खूब खाकर छह महीने
सोता था, और सिर्फ़ एक दिन
जागता था ।

झिझक—हिचकिचाहट ।

पृष्ठ—१०४

अिन्द्रियोंका संयमन और वृत्तियोंका
अुन्नयन—भावनाओं तथा विचारों-
का अुन्नत बनाना ।

रम्भा, मेनका, अुर्वशी—स्वर्गकी रूप-
गर्विता अप्सराओं, जिन्होंने अपने

मादक सौन्दर्यके प्रदर्शने बड़े-बड़े
ऋषि-मुनियोंको झपट किया था।

स्खलित होना—अेकाअेक गिरना,
पतित होना।

हम तपस्वी—यहाँ अिशारा उन कॉग्रेसी
नेताओंकी ओर है जो गाँधीजीके
नामके आदर्शका ढिंढोरा तो पीटते
हैं, पर स्वयं ही झपट हैं।

पृष्ठ—१०५

जो आर्थिक रूपमें रक्त पीती रही है —
भौतिकता, मिर्फ भासारिक भोग,
अैश्वर्यकी ही ओर ध्यान देनेकी
वृत्ति पूँजीवादके रूपमें मजदूरोंका,
किसानोंका तथा ग्राहकोंका शोषण
करती है, उनके श्रमसे अुत्पन्न
सम्पत्तिको अपने लिअे बटोरकर,
अुनको अुनके मुखी तथा स्वस्थ
जीवनसे वंचित करती है।

राजनैतिक जीवनमें रक्तकी धारा
बहाती है—यही पूँजीवाद जब दूसरे
देशोंको लूटने जाता है तो साम्राज्य-
वादके रूपमें अत्यन्त क्रूरतासे
अुनपर शासन करता है। यदि वे
देश आजादी माँगे, अुसके लिअे
आन्दोलन करें तो अुन्हें बेरहमीमें
फौजोंके जरिअे कुचला जाता है।
पूँजीवाद अपने देशमें, तथा

साम्राज्यवाद अपने अधीनस्थ
अिलाकोंमें दण्ड-शक्ति—दमन अेवं
आतंकके बलपर शासन करता है।

पिंड छूट जाना—छुटकारा हो जाना,
मुक्ति मिल जाना।

फूल मुँघनी—तितली।

अुछाह-अुत्साह।

गालोंमें गुलाब खिल रहे—तरुणाओ
अेवं निरोगिताके कारण गालोंपर
खूनकी लाली दौड़ रही है।

आँखोंमें गुलाब झाँक रहा—आँख मस्ती
तथा आनन्दसे सराबोर हैं।

पृष्ठ—१०६

शौके दोदार अगर है तो नजर
पँदाकर—अगर दर्शनकी अभिलाषा
है तो दृष्टि पँदाकर।

१०. मेरा बचपन

पृष्ठ—१११

परिपूर्ण—भरा हुआ।

अचिन्तनीय—जो विचार-शक्तिके परे
है, जिसकी कल्पना भी नहीं की
जा सकती।

कोअी ठीक नहीं कोअी ठिकाना—
नहीं, कुछ निश्चित नहीं।

निषिद्ध था—मनाही थी, प्रतिबन्ध
था।

प्रकृतिकी ओटमें—(यहाँ) आँगनके वृक्षों आदिके बीचमेंसे ।

प्रसारित—विस्तृत, बहुत दूर-दूर फैला हुआ ।

रूप—आकार-प्रकार, लम्बाई-चौड़ाई आदि ।

रस—स्वाद, अच्छाई, बुराई आदि ।

शब्द—आवाज जिसमें किसी वस्तुकी नरमाई, कड़ाई, ठोसपन आदि जाना जा सके ।

गन्ध—सुगन्ध या बदबू ।

जंगले—दीवारों तथा बगमदोंमें लगी हुआ लोहेके छड़ोंकी पक्तियाँ; चौखट जिसमें जाली लगी हुआ हो; छोटी बिड़की; वातायान ।

खड़िया—एक प्रकारकी सफेद मिट्टी या पत्थरकी जातिका एक बहुत बड़ा मुलायम पदार्थ जो जमीनके अन्दर शंख, घोंघे आदि जानवरोंकी हड्डियोंके चूनेसे आप ही आप जमकर बनता है । पाठ-शालाओंमें काले तख्तेपर इससे लिखा जाता है ।

लकीर—लाइन , रेखा ।

लीक—रेखाका निशान ।

दूर अब भी... है—औश्वरत्व जो दूर है, अभी स्पष्ट नहीं है, पकड़के

बाहर है । क्पितजके अुस पार क्या है, क्पितज क्या है, अब भी समझा नहीं है । वैसे ही यह विश्व, यह प्रकृति कुछ समझमें नहीं आ रही है, अब भी अेक पहेली है, समस्या है ।

शामन शिथिल होना—नियन्त्रण कम होना ।

पृष्ठ—११२

था कुछ विधिके मनमें—विधि-भगवान की कोअी अिच्छा थी, अैता होना निश्चित था ।

बात कहें दो मनकी—दोनोंको कह दें । समागम—शुभ आगमन ।

अवकाश—खाली समय, वह समय जब कि कोअी काम न हो ।

प्रथय मिलना—महारा मिलना ।

काम—धन्धोसे छुट्टी मिलना—काम खतम हो जाना, काम निपट जाना ।

अन्तःपुर—घरके अन्दरका वह भाग जहाँ स्त्रियाँ रहती हैं । (यहाँ) घरकी स्त्रियाँ ।

कानिस—घरके अपरका कुछ अुठा हुआ किनारा ।

निर्जन अवकाश—वह खाली समय जिसमें कोअी व्यक्ति भी न हो ।

प्राचीर—मकानके चारों ओरकी अँची-नीची दीवारें।

पृष्ठ—११३

पाडुवर्ण नीलिमा—तेज सूर्य-प्रकाशके कारण आकाशका नीला रंग पीलापन लिअे हुअे-सा दीख रहा था।

जीनेकी गुमटी—मकानके अपरी भाग-वाली सीढ़ी या कमरों आदिकी छत जो मकानके शेष भागसे अधिक अपर अुठी हुअी दिखाअी देती है।

तर्जनी—अँगूठेके पासकी अँगुली।

आँखें मिचकाकर—आँखोंको आधी बन्द करते हुअे खोलना, (यह क्रिया नटखटपनकी द्योतक है।)

राजप्रासाद—महल।

स्वाधीनताका झंडार—आजादीसे खेलने-कूदनेकी, घूमने आदिकी जगह।

चील-गिद्ध और वाज आदिकी जातिकी, पर अुमसे दुर्वल अेक पक्षी जो बहुत तेज अुड़ता है और बहुत अँचाअीपर प्रायः बिना पर हिलाअे चक्कर लगाया करता है। यह बहुत अपरसे अपने

शिकारको देखकर तेजीसे झपटकर ले जाता है।

चीलोंकी सूक्ष्म-तीक्ष्ण पुकार—चीलकी आवाज (चीं-चीं) बड़ी तीखी तथा बारीक रहती है, अिसीलिअे अुसे चितल (चिल्लाने-वाली) कहते है।

दिवानिद्रामें मग्न—दिनमें सोते हुअे, (यहाँ) मकान जो दोपहरीके कारण बाहरसे शान्त, हलचल-विहीन दिखाअी पड़ रहे थे।

बिसाती—बिस्तर बिछाकर अुसपर सौदा रखकर बेचनेवाला, छोटी चीजोंका दूकानदार।

पृष्ठ—११४

झिलमिली—अेक-दूसरेपर तिरछी लगी हुअी बहुत-सी आड़ी पटरियोंका ढाँचा जो किवाड़ों और खिड़कियों आदिमें जड़ा रहता है। अिसका व्यवहार बाहरसे आनेवाले प्रकाश, धूल आदिको रोकनेके लिअे होता है।

सोफा—अेक लम्बा कोच जिसपर गद्दी लगी रहती है तथा जिसपर अेकसे अधिक व्यक्ति बैठ सकते है।

प्रवेश-निषिद्ध—अन्दर आनेकी मनाही।

दाक्षिण्य—अुदारता ।

पानीके नलके सतयुगमें—जब नलोंमें
पानी बहुत आता था ।

अरमान—अिच्छा, लालसा ।

अिच्छाकी लगामको ढीला करना—
मनकी चाह पूरी कर लेना ।

अेक ओर मुक्ति पुलक शर
बरसाती—बिना रोक-टोकके जब
तक चाहूँ और जैसे चाहूँ अपनी
अिच्छा पूरी कर लेनेका आनन्द,
लेकिन पकड़े जानेपर दंडका डर
तथा और भी कड़े नियन्त्रणकी
सम्भावना—दोनों-तीनों बातें
मिलकर शरीरमें रोमांच उत्पन्न
करती रहतीं ।

सम्पर्क—सम्बन्ध ।

सहज—स्वाभाविक, सरल ।

अुपकरणोंकी भरमार होना—किसी
चीजको प्राप्त करनेके अनेक
साधन होना, बहुतसे रास्ते अुपलब्ध
होना ।

आनन्दके भोजमें . . . मुख्य है—अच्छी
तरहसे आनन्दके अुपभोगके लिये
बाहरी साधनोंकी अपेक्षा मनकी
स्वस्थता, लगन तथा अुत्कंठा
अधिक आवश्यक है ।

पृष्ठ—११५

पूँजी—(यहाँ) मनोरंजनके साधन ।
खेल ही मिट्टी हो जाता है—वह खेल-
का आनन्द नहीं अुठा सकता,
है, अुसका खेल बिगड़ जाता है ।

बरंडा—(अँ .) दालान ।

सीताफल—अेक प्रकारका फल जिसके
अन्दर काले बीज रहते हैं ।
बीजोंके आसपास मफेद गूदा
रहता है जो खानेमें मीठा तथा
रुचिकर होता है । यह फल वेस्ट
अिडीजका है ।

शरीफा—सीताफल ।

अन्तरधान हो गया—गायब हो गया,
(यहाँ) अुठाकर फेंक दिया गया ।
पर्वत—मृष्टि—पहाड़ बनानेका कार्य ।

पृष्ठ—११६

रूढ़ता—परम्परागत तौर-तरीके
(यहाँ) रूखाभी तथा नाराजी ।

प्रभेद—भेद, विभिन्नता, विरोधी ।

कमरेसे हटाअे गअे . . . बैठ गया—
हमारे मनका, खेल-कूदका अुत्साह
ठंडा पड़ गया, हमारे मन बुझ गअे,
हम निष्क्रिय अेवं निरुत्साहित
हो गअे ।

पृथ्वीका रस—पृथ्वीका सौन्दर्य ।

मटीले रंगकी—मिट्टीके रंगकी ।

मोटो-जिल्द-मोटी परत, सतह ।

गम्भीरतम तल-(पृथ्वीकी) सबसे अधिक गहराभी ।

माघोत्सव-वसन्तोत्सव, जो बंगालमें बड़े विशाल पैमानेपर तथा धूम-धाममें मनाया जाता है ।

ओत्सुक्यजनक-ओत्सुकता पैदा करने-वाला ।

पृष्ठ—११७

राजपुत्रकी पातालपुर यात्रा-पुराणों तथा बच्चोंकी परम्परागत कहानियोंमें किसी राजपुत्रकी पाताल-यात्राका और वहाँके सुख-वैभवका बड़ा रोचक वर्णन रहता है ।

गूढ़तम संवाद-गहरा छिपा हुआ रहस्य ।

अुदासीन रूपमें-चुपचाप, (यहाँ) कोभी ओत्माह नहीं दिखाता; अिसलिये वह रहस्य नहीं खुलता ।

पृष्ठ—११८

आश्चर्यसे दंग रहकर-अितना आश्चर्य हुआ कि स्तब्ध हो गया, मुँहमें बोल नहीं निकला ।

दास-राजाओंका शासन-काल-गुलाम कुतुबुद्दीन अँबकको मुहम्मद गजनवीने दिल्लीका शासक

नियुक्त किया था । सन १२०६ से १२९० के बीचमें १० गुलाम राजा हो गये, अनुक्रमे ४ ही ऐसे हुए जिन्होंने कुछ सालोंतक राज्य किया, बाकी तो आये और चले गये । राज्यमें अव्यवस्था ओर गड़बड़ चलती रहती थी तथा प्रजा त्रस्त रहा करती थी ।

भृत्योंका शासन-काल-कवि रवीन्द्रकी बाल्यावस्थाका वह समय जब कि वे नौकरोंकी देखरेख तथा नियन्त्रणमें थे ।

निषेध-मनाही, प्रतिबन्ध, रुकावट । प्रहार-मार ।

जो छोटे हैं वे मारते हैं और जो... खाते हैं-बच्चे ही बड़ोंको बहुत तंग करते हैं, उनके लालन-पालन में बड़ोंको बहुत तकलीफ ओठानी पड़ती है ।

शिष्ट-मम्य, सज्जन, भला ।

सतर्क-चीकन्ता, सावधान ।

कोसना-भला-बुरा कहना, गलतियाँ निकालना, दोष, देना, किसी गलती या नुकसानके लिये गाली देना ।

शिष्टोचित-अच्छा, भला ।

पानीके बड़े-बड़े... रोदनको...जाती थी-मारनेके बाद जब बच्चे रोते

थे तो अुनके मुँहका पानी रखनेके बर्तनोंमें जबरदस्ती डुबाकर रखा जाता था ताकि अुनके रोनेकी आवाज सुनाओ न दे।

पृष्ठ—११९

‘प्रहारकारी—मारनेवाला।

निर्मम—ममतारहित, दुष्ट।

संपूर्ण भार—(यहाँ) बच्चोंमें सम्बन्धित सब तरहके काम जैसे, अुन्हें खिलाना-पिलाना, नहलाना, बहलाना, शान्त रखना आदि।

खलल—बाधा, अड़चन, रुकावट।

११. गोसाओंजीकी कला

पृष्ठ—१२५

गोस्वामीजी—तुलसीदासजी।

प्रतिरूप—दूसरा रूप, साक्यात स्वरूप।

आवरण—(यहाँ) कपड़े, वेशभूषा।

व्यक्त होना—प्रकट होना, स्पष्ट होना।

अुनकी कविता... अुद्देश्य नहीं थी— तुलसीदासजीने ‘कविता लिखनी है’ सिर्फ अिस अुद्देश्यसे काव्य-रचना नहीं की थी।

मिल्टन—१८ वी सदीके अँग्रेजीके अेक प्रमुख कवि जिनके काव्य ‘पेरे-

डाअिज लॉस्ट’ और ‘पेरेडाअिज रिगेन्ड’ प्रसिद्ध है।

अुन्नतमना—जिनका हृदय विशाल, सरल अेव पवित्र है, महान है।

यशोलिप्ता—यशकी कामना, नाम कमानेकी लालसा।

‘राम-चरित’—राम चरित मानस, रामायण।

पर्यवेक्षण शक्ति—निरीक्षण शक्ति।

अन्तः प्रकृति—मानसिक वृत्तियाँ, अध्यात्म अेव तत्त्वज्ञानमें सम्बन्धित भावनाअे।

बाह्य प्रकृति—बाह्य जगत, भौतिक वस्तुअें।

पृष्ठ—१२६

समन्वय—मयोग, सामंजस्य।

पारगामी—किसी भी चीजको पूरी तरहसे समझ लेनेवाली।

अन्तस्तल—हृदय तक, पूर्ण गहराअीमें।

चरित्र-चित्रण — साहित्य-रचनाअेंमें प्रयुक्त पात्रोंके स्वभाव, कार्य आदि बातोंका वर्णन।

प्रकृति-चित्रण—प्रकृतिके मीन्दर्यका वर्णन।

धर्मशील—पवित्र आचरण जिनका स्वभाव है, धर्मात्मा।

शीलमय धर्म—वह धर्म जो नीतिको,
मर्यादाको तथा शिष्टाचारको
सर्वस्व मानता है।

फल-भर—फलोंसे लदे हुए।

नम्र—झुके हुए, विनयशील।

बिटप—वृक्ष।

निअराभि—झुक रहे हैं।

जिमि—जैसे।

नवहि—झुकता है, विनम्र होता है।

अति अगाध जल—खूब गहरा एवं
अथाह पानी।

मीन—मछली।

माहि—में।

जथा—बथा, जैसे।

धर्मशीलन्ह—धर्मशीलोंके, नीति-
वालोंके।

सुख-संजुत—सुख-युक्त, सुखमें।

सूक्ष्म अन्तर्दृष्टि—भावनाओंके

आलोड़न-विलोड़नको बारीकीसे
समझनेकी शक्ति, बुद्धि।

सर्वांगीण—हर पहलूसे, सांगोपांग,
पूरी तरह।

सिद्धहस्तता—कुशलता, सफलता।

पृष्ठ—१२७

दुर्जन—दुष्ट।

हितैषी—हितचिन्तक, भला चाहने-
वाला, मित्र।

मन्थरा—महाराज दशरथकी सबसे
छोटी रानी कैकेयीकी दासी
जिसने रानीके दिमागमें और्ध्वा
जगाकर रामके वनवासकी बात
जमा दी थी।

अभीष्ट—अच्छिन्त, अचित।

बाहुबलमे विजित—अपनी शक्ति द्वारा
जीता हुआ।

न्यायतः स्वायत्त—न्यायकी दृष्टिसे
अपना खुदका।

अंकाकी आभी हुई अमंग—सनक,
मनमें अंकदम अठी हुई लहर जो
पूर्व स्वभावसे मेल न खाती हो।

चौगानका खेल—जिसमें लकड़ीके
बल्लेसे गेंदको मारते हैं। यह
घोड़ेपर चढ़कर भी खेला जाता है।

जेठे—सबसे बड़े।

घोर भौतिकता—(भौतिकता—वह
सिद्धान्त या मत जो अिस विश्वको,
सृष्टिको ही सब कुछ मानता है,
देवी-देवता या अीश्वरपर जिसको
कोअी भरोसा नहीं रहता। यह
सिद्धान्त भौतिक सृष्टिको स्वयं
चालित मानता है।) यहाँ जड़-
भौतिकता; जिसमें सिर्फ अपना ही
स्वार्थ देखा जाता है और पशु
बलको ही सर्वस्व माना जाता है,

जिसमें समाजकी अन्नति, हित
आदिकी परवाह नहीं की जाती।
अर्जन-प्राप्त करना, हासिल करना।
विश्व-विश्रुत-दुनियाभरमें प्रसिद्ध,
अत्यन्त प्रसिद्ध।
गाढ़ा समय-विपत्ति-काल, अत्यन्त
संकटका काल।

पृष्ठ--१२८

जब धैर्य और शक्ति जवाब दे जाती
है-जब शक्ति टूट जाती है और
हिम्मत खतम हो जाती है।
काम सधना-काम पूरा होना, सफल
होना।
लक्ष्मणको शक्ति...प्रस्तुत की-लंकामें
रावणके महाप्रतापी पुत्र मेघनादके
घातक शक्ति-बाणसे मूर्छित
लक्ष्मणको जिलानेके लिये वैद्यने
सूर्योदयसे पहले हिमालयके द्रोणा-
चल पर्वतपरसे संजीवनी बूटी
लानेकी जब बात कही तो सिर्फ
हनुमान ही असंभव-से कामको
करनेमें समर्थ हो सके थे।
व्यवधानमें-पीछे, विस्मृतिमें।
असमंजस-ठीकसे समझमें न आना।
व्यक्तिक्रम-मर्यादाके बाहर जाना,
विपरीत काम करना।

रा. ग. सं. २-१४

रघुपति-रघुकुलके स्वामी,
रामचन्द्रजी।
पुण्य-पुंज-पुण्यवान, महात्मा।
पवन-कुमारा-पवनके पुत्र, (हनु-
मानजीको वायुका पुत्र माना
गया है।)
कृपा अगारा-दयाके भंडार, दयालु।
(यहाँ) रामचन्द्रजी।

पृष्ठ--१२९

निस्पृहता-लोभ या लालसा न होनेका
भाव।
धर्म-प्रवणता-धर्मके प्रति, कर्तव्यके
प्रति सजगता।
सिंहासनासीन-सिंहासनपर बैठना,
राजा बनना।
क्वब्ध-क्रोधित, नाराज।
कुचक्र-षडयन्त्र, जालसाजी, साजिश।
कुटिलता-कपट नीति, दुष्टता।
मन्द-मूर्ख, दुष्ट।
सुचाली-अच्छे शील-स्वभाववाला,
अच्छे चाल चलनवाला, भला।
अुर-हृदय।
कुचाली-खराब चाल-चलनवाला।
कँकेअि-सुअन-कँकेअीका पुत्र।
कुटिल मति-जिसकी बुद्धि, सोच-
विचारका तरीका कपटसे भरा
हुआ है।

राम-विमुख-रामका विरोधी, रामको
छोड़ देनेवाला ।

गत लाज-व्रेशर्म, निर्लज्ज ।

मोहबस-भ्रमके कारण ।

अधम-नीच ।

बात न खपना-बात ठीक न हो,
लागू न होती हो ।

सौत-अपने पतिकी दूसरी स्त्री ।
कांड-घटना ।

हठि देअिहअु-हठकरके दोगे ।

रसा-पृथ्वी, धरती ।

रसातल-पाताल ।

जाअिहि-जाअेगी ।

लोक-मर्यादा-सांसारिक नीति-नियम,
आदर्श ।

पृष्ठ—१३०

भरत भूमि रह राअुरि राखी-भरत !

यह पृथ्वी अिसलिअे टिकी है कि
तुम जैसा धर्मत्मा, कर्तव्य-परायण
व्यक्ति अुसकी रक्षा करता है,
मर्यादा और कर्तव्यका ध्यान रख-
कर आचरण करता है ।

वाष्प गदगद कंठ-भावनाओंके अुद्वेकके
कारण बँधा हुआ गला ।

धर्म-संकट-कर्तव्यके कारण विवशता ।

धर्मल्लिंघन-धर्मको छोड़ना, कर्तव्यसे
अ्युत होना ।

प्रचंड प्रकृति-बहुत गुस्सेवाज ।

अगाध भक्ति-बहुत गहरी भक्ति ।

वीर-विहीन मही मैं जानी-मैं समझ
गया हूँ कि पृथ्वी वीरोंसे खाली
हो गयी है ।

तमककर-गुस्सेमें आकर ।

पृष्ठ—१३१

खरी-खरी सुनाना-कड़वी लेकिन
सच्ची बातें, निर्भीकतासे-बिना
किसी लिहाजके कह देना ।

भृगुवर-भृगुकुलमें श्रेष्ठ पशुराम ।

बिप्र बिचारी-ब्राह्मण समझकर ।

नृप-द्रोही-राजाओंके दुश्मन परशु-
रामने २१ बार व्षत्रियोंको
निर्वंश करनेकी कोशिश की थी ।

सुभट रन गाढ़े-लड़ाईमें डटकर
लड़नेवाले बहादुर ।

द्विज देवता घरहिके बाढ़े-ब्राह्मण
अेवं देवता घरमें ही बड़प्पन दिखाते
हैं, युद्धमें अुनकी कुछ नहीं चलती ।
(ब्राह्मणोंका तो युद्धसे लेन-देन
ही कुछ नहीं है, देवता भी राक्षसोंसे
कभी बार हारकर भागते फिरे हैं ।)

काम तमाम करना-जानसे मार
डालना ।

अुद्यत-तैयार, तत्पर ।

जिमि-जैसे ।

करनिकर—हाथियोंका झुंड ।
 मृगराजू—सिंह ।
 लवा—अेक प्रकारकी चिड़िया ।
 सानुज—छोटे भाजी महित, शत्रुघ्नके साथ ।
 निदरि—निर्दलनकार, हराकर ।
 निपातअुं—मारकर गिरा दूंगा ।
 खेता—युद्ध-क्षेत्रमें ।
 व्याधकी नाभीं—शिकारीकी तरह ।
 दोषारोपण—दोष लगाना ।
 अनुज वधू—छोटे भाजीकी पत्नी ।
 सुत-नारी—पुत्रवध, लड़केकी पत्नी ।
 सठ—(शठ) दुष्ट ।
 कुदृष्टि—खराब नजरसे, पाप-दृष्टिसे ।
 विलोकअि—देखता है ।
 बधे—मारनेसे ।
 अग्रज—बड़ा भाजी ।
 वध्य—मारने योग्य ।
 भवभति—(सन ७००-५०) संस्कृतके प्रसिद्ध महाकवि तथा यशस्वी नाटककार ।
 खटका—डर, आशंका ।
 हेतुवाद—अच्छे बुद्देश्यकी आड़में किसी गलतीको ठीक साबित करना ।
 लीपापोती करना—गलतीको, छिपाने-

की कोशिश करना, गलत तर्क देकर दोष छिपाना ।
 गर्हित—अयोग्य, पाप-पूर्ण, धिक्कारने योग्य ।
 अनौचित्य—अुचित न होना ।
 मनुष्यकी कोटिमें—मनुष्यके समकक्ष, पंक्तिमें ।
 विरहातुरता—पत्नी-वियोगके कारण अुत्पन्न व्याकुलता ।
 जनत्यू—यदि मैं जानता ।
 बन्धु बिछोह—भाजीका वियोग, भाजीसे बिछुड़ना ।
 मनत्यू—मानता ।
 धर्माधर्म—क्या धर्म है और क्या अधर्म है, कौनसा काम अच्छा है, अुचित है, नीति-सम्मत है और कौनसा अनौचित्यपूर्ण है, गलत है, पाप है ।
 दोष मढ़ना—दोष या गलतीके लिये जिम्मेदार ठहराना ।
 अन्यत्र—दूसरी जगह ।
 भेक्त वत्सलता—भक्तके प्रति वात्सल्य-भाव, स्नेहभाव, भक्तके संकटको टालनेका आग्रह ।
 समाधान होना—संतोष होना ।
 अन्यतम—श्रेष्ठतम, सबसे अच्छा ।

पूर्व-भौतिकताके अपर अध्यात्मको
अव आत्मज्ञानको महत्व देनेवाले
प्राचीन संस्कृतियों युक्त अशियायी
देश ।

पश्चिम-भौतिक सुख-वैभवके पीछे
पागल, असीको सब कुछ मानने-
वाले यूरोपीय देश ।

देश और कालको अतिक्रमण करने-
वाली अनुकी प्रतिभा-तुलसी-
दासजीकी रचनाओं अनेको प्रान्तों
तथा देशोंमें प्रसिद्ध हो रही हैं
और चार सौ साल पहले लिखी
जानेपर भी आजकल वे बड़े चावसे
पढ़ी जाती हैं ।

न लसे-शोभित नहीं हुआ ।

लसी-शोभित हुआ ।

१२. मनुष्य ही साहित्यका

लक्ष्य है

पृष्ठ--१३९

वाग्जाल-लम्बी-चौड़ी चक्करदार
बातें, साहित्य ।

दुर्गति-पतन, अपमान ।

परमुखापेक्षिता-लाचारीसे दूसरोंके
मुंहकी ओर ताकना, दूसरोंपर
निर्भर रहना ।

तेजोहीप्त-प्रकाशमान, ज्ञानयुक्त ।

परदुःखकातर-दूसरोंके दुखसे पसी-
जनेवाला, पीड़ितोंके कष्ट देखकर
दुःखित होनेवाला ।

जाति-धर्म-निर्विशेष मनुष्यके हितकी
बात सोचना-जाति तथा धर्मसे
परे जाकर मनुष्यके नाते मनुष्यके
हितकी, भलेकी बात सोचना ।

अंगित-अशारा ।

दलगत स्वार्थका प्रेत-सिर्फ अपने
गुटके या अपने स्वार्थसे बंधे हुआ
व्यक्तियोंके स्वार्थकी ही परवाह
करना ।

दबोचना-दबा लेना, छातीपर बंठना,
हावी हो जाना ।

असदुद्देश्य-बुरी मंशा, गलत भावना ।

सन्धान करना-खोजना, ढूँढ़ना ।

पृष्ठ--१४०

अनुचरवाहिनी-बात मानकर पीछे
चलनेवालोंका समूह । (वाहिनी-
सेना)

अतिहास विधाता-अतिहास रूपी
चालक या बह्य । स्वयं अतिहास ।

निष्ठुर-जो किसीकी मुरव्वत या
परवाह न करता हो ।

अनुमूलन-जड़से नष्ट करना, बिलकुल
मिट्टा देना ।

अतिहास विधाताका...करता रहता है—अतिहास यह बतलाता है कि स्वाधियोके हथकंडे पस्त हुअे हैं और अन्तमें जन-हितकी विजय हुअी है।

अतिहास शक्तिशाली व्यक्तियों... बढ़ रहा है—शक्तिशाली व्यक्तियों-ने कुछ समयके लिअे भले ही अपना स्वार्थ दुनियापर, समाज-पर लाद दिया हो, पर अन्तमें वे भी मरे ही। अुसी तरह बड़े-बड़े साम्राज्यवादी देश भी मिट्टीमे मिल गअे। लेकिन अतिहासकी-विकासकी ओर गतिमान मनुष्यके सतत संघर्षकी कहानी चली जा रही है।

दृष्टा—दूरकी बातोंको समझ सकने-वाले; घटनाअें कैसी होनी चाहिअे, अुनके होनेका क्या नियम है, और भविष्यमें वे कैसी होंगी—अिसका ज्ञान रखनेवाले।

मदमत्त व्यक्तियोंकी अूँची गद्दी—वे लोग जो अपनी शक्ति तथा कुटिलताके कारण शासक बन बैठे हैं, और सत्ताके घमंडमें किसीकी कुछ नहीं समझते।

कल्पना विलासी—प्रत्यक्ष जीवनसे

कोअी सम्बन्ध न रखकर सिर्फ कल्पनाअोंमें अुड़नेवाला, अूँची-अूँची रंगीन मुनहरी कल्पनाअोंमे खो जानेवाला।

सचेतन—जागृत, समझदार, ज्ञानवान। जीवनमे अुतार सकना—प्रत्यक्ष व्यवहारमें लाना।

माध्यम—जरिया, माधन।

पृष्ठ—१४१

समस्या हल होना—अुलझन दूर हो जाना, मंकटकी स्थितिमेंसे रास्ता निकल आना।

वह भारतवर्षके...भाषा है—दिल्ली, अुत्तर-प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, मध्यभारत, बिहार आदिकी मातृ-भाषा है।

ज्ञानपिपासा शान्त करना—ज्ञानकी भूख मिटाना।

ज्ञान-विज्ञानका वाहन बनाना—(हिन्दी भाषाको) अितनी सक्षम तथा अुपयुक्त बनाना है कि अुससे सब तरहके विज्ञान, दर्शन तथा अन्य विषयोंकी जानकारी लोगोंको दी जा सके। अुस भाषामें समस्त विषयोंका साहित्य आअे और अिस ढंगसे आअे कि लोग अुसे समझ सकें।

लाक्षणिक प्रयोग—साहित्यमें तथा काव्यमें शब्दोंके ऐसे प्रयोग होते हैं जिनका वस्तुतः कोषमें दिया गया अर्थ उस जगहपर उचित नहीं लगता, उस अर्थमें वह शब्द वहाँ आया ही नहीं है, वह तो मूल अर्थको छोड़कर दूसरा अर्थ प्रकाशित करता है। जैसे—लड़का शेर है। यहाँ शेरका अर्थ मारकर खा जानेवाला भयंकर जंगली प्राणी नहीं; बल्कि बहादुर लड़का है।

विचारोंके आदान-प्रदानका माध्यम—जिस भाषामें जनता तथा विद्वान अपने मनकी बात कहते हैं, गम्भीर विचार प्रकट करते हैं।

साहित्य-सृष्टि—साहित्यिक रचनाओंका निर्माण।

आत्मबल—अपनेपर विश्वास होना, अपनी कमजोरियोंपर नियन्त्रण रखनेमें समर्थ होना।

अवश्यनिधि—ऐसा फंड या कोष जो कभी खतम नहीं होता।

विषम—कठिन, समस्याओंसे भरी हुआ।
अलुप्तनभरा।

काल्पनिक प्रेत... नहीं है—समस्या क्या है, वह किस ढंगकी है, यह समझे

बिना उसका हल ढूँढ़ निकालना ठीक नहीं है, उससे कुछ फायदा नहीं होगा।

पृष्ठ—१४२

देशके जन-समुदायका अध्ययन—जनताकी तकलीफोंको समझना, उन तकलीफोंके मूल कारणोंको पकड़ पानेकी लगनपूर्वक कोशिश करना और उनका हल ढूँढ़ निकालना।

साहित्यिक परम्परा... है—हमारे वेद, उपनिषद, महाभारत तथा रामायणादि (साहित्य) हजारों वर्षों पहलेके हैं। हमारे ऋषियों तथा कवियोंने लगातार दर्शनोंकी और अँचे-से-अँचे व अच्छे-से-अच्छे साहित्यकी रचना की है।

दीर्घ—(यहाँ) हजारों वर्षों पहलेकी।

धारावाहिक—जिसमें सातत्य हो, कोअी खण्ड न पड़ा हो।

प्राचीन चिन्तन राशि—हमारे ऋषियों द्वारा तथा दार्शनिकों द्वारा सतत तपश्चर्या-साधनासे प्राप्त गम्भीर ज्ञान।

पृष्ठ—१४३

ज्ञान अर्जन करना—ज्ञान प्राप्त करना।

अपप्रहार—नीचतापूर्ण आक्रमण, झूठी
बदनामी।

हीन भावना—अपने मनमें अपनी कम-
जोरीका सतत विचार बना रहना;
अपनेमें ऐसी कमजोरी है जिसको
हम खत्म नहीं कर सकते, इस
भावनाका दृढ़ हो जाना; अपनेको
हेठा, छोटा, कम समझनेकी वृत्ति।

देशी दृष्टिसे—भारतीय दृष्टिकोणसे।

जिज्ञासा—किसी बातका रहस्य ढूँढ़
निकालनेकी या कोअी बात समझ
लेनेकी तीव्र अिच्छा।

ठेलकर—अिच्छा न होते हुअे और
मनकी तैयारी न होनेपर भी
जबरदस्ती धकेलकर।

पृष्ठ—१४४

अपराजेय—जो किसीसे हराया न जा
सके।

अँगुली पकड़कर यात्रा तय करना—
सहारेमे आगे बढ़ना, विकासके लिअे
किसीकी मददपर निर्भर रहना।

प्लेटफार्मोंसे—वक्ताओं द्वारा।

सामंजस्य—दो या अधिक विरोधी
तत्वोंका समन्वय।

छोटाअी—छोटापन, छोटी-छोटी चीजें
या बातें। संकीर्णता।

बड़ाअी—बड़प्पन, गौरवकी बात,
महान बात।

आकाश-पातालका अन्तर—बहुत
अधिक अन्तर।

पृष्ठ—१४५

ढह—मिट्टीका बदरूप ढेर, टीला।

निरन्त—जिसके पास पर्याप्त अनाज
नही है, जो भूखी है।

निर्वसन—जिमके शरीरपर कपडे नहीं
है या है तो बहुत कम।

ग्लानि—थकावट या अुदासीनताके
कारण कार्यके प्रति अरुचि या
आलस्यका भाव।

चांडाल—अस्पृश्योंमें भी अेक बहुत
दलित जाति।

अन्देशा—खटका, आशंका, भय।

भावावेशोंका शिकार हो जाना—
भावनाओंके प्रवाहमें बह जाना,
भड़की हुअी भावनाओंकी झोंकमें
गलत काम कर बैठना।

संघात—प्रचंड आघात, जोरदार चोट।

निःशेष भावसे—पूर्ण रूपेण।

मार्थक होना—कृतकृत्य होना, सफल
होना, अपना कर्तव्य पूरा करनेकी
भावनासे युक्त होना।

पृष्ठ—१४६

टूटेको तोड़ना है—जो नष्ट हो गया है
या नष्टप्रायः है, जिससे समाजका
नुकसान होता है उसे खतम
करना, अमुका मोह छोड़ देना ।

हैरान होना—कुछ न समझ सकनेके
कारण या रास्ता न सूझनेके
कारण या बारबार कहनेपर भी
जब भी बातको न माना जाये

तब परेशान हो जाना, तंग आ
जाना, क्या करना चाहिये और
क्या न करना चाहिये इस पशो-
पेशमें पड़ जाना ।

कै बार—कितनी बार, फिर-फिरसे ।
जु—जो ।

भेद—द्वैत । श्रीश्वरसे अपनेको अलग
मानकर चलना, अुसकी आरा-
धना नहीं करना, (यहाँ) भेद-
भाव, अलगाव, पक्षपात ।

राष्ट्रगीत

जनगणमन-अधिनायक जय हे,
भारत-भाग्य-विधाता !

पंजाब, सिन्धु, गुजरात, मराठा,
द्राविड़, अत्कल, बंग,
विन्ध्य, हिमाचल, यमुना, गंगा,
अच्छल जलधि-तरंग ।

तव शुभ नामे जागे,
तव शुभ आशिष मागे,
गाहे तव जय गाथा ।

जनगण मंगलदायक जय हे,
भारत-भाग्य-विधाता !

जय हे ! जय हे ! जय हे !
जय जय जय, जय हे !

